हिन्दी चेतना

हिन्दी प्रचारिणी सभा: (कैनेडा) की अन्तर्राष्ट्रीय त्रैमासिक पत्रिका
Hindi Chetna: International quarterly magazine of Hindi Pracharini Sabha, Canada

वर्ष १४, अंक ५५, जुलाई 2012 • Year 14, Issue 55, July 2012

इस अंक में

●सम्पादकीय 03
●उद्‌गार 04

साक्षात्कार

●तेजेन्द्र शर्मा 9

कहानियाँ

●घड़ा :
विवेक मिश्र 14
●काला समय :
बलराम अग्रवाल 16
●वह एक दिन :
उमेश अग्निहोत्री 19
●कोमा :
डॉ. श्याम सखा 'श्याम' 22

आलेख

●व्यंग्य
गिरीश पंकज 25
●शब्दों की दास्तान
डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री 33
●संस्मरण
शशि पाधा 37

लघुकथाएँ

●श्रद्धांजलि
डॉ. सतीश दुबे 31
●झूले का दाम
भावना सक्सेना 31
●पेट पर लात
विक्रम सोनी 32

ग़ज़लें

●हस्तीमल 'हस्ती' 48
●पवन कुमार 48
●विकास शर्मा 'राज' 48

कविताएँ

●कहा मैंने शहर से : इला कुमार 49
●जाने कैसे : डॉ. जेन्नी शबनम 49
●आज फिर : संजीव सलिल 49

हिन्दी चेतना

(हिन्दी प्रचारिणी सभा कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका)
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna
ID No. 84016 0410 RR0001
वर्ष : १४, अंक : ५५
जुलाई-सितम्बर २०१२
मूल्य : ५ डॉलर ($5)

●'लक्ष्मी' चंद : मधुप पांडेय 50
●ओम पैसाय नम: किरन सिंह 50
●तीन कविताएँ : महफ़ूज़ अली 50
●हाइकु : डॉ. सुधा गुप्ता 51
●हाइकु : सुशीला शिवराण 51
●हाइकु : प्रगीत कुँवर 51
●गीत : विष्णु सक्सेना 53
●नज़्में : हरकीरत 'हीर' 53
●गीत : कविता व्यास 53

स्तंभ

●दृष्टिकोण:
मनोज श्रीवास्तव 27
कादंबरी मेहरा 42
●अविस्मरणीय :
सूर्यकांत त्रिपाठी निराला 35

●विश्वविद्यालय के प्रांगण से:
टिमोथी ब्रायंट 38
●विश्व के आँचल से
डॉ. अनीता कपूर 39
●डायरी के पृष्ठ:
आस्था नवल 44
●पुस्तक समीक्षा :
विजया सती 46
रमाकांत श्रीवास्तव 47
●पुस्तकें जो हमें मिलीं 54
●भीतर के पट खोल :
डॉ. मृदुल कीर्ति 56
●साहित्यिक समाचार 57
●भाषान्तर :
अनिल जनविजय 60
●अधेड़ उम्र में थामी क़लम:
मालती सत्संगी 61
●नव अंकुर:
मिश्रीलाल 61
●विलोम चित्र काव्यशाला 62
●चित्र काव्यशाला 63

आख़िरी पन्ना

●सुधा ओम ढींगरा 64

'हिन्दी चेतना' सभी लेखकों का स्वागत करती है कि आप अपनी रचनाएँ प्रकाशन हेतु हमें भेजें। सम्पादकीय मण्डल की इच्छा है कि 'हिन्दी चेतना' साहित्य की एक पूर्ण रूप से संतुलित पत्रिका हो, अर्थात साहित्य के सभी पक्षों का संतुलन। एक साहित्यिक पत्रिका में आलेख, कविता और कहानियों का उचित संतुलन होना आवश्यक है, ताकि हर वर्ग के पाठक वर्ग पढ़ने का आनंद प्राप्त कर सकें। इसीलिये हम सभी लेखकों को आमंत्रित करते हैं कि हमें अपनी मौलिक रचनाएँ ही भेजें। अगले अंक के लिए अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र भेज दें। अगर संभव हो तो अपना चित्र भी साथ अवश्य भेजें।

रचनाएँ भेजते हुए निम्नलिखित नियमों का ध्यान रखें :

1. *हिन्दी चेतना जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होगी।*
2. *प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।*
3. *पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर लिखित रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी।*
4. *रचना के स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा।*
5. *प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जायेगा।*
6. *पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक मंडल तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।*

संरक्षक एवं प्रमुख सम्पादक
श्याम त्रिपाठी , कैनेडा

सम्पादक
सुधा ओम ढींगरा, अमेरिका

सह-सम्पादक
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', भारत
पंकज सुबीर, भारत
अभिनव शुक्ल, अमेरिका

परामर्श मंडल
पदमश्री विजय चोपड़ा, भारत
(मुख्य संपादक, पंजाब केसरी पत्र समूह)
कमल किशोर गोयनका, भारत
पूर्णिमा वर्मन, शारजाह
(संपादक, अभिव्यक्ति- अनुभूति)
अफ़रोज़ ताज, अमेरिका
(प्रोफ़ेसर-यूनिवर्सिटी ऑफ़ नॉर्थ कैरोलाईना, चैपल हिल)
निर्मला आदेश, कैनेडा
विजय माथुर, कैनेडा

सहयोगी
सरोज सोनी, कैनेडा
राज महेश्वरी, कैनेडा
श्रीनाथ द्विवेदी, कैनेडा

विदेश प्रतिनिधि
डॉ. एम. फ़िरोज़ ख़ान
भारत
चाँद शुक्ला 'हदियाबादी'
डेनमार्क
दीपक 'मशाल', यूके
अमित सिंह, भारत
अनुपमा सिंह, मस्कट

शुभ्र कलिकाओं को अनछुई ओस का आईना चाहिए,
फूल को और क्या चाहिए, धूप, पानी, हवा, चाहिए ।
भावनाओं को रंगती रहें, प्यार की चुलबुली खुशबुएं,
अपनी गाथा से महकी हुई, सुरमयी चेतना चाहिए ।
-अभिनव शुक्ल

HINDI CHETNA
6 Larksmere Court, Markham, Ontario, L3R 3R1
Phone : (905) 475-7165, Fax : (905) 475-8667
e-mail : hindichetna@yahoo.ca
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna
ID No. 84016 0410 RR0001

Hindi Chetna is a literary magazine published quarterly in Toronto, Ontario under the editorship of Mr. ShiamTripathi. Hindi Chetna aims to promote the Hindi language, Indian culture and the rich heritage of India to our children growing in the Canadian society. It focuses on Hindi Literature and encourages creative writers, young and old, in North America to write for the magazine. It serves to keep readers in touch with new trends in modern writing. Hindi Chetna has provided a forum for Hindi writers, poets, and readers to maintain communication with each other through the magazine. It has brought many local and international writers together to foster the spirit of friendship and harmony.

: आवरण :
अरविंद नराले, कैनेडा arvind.narale@sympatico.ca
: डिज़ायनिंग :
सनी गोस्वामी, पी सी लैब, सीहोर sameergoswami80@gmail.com
Printed By: www.print5express.com

सम्पादकीय

'हिन्दी चेतना' के उज्ज्वल भविष्य की कामना करने वालों की संख्या दिन- प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, इसका अनुमान लोगों के अनगिनत स्नेहिल पत्रों से लगाया जा सकता है; जिनमें से कुछ पत्र 'हिन्दी चेतना' के हर अंक में प्रकाशित किये जाते हैं । हमारा निरन्तर यह प्रयास रहा है कि हम कैसे इसे अधिक रुचिकर और लोकप्रिय बनाए और रचनाओं के स्तर से समझौता भी न करें । वर्षों से यही संघर्ष चल रहा है । चुनौतियों का सामना करते हुए, उतार चढ़ाव के कई पड़ाव पार कर, विपरीत परिस्थियों और विदेश की धरती पर हम हिन्दी की चेतना का रथ खींच रहे हैं । सन् २००७ में अक्षरम् द्वारा हमें विदेशों में हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए सम्मानित किया गया था । वास्तव में यह सम्मान 'हिन्दी चेतना' का था । आज 'हिन्दी चेतना' को श्रेष्ठ संपादन हेतु मध्य प्रदेश का 'अम्बिका प्रसाद दिव्य रजत अलंकरण' से सम्मानित किये जाने की घोषणा हुई है । ऑन लाइन पढ़ने वालों की संख्या में भी वृद्धि हुई है । एक बात गर्व से कहना चाहता हूँ कि प्रवासी भारतीय भारत से सुदूर बैठे केवल डालर ही नहीं गिन रहे हैं; वे भाषा एवं संस्कृति के विषय में भी चिंतित हैं तभी तो 'हिन्दी चेतना ' जैसी पत्रिका प्रकाशित करने के लिए संकल्पित हैं । साहित्य को प्रोत्साहित करना अपना धर्म समझते हैं । इस कार्य को हम बहुत गम्भीरता से लेते हैं और शुद्ध मन, नि:स्वार्थ भाव से हिन्दी का प्रसार करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं । हमारा उद्देश्य किसी की भावनाओं को चोट पहुँचाना या गुटबंदी नहीं है बल्कि सभी सृजनकारों को 'हिन्दी चेतना' का मंच प्रदान करना है । वैसे भी विदेशों के रचनाकार अभी तक भारत की साहित्यिक राजनीति से दूर हैं ।

यहाँ मैं आपको एक हर्षमय सूचना भी देना चाहता हूँ कि वर्ष के अंत में परम्परानुसार इस बार का विशेष अंक 'लघु कथा' विशेषांक होगा । हमें पूर्ण विश्वास है कि विश्व के सुधी कथाकार इसमें भाग लेंगे । हमें आपकी रचनाओं का इंतज़ार रहेगा ।

गत कुछ महीनों से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में नई- नई गतिविधियाँ देखने को मिलीं, जिन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में क्रान्ति का बिगुल बज चुका है । दूसरी तरफ भारत के दो महान भाषा, साहित्य और संस्कृति के मनीषी, नोबेल पुरस्कार विजेता रविन्द्र नाथ टैगोर और महामना मदन मोहन मालवीय की १५० वीं, जन्मशती के अवसर पर किए गए स्मरणीय कार्य अत्यंत सराहनीय है । यदि हम सभी भारतीय एकजुट होकर मालवीय, गांधी और टैगोर के विचारों पर चलें और हिन्दी भाषा को एक नई दिशा दें तो हिन्दी विश्व मंच पर पहुंच सकती है ।

अंत में पाठकों से विनम्र निवेदन है आप अधिक से अधिक 'हिन्दी चेतना' की आजीवन सदस्यता ग्रहण करें । हम इतना बड़ा उत्तरदायित्व आपके के सहयोग के बिना नहीं संभाल पायेंगे । अगले अंक तक के लिए -

आपका

श्याम त्रिपाठी

हिन्दी चेतना को पढ़िये, पता है :
http://hindi-chetna.blogspot.com

हिन्दी चेतना की समीक्षा अवश्य देखें :
http://kathachakra.blogspot.com

हिन्दी चेतना को आप ऑनलाइन भी पढ़ सकते हैं :
Visit our Web Site :
http://www.vibhom.com/hindi chetna.html
पर जाकर

उद्‌गार

पत्रिका का नया अंक बहुत ही प्रभावशाली है। सामग्री उच्चकोटि की है, और संपादन सही मायने में कुशल है। हरनोट का साक्षात्कार बहुत ही बढ़िया है। आपके सवालों के बहुत ही बेबाक जवाब दिये हैं हरनोट ने। मधु अरोड़ा जी का लेख, तीन महिला लेखिकाओं की कहानियां, विजय शर्मा का शोध-परख लेख सभी उच्चकोटि के हैं। आपका संपादकीय आहिस्ता -आहिस्ता बहुत गहरा होता जा रहा है। पत्र भी उच्च श्रेणी के हैं। सैटिंग ख़ूबसूरत है। आपके यहां जो भी फ़ॉण्ट इस्तेमाल किया जा रहा है उसमें 'त्र' लेटर नहीं है। उसके स्थान पर 'त' के नीचे 'र' की मात्रा लगती है। आंखों को बहुत अखरता है।

पत्रिका के लिये बधाई...

-तेजेन्द्र शर्मा (यू.के)

(तेजेन्द्र जी इस अंक से आपको ये समस्या नहीं दिखाई देगी । संपादक)

●

हिन्दी चेतना का नया अंक आधे से भी ज्यादा, एक ही बैठक में पढ़ गई हूं। पत्रिका देख,पढ़ कर अभिभूत हूं। इतनी सारी सामग्री की विविधता और वह भी इतने उच्च स्तर की। एक ही वर्ष में मैं इसकी प्रगति देख पा रही हूं। कहानियां, कविताएं और लेख सभी उच्च-कोटि के हैं। हरनोट जी का साक्षात्कार इस अंक का शिरोमणि है। रचना श्रीवास्तव की क्षणिकाएं मन को छू गईं। सुदर्शन प्रियदर्शिनी जी की कहानी एक ताज़गी लिए हुए है कि मोह का तार किसी तर्क, यथार्थ को मानना नहीं चाहता।

आखिरी पन्ने में जो आपने बात कही है, उस की आज के साहित्यिक वातावरण में अति आवश्यकता है - यहां सभी के लिए स्थान है।

हिन्दी चेतना के लिए शुभकामनाएं और इसे पाठकों तक पहुंचाने के लिए आपको और त्रिपाठी जी को बधाई।

-अनिल प्रभा कुमार (अमेरिका)

●

इस बार का पूरा अंक मैंने पढ़ा । प्रवासी से सम्बंधित लेख और सुरेश अवस्थी की व्यंग्य रचना बहुत बढ़िया और कहानी बाँझ बहुत ही सुन्दर और मार्मिक लगी ।

बहुत परिश्रम करते हैं आप....

-विष्णु सक्सेना (भारत)

●

हिन्दी चेतना का अप्रैल -जून का अंक प्राप्त हुआ । जिसके लिए मैं आपका आभारी हूँ । इसमें लगभग सभी रचनाएँ स्तरीय हैं और बार-बार पढ़ने के लिए प्रेरित करती हैं । आपने अच्छी कहानियों के साथ-साथ श्रेष्ठ कविताओं का भी सुन्दर चयन किया है । आखिरी पन्ना के माध्यम से बहुत गहरी बात कह दी है, जिसे हर प्रबुद्ध पाठक भी सोचने के लिए मजबूर हो जाता है ।

अंत में श्री स र हरनोट जी से लिया गया साक्षात्कार भी काफी महत्वपूर्ण है । पढ़ कर अच्छा लगा । बधाई ।

अशोक आंद्रे (भारत)

●

'हिन्दी चेतना' के लिए धन्यवाद । अभी तो सभी सामग्री नहीं पढ़ी । मगर जितनी भी पढ़ी हैं उनमें मधु अरोड़ा का लेख 'इन्हें प्रवासी कैसे कहूँ' अच्छा लगा- शीर्षक भी और मटेरियल भी । 'प्रवासी हिन्दी साहित्य गले में हड्डी बन कर अटका है,' मैं उनके वक्तव्य से बिलकुल सहमत हूँ । साहित्य की खेमेबाजी ठीक नहीं, फिर प्रवासी हिन्दी साहित्य को भारत स्थित प्रकाशक और हिन्दी साहित्यकार सेकेण्ड ग्रेड का साहित्य मान रहें हैं, जबकि यह भी उतना ही सच है कि जब विदेशों से हिन्दी में सर्जन होने लगा, हिन्दी पत्रिकाओं आदि का बाहर से सम्पादन होने लगा तो हिन्दी विश्वस्तर पर आने लगी है । हिन्दी साहित्य में पूरे विश्व की छवि छाने लगी है । मधु अरोड़ा ने अमेरिका में बसें हिन्दी रचनाकारों पर अच्छा प्रकाश डाला है । विजय शर्मा का 'प्रवासी हिन्दी साहित्य में विदेशी जीवन' में उन्होंने विदेश में रहने वाले कई हिन्दी लेखकों को बटोर लिया है । ऐसे लेख प्रकाशित होने चाहिए, इससे लेखकों को भी अपनी रचनाओं के बारे में पता चलता है । अपनी रचनाओं में जब अन्यों का नज़रिया पढ़ने को मिलता है तो लेखनी में और निखार आता है ।

हरनोटजी के हिडिम्ब के बारे में पहले भी काफी पढ़ चुकी हैं, इसलिए कोई नई बात नहीं लगी ।

-अर्चना पैन्यूली (डेनमार्क)

●

अभी-अभी देखी है पत्रिका 'हिन्दी चेतना' । जिसका हर अंक, पत्रिका के सुव्यवस्थित सजावट, प्रकाशन व सुघड़ और सुंदर सामग्री चयन से , पाठकों को आकर्षित करने में सफल हुआ है जिसका श्रेय, सुधा जी को सबसे पहले और फिर समस्त सम्पादन मंडल को देना चाहती हूँ - हिन्दी चेतना के सुपाठ्य अंकों को, समस्त हिन्दी जगत के लिए प्रस्तुत कर, 'सत्यम, शिवम, सुन्दरम' को चरितार्थ किया है - अत: बधाइयाँ स्वीकारें-

आप तक एक महत्वपूर्ण साहित्यिक समाचार बेहद प्रसन्नता सहित, पहुंचा रही हूँ कि, ''पण्डित नरेंद्र शर्मा सम्पूर्ण रचनावली'' का प्रकाशन इसी वर्ष २०१२ को हो रहा है । जिस के १६ खंड हैं ।

गद्य, कविताएँ, गीत, निबंध, संस्मरण, आलेख, रेडियो - वार्ताएं, रचनाएं - फिल्मों के लिए लिखे अनगिनत गीत, पण्डित नरेद्र शर्मा की लिखीं हुईं १९ पुस्तकों का पुन : मुद्रण इत्यादी रचनावली में शामिल है । अभी इतना ही ...

- लावण्या शाह (अमेरिका)

●

'हिन्दी चेतना' आदि से अंत तक पढ़ डाली । एक-एक पन्ना । कहानी 'सफ़ेद चादर' बेहद मार्मिक है । प्रस्तुति व भाव दोनों कोणों से । अन्य सभी रचनाएं चयन की दृष्टि से उत्तम हैं । आपकी बात पर अपनी माँ की कई सीखें याद आईं । उन्हें बाँटकर खाने का मन करता है । कभी जरूर लिखूँगी । यहाँ पिछले दिनों श्रीमती पुष्पा भार्गव का अचानक निधन हो गया । अच्छी कविता करती थीं । ईश्वर उनके शब्द सदा अमर रखे । उन्हें हिन्दी जगत का अंतिम प्रणाम । उनकी कविताओं का संकलन 'लहरें' एक यादगार पुस्तक है । ईश्वर आपकी पत्रिका को दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति दे ।

-कादम्बरी मेहरा (यू. के)

(हिन्दी चेतना परिवार की ओर से श्रीमती पुष्पा भार्गव को विनम्र श्रद्धांजलि)

●

इस अंक ने एक विशाल पाठक वर्ग मुझे प्रदान किया है : प्रेम जनमेजय

यह पत्र मैं आपको बहुत दिनों से लिखने की सोच रहा था। पर एक संकोच था, नई दुल्हन-सा, जिसका मुखार्पण हो चुका है और वह केवल संकोच में सकुचा सकती है। सारा मोहल्ला उसके मुख पर उसकी तारीफ कर, आ- जा चुका है। और वह यह भी जानती है कि मोहल्ले की कुछ बड़ी- बूढ़ियों ने पीठ पीछे का छिद्रावेषण भी आरंभ कर दिया होगा। अपनी स्थिति और स्पष्ट कर कहूं तो मुझे शब्द भी नहीं मिल रहे थे। पर मुझे लगा कि यदि मैं अपने संकोच में विलम्ब करता रहा तो मैं नाशुक्रा तो कहलाउँगा ही साथ ही अहंकारी और बेहद नकचढ़ा भी।

'हिन्दी चेतना' ने मुझपर केंद्रित कर जो अंक प्रकाशित किया उसने न केवल मुझे औरों की दृष्टि में स्वयं को समझने का सुअवसर दिया, यह अहसास भी दिया कि मैं साहित्य- सागर की जो एक बूंद बनने का प्रयत्न कर रहा हूं उसकी दिशा और दृष्टि सार्थक और सही हैं। 'हिन्दी चेतना' ने मुझे एक अंतरराष्ट्रीय मंच दिया। आप पर अंक केंद्रित हो, उसका लोकार्पण भारत में नामवर सिंह, प्रभाकर श्रोत्रिय, बलराम, अर्चना वर्मा आदि द्वारा हो और कैनेडा में रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' द्वारा विदेशी धरती पर, अनेक हिंदी प्रेमियों के मध्य, हो तो 'मैं भी कुछ हूं/ बहुत कुछ हूं' का भाव जन्म न ले तो समझो व्यक्ति या तो स्नॉब है, संवेदना के धरातल पर बंजर है या फिर संत। मैं इनमें से कुछ नहीं हूं पर आपके द्वारा संपादित इस अंक ने 'साहित्य में मैं भी कुछ हूं' के भाव से भर दिया। एक संतोष दिया कि विश्व- भाषा हिंदी के विशाल परिवार में अनेक प्रतिष्ठित गुणीजन है जो मुझपर आत्मीय स्नेह और प्रेम रखते हैं।

'हिन्दी चेतना' द्वारा, विपरीत परिस्थितियों में हिंदी भाषा, साहित्य एवं मानवीय जीवन मूल्यों के लिए किए जा रहे श्रमपूर्ण कार्यों का मैं आरंभ से प्रशंसक रहा हूं। मेरी आस्थाएं बहुत कठिनाई से डिगती हैं। मैं बहुत दिनों तक इस शोध में जुटा रहा कि आपके वो कौन-से स्वार्थ हैं जो मुझसे सधते हैं -क्योंकि मैं न तो किसी पुरस्कार देने वाली समिति का सदस्य हूं, न ही किसी पुरस्कार का संस्थापक हूं और न ही कोई प्रकाशक हूं, जिससे प्रेरित होकर आप ऐसा खर्चीला एवं मेरे 'प्रिय मित्रों' की दृष्टि में आपको घटिया संपादक का मैडल प्रदान करने वाला कदम उठाना पड़े । सुधा जी तो प्रवासियों के बारे में मेरे द्वारा की गई टिप्पणियों से सहमत ही नहीं थोड़ी-सी रुष्ट भी हैं । फिर...। आपने मुझे इतना प्रसन्न नहीं किया होगा जितना मेरे कुछ आत्मकेंद्रित मित्रों को रुष्ट किया होगा । लगता है आपको बाज़ार की समझ नहीं है । पश्चिमी देश में रहते हैं और बाज़ार की समझ नहीं है । ले-दे के समीकरण को ज़रा समझें और...। खैर मेरी तो कामना यह है कि आप अपना यह 'गंवई' चरित्र बनाए रखें, अपना मिशन जारी रखें। आपके माध्यम से मैं उन सभी लेखकों का आभार प्रकट करना चाहता हूं जिन्होंने मेरे रचना कर्म, मेरे व्यक्तित्व पर अपने इतने अमूल्य एवं सद्भावनापूर्ण विचार प्रकट किए कि मेरे कुछ अभिन्न मित्र मेरे शत्रु हो गए। आपने बहुत श्रम से अंक का संपादन किया है और उतने ही श्रम से रचनाकारों ने अपना रचना- धर्म निभाया है। इस अंक ने एक विशाल पाठक वर्ग मुझे प्रदान किया है। आपके एवं रचनाकारों के प्रति व्यक्त आभार जैसा शब्द चाहे कितना ही भारयुक्त हो परंतु आप तक पहुंचते- पहुचंते निश्चित ही भारविहीन हो जाएगा। इसलिए तुम जियो हज़ारों साल और साल के दिन हो पच्चास हज़ार की शैली में आभार शब्द स्वीकार करें।

'हिन्दी चेतना' का अप्रैल-जून अंक अंतर्जाल पर प्राप्त हुआ। कहानियाँ,लेख और कविताओं का ये संकलन सराहनीय है।आपने मेरी कविता एवं प्रतिक्रिया को भी पत्रिका में स्थान दिया-तदर्थ आभारी हूँ। संतुलित सम्यक् संपादन के लिये हार्दिक बधाई!! अनेकों प्रशंसापूर्ण प्रतिक्रियाओं से पाठक को सहज ही ये आभास हो जाता है कि पत्रिका के पाठक प्रकाशित सामग्री से कितने प्रभावित हैं?

पत्रिका के और भी अधिक उन्नयन के लिये शुभकामनाओं सहित-

-शकुन्तला बहादुर (अमेरिका)

●

आपका भेजा 'हिन्दी चेतना' का अप्रैल अंक मिला। इन्टरनेट पर उपलब्ध अन्य पत्रिकाओं की तुलना में ज्यादा लुभावनी लगती है मुझे मेरी 'हिन्दी चेतना'। मेरी कविता को स्थान देने के लिए दिल की गहराइयों से धन्यवाद। हरनोट जी का साक्षात्कार अति प्रेरणादायक लगा, 'आखिरी पन्ना' में आपके द्वारा लिखी आपकी माँ की सीख का अनुसरण आपने सिर्फ कथनी की तौर पर नहीं करनी के तौर पर भी किया है।

-संध्या द्विवेदी (भारत)

●

पत्रिका बहुत सुन्दर बन पड़ी है, अवश्य ही यह आप के निरन्तर एवं निस्वार्थ प्रयत्न का फल है, जिसके लिए आप को सहर्ष बधाई देती हूँ । दिल की गहराइयों से दुआ करती हूँ कि 'हिन्दी- चेतना' खूब फले -फूले ।

-शाहिदा बेगम 'शाहीन' (भारत)

●

हिन्दी भाषा के प्रसार के लिए 'हिन्दी चेतना' का योगदान सराहनीय है । नव अंकुर में प्रकाशित दोनों कविताएँ दिल को छू लेने वाली हैं । विशेष रूप से संध्या द्विवेदी द्वारा लिखित कविता 'एक - एक रोटी दान करो' ने काफ़ी प्रभावित किया है । रचनाकार ने बहुत सरल शब्दों में गहरी बात कही है । काश ! लोग इस बात को समझ पाते तो आज कोई बच्चा भूखा न सोता ।

-अनुराग मिश्रा (भारत)

●

'सफ़ेद चादर' बहुत खूबसूरत दिल को छू लेने वाली कहानी है। लेखिका ने जिस संवेदनशीलता से भावों को व्यक्त किया है उससे कहानी वास्तविकता का आभास देती है, और ऐसा लगता है जैसे यह आपकी अपनी ही कहानी है और घटनाएँ आपकी आँखों के सामने ही घटित हो रही हैं - बहुत अच्छे अनिलजी !!

-कालड़ा (अमेरिका)

●

पत्रिका का कवर पेज बेहद आकर्षक है । नव अंकुर में प्रकाशित संध्या द्विवेदी की कविता 'एक

व्यंग्य एक विधा है और इसे अलग स्वीकार करना ही चाहिये

प्रेम जनमेजय पर केन्द्रित अंक पढ़ा । कॉफी टेबल पर सजाने वाला अंक, अतुलनीय-संग्रहणीय । अपनी प्रतिक्रिया दे चुकी हूँ, जो जनवरी 2010 में छप चुकी है । अब सामग्री की बात करती हूँ । पहली बार तो मैटर दिमाग़ के ऊपर से निकल गया । प्रेम जी का नाम सुना था पर उन्हें पढ़ने का अधिक अवसर नहीं मिला था । ३० वर्ष पहले भारत छोड़ दिया था । यहाँ विद्यार्थी बन कर आई थी । बस धीरे -धीरे हिन्दी से नाता छूटता गया । कुछ वर्ष पहले अंतरजाल पर हिन्दी की साइट्स देखनी शुरू की और हिन्दी से फिर से जुड़ गई । हिन्दी चेतना से परिचय होने के बाद तो बस काफ़ी कुछ पढ़ डाला । अब हिन्दी चेतना ने प्रेम जी पर विशेष अंक निकाला है पढ़ना तो पढ़ेगा । कुछ तो इस इंसान में होगा, मेरी अज्ञानता है कि मैं इन्हें नहीं जानती, यही सोच कर दूसरी बार पढ़ा । थोड़ा बहुत समझ में आया । एक बार फिर पढ़ा और व्यंग्य भी अंतरजाल पर ढूंढे । बहुत कम संख्या में हिन्दी व्यंग्य अंतरजाल पर मिले । व्यंग्यकारों से निवेदन है कि कोई ऐसी साइट बनाएँ; जहाँ अच्छे व्यंग्य उपलब्ध हों, प्रेम जी के साथ -साथ और लोगों के भी । सम्पादक महोदया एक आम पाठक के लिए विशेषांक में जो बातें अनिवार्य है उनको आपके ध्यानार्थ लाना ज़रूरी समझती हूँ । पहले पृष्ठों में प्रेम जी के बारे में कुछ ऐसा लिखा जाता जिससे मेरे जैसे कई अज्ञानी पाठकों को उनके बारे में पता चलता । फिर लेख- इंटरव्यू और अंत में उनके कुछ व्यंग्य । यह अंक बुद्धिजीवियों के लिए है जिन्हें व्यंग्य का ज्ञान है और प्रेम जी के बारे में बहुत कुछ पता है । ख़ैर अब तो मैं भी कह सकती हूँ कि व्यंग्य एक विधा है और इसे अलग स्वीकार करना ही चाहिये । हर कोई व्यंग्य नहीं लिख सकता । लगता है व्यंग्यकार दुनिया को जिस नज़र से देखता है, आम आदमी नहीं देख पाता तथा कवि और लेखक का नज़रिया भी व्यंग्यकार से भिन्न होता है । अंत में यह कहना चाहती हूँ कि मैं सम्पादक नहीं हूँ और सम्पादक की ज़िम्मेदारियाँ, प्रतिबद्धताएँ नहीं जानती ; शायद स्वार्थी हो कर यह पत्र लिख रही हूँ सिर्फ अपना सोच रही हूँ, आपने सोच समझ कर प्रेम जनमेजय पर केन्द्रित अंक सम्पादित किया है । सम्पादक को तो सब पाठकों का सोचना पड़ता है ।

-सरिता पाठक (वाशिंगटन, डीसी)

-एक रोटी दान करो' दिल को छू गई । जहाँ लोग अपने में ही गुम हैं, वहीं ये कविता हमें समाज के प्रति संवेदनशील होने की याद दिलाती है...संध्या इतनी मार्मिक कविता लिखने के लिए बधाई की पात्र है ....।

-मनीषा (भारत)

●

'हिन्दी चेतना' का अब नियमित पाठक हूँ । लेकिन मजबूरी यह है कि अंतिम पेज को पहले पढ़ता हूँ । क्या करूँ, वहाँ गागर में सागर मिलता है । फिर तो पूरी पत्रिका देख लेता हूँ । सम्पादकीय से लेकर रचनाओं की व्यापक दुनिया चेतना से भर देती है । बधाई, कि आप सब मन से, आत्मा के साथ हिन्दी की चेतना को वैश्विक बना रहे है । मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ आप के साथ हैं ।

-गिरीश पंकज (भारत)

●

'हिन्दी चेतना' का अप्रैल २०१२ का अंक पढ़ा, बहुत अच्छा लगा । प्रथम पृष्ठ में नीले रंग में मोर का पंख अतुलनीय है । संध्या जी की कविता 'एक-एक रोटी' बहुत मार्मिक है । स्वत: में एक संपूर्ण कथा को समेटे हुए दिल की गहराइयों को छू गयी एवं पढ़ने पर चलचित्र की तरह सारा चित्र सजीव हो उठा और कुछ हद तक विश्व की आधी आबादी का वर्णन करती है ।

-डॉ. ए. के. द्विवेदी, वाराणसी (भारत)

●

श्री प्रेम जनमेजय के सौजन्य से मुझे व्यंग्य यात्रा की उस प्रति के साथ जिसमें मेरा एक व्यंग्य छपा है 'हिन्दी चेतना' का प्रेम जन्मेजय विशेषांक भी प्राप्त हुआ । पत्रिका देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि कैनेडा जैसे देश में न केवल हिंदी प्रचारिणी सभा है , बल्कि 'हिन्दी चेतना' जैसी उत्कृष्ट पत्रिका भी आपके सम्पादन में प्रकाशित हो रही है । मेरी बधाई स्वीकार कीजिये ।

-डॉ. एम एल खरे म.प्र. (भारत)

●

'हिन्दी चेतना' का नया अंक पढ़ा । काम्बोज जी का लिखा माहिया और अन्य सामग्री पढ़ी, सभी बहुत रोचक और स्मरणीय । हिंदी चेतना टीम को बधाई ।

-डॉ. जेन्नी शबनम

●

'हिन्दी चेतना' का नया अंक मिला, धन्यवाद । सबसे पहले आपको तथा श्री त्रिपाठी जी को अम्बिका प्रसाद दिव्य पुरस्कारों से सम्मानित किये जाने के लिए हार्दिक बधाई ।

'हिन्दी चेतना' के इस अंक में मुख्यतया: जिन दो आलेखों ने ध्यान आकर्षित किया वे हैं मधु अरोड़ा तथा विजय जी द्वारा ''आप्रवासी साहित्य'' के विषय में उनके विचार और विदेश में लिखे जा रहे साहित्य पर विश्लेषण । दोनों ने यही कहा है कि सात समुन्द्र पार लिखे जाने से क्या कोई रचना अप्रवासी साहित्य की श्रेणी में ही आ सकती है जबकि उसकी भाषा हिन्दी ही हो । अच्छा लगा कि हिन्दी में लिखा साहित्य हिन्दी भाषा का साहित्य ही माना जाना चाहिए न कि किसी देश - विदेश के नाम से । सुदर्शन जी और अनिल प्रभा जी की कहानियों ने भी बहुत प्रभावित किया । आपके द्वारा हरनोट जी से बातचीत के अंतर्गत उनके व्यक्तित्व तथा लेखन की जानकारी मिली । ''आख़िरी पन्ना'' में आपने जो आकाश जैसे विशाल हृदयी होने की बात और साहित्य में ''हित'' का गुण होने की बात कही वो बहुत-बहुत भायी । इस अनुपम अंक के लिए बहुत बधाई और भविष्य के लिए शुभ कामनाएं ।

-शशि पाधा (अमेरिका)

●

'हिन्दी चेतना' मिली, निखरे हुए रूप में । हम उसकी प्रिंटिंग, पेपर, मैटर देख रहे थे और साथ ही सोच रहे थे कि आप ने क्रान्तिकारी बदलाव किया है । बहुत -बहुत बधाई, आपको ।

-शकुन त्रिवेदी (कलकत्ता, भारत)

●

'हिन्दी चेतना' का यह जून अंक पढ़ा, रचनाओं

ने ऐसे मोहक बंधन में बाँधा कि खाना – पीना सब भूल गयी । बहुत उत्तम कोटि की पत्रिका है यह, एक ही बैठक में पूरा पढ़कर ही दम लिया । आप सचमुच बधाई के पात्र हैं ।

-कविता व्यास (भारत)

●

'हिन्दी चेतना' का जनवरी 2012 अंक मुझे बहुत अच्छा लगा । 'हिन्दी चेतना' की टीम बहुत ही उत्तम काम कर रही है । ये कोई आसान काम भी नहीं है , बहुत कुछ देखना पड़ता है किसी पत्रिका को निकालने के लिए । इस अंक में रामेश्वर जी का साक्षात्कार पढ़ा । सुधा जी ने बहुत ही उम्दा ढंग से साहित्य की उलझनों को उनके सामने रखा जिनका हमें बख़ूबी उत्तर मिला । यहाँ साहित्य की वो परतें खोलीं, जिनको अभी तक कभी किसी ने छुआ तक भी नहीं था । हिन्दी साहित्य को पारदर्शी बनाकर पेश किया है, जिसमें छल-कपट की कोई गुंजाइश नहीं । हिन्दी चेतना ने हिन्दी साहित्य को सरलता प्रदान की है । भारी -भरकम शब्द-अर्थों से दूर रखकर । इतने खूबसूरत ढंग से हिन्दी चेतना का अंक हमारे सामने लाने के लिए आप सब बधाई के पात्र हैं ।

-हरदीप कौर संधु (आस्ट्रेलिया)

●

'हिन्दी चेतना' जनवरी 2012 में रवीन्द्र अग्निहोत्री का लेख संकल्प का बल पढ़ा । बेन यहूदा जैसा जूनून भारत से बाहर के लोगों में ही आ सकता है, भारत के लोग तो पहले अंग्रेज़ों के गुलाम थे अब अंग्रेज़ी के । मैं फरवरी में भारत से लौटा हूँ, अपने देश में अपनी भाषा में बोलने को तरस गया । हर कोई अंग्रेज़ी बोलने में अपनी शान समझता है । हिन्दी में बात करना अब बैकवर्ड समझा जाता है वहाँ । दु:ख की बात है कि जिन विश्वविद्यालयों में मैं गया, उनके हिन्दी विभागों में हिन्दी की उचित और समुचित पत्रिकाएँ तक देखने को नहीं मिलीं । इस विषय पर कभी अलग से लेख हिन्दी चेतना को भेजूंगा कि हिन्दी वाले ही कैसे हिन्दी की दुर्दशा कर रहे हैं । फिलहाल इतना ही कि ऐसे लेख छापते रहिये -वह सुबह कभी तो आएगी.....

-डॉ. आशुतोष कुमार (अमेरिका)

●

भारत में इस स्तर की साहित्यिक पत्रिका नहीं निकलती

'हिन्दी चेतना' का अप्रैल 2012 अंक पढ़ा । दिल्ली से एक मित्र ने मुझे इसका लिंक भेजा था । एक सुन्दर, स्तरीय पत्रिका देख कर चकित रह गया । विदेशों से हिन्दी की इतनी सुन्दर पत्रिका । भारत में इस स्तर की साहित्यिक पत्रिका नहीं निकलती । मुख पृष्ठ आकर्षक, अपनी तरफ खींचता हुआ । पत्रिका देखनी शुरू की... सबसे पहले हरनोट जी से बातचीत । काफ़ी अच्छी लगी । उनके संघर्ष के बारे में जानकर उनकी कहानियाँ माँ पढ़ती है और बिल्लियाँ बतियाती हैं दोबारा पढ़ीं, काफ़ी कुछ स्पष्ट हुआ । सुदर्शन प्रियदर्शिनी की कहानी 'मरीचिका' उदास कर गई । जिस पेस पर कहानी चल रही थी अंत बहुत जल्दी हुआ लगा । 'सफ़ेद चादर' कहानी का अंत बहुत अच्छा किया गया है और कहानी भी नयापन लिये हुए है । अखिलेश शुक्ल का संस्मरण रोचक लगा । आलेख, लघुकथाएँ, कविताएँ, ग़ज़लें, क्षणिकाएँ सब बहुत प्रभावशाली । माहिया से परिचय पहली बार हुआ । दो लेखों ने ध्यान आकर्षित किया । विजय शर्मा द्वारा लिखित 'प्रवासी हिन्दी साहित्य में विदेशी जीवन' । बहुत सुलझा हुआ लेख है । बड़े शोध और मेहनत से तैयार किया हुआ । विजय शर्मा विवेचनात्मक, समीक्षात्मक, आलोचनात्मक सभी तरह के लेख बहुत अच्छे लिखती हैं । दूसरे लेख का नाम पढ़कर मैं जितना आकर्षित हुआ था, पढ़कर उतनी ही निराशा हुई । लेख उलझा हुआ लगा । ऐसा लगा कि मधु अरोड़ा स्वयं भी नहीं जानती कि वे कहना क्या चाहती हैं । एक तरफ वे यह कह रही हैं कि मैं इन्हें प्रवासी कैसे कहूँ और कहानियाँ सब प्रवासी परिवेश की ही ली हैं उन्होंने; जिनके बारे में पढ़कर और लेख के शीर्षक को देख कर विरोधाभास हो रहा है । अगर कहानियाँ भारतीय परिवेश की चुनी होतीं और लिखी गई विदेशों में होतीं तो भी बात बनती और शीर्षक के साथ न्याय होता । इसलिए विजय जी का लेख बहुत सार्थक एवं स्पष्ट तथा मधु जी का विरोधाभासों से भरा हुआ कन्फ्यूज़्ड लगा । एक तरफ वे कह रही हैं कि लेख लिखने के लिए साहित्य खोजना पड़ा, विदेशों का साहित्य किसी एक जगह पर नहीं था । एक स्थान पर अगर रखा जायेगा तो प्रवासी साहित्य के खाँचे में ही कहीं रखा जायेगा । तो फिर प्रवासी तो इन्हें कहना पड़ेगा । यह बात ही बहुत बचकानी है । ऐसा कौन सा प्रवासी लेखक है जिसकी कहानी पढ़कर पाठक यह नहीं कहेगा कि यह कहानी प्रवासी नहीं । कहानी का ट्रीटमेंट और परिवेश ही बता देता है कि कहानी विदेशी है । ऐसे लेख भावुकता से नहीं तर्क और विवेक से लिखे जाते हैं । यह बात अब सही नहीं है कि विदेशों का साहित्य सिर्फ दोस्तों तक ही सीमित है । अब तो प्रवासी लेखक भारत की पत्र -पत्रिकाओं में निरन्तर छपते हैं और सम्पादक छापते हैं । मैंने बहुत से प्रवासी लेखकों को भारत की पत्र -पत्रिकाओं में ही पढ़ा है ।

अब मैं बात करता हूँ, आख़िरी पन्ने की । गज़ब का लिखा है - हमेशा आकाश की ओर देखना.. वहाँ सूर्य चमकता है, चाँद और तारे भी चमकते हैं । आकाश में सब के लिए स्थान है । दु:ख की बात यह है कि लेखक नाम का प्राणी ही सबसे छोटे दिल का होता है । इंच भर किसी और को जगह मिल जाए बस ईर्ष्या से मर जाता है । काग़ज़ पर कलम से बड़ी -बड़ी बातें लिखेगा और जीवन में निकृष्ट हरकतें करेगा । मेरे कई मित्र लेखक हैं, भुक्त भोगी हूँ । सुधा ओम ढींगरा जी आपका आख़िरी पन्ना पढ़ने के बाद आप की कई कहनियाँ पढ़ी हैं । बहुत अच्छा लिखती हैं आप । उत्तम संपादन के लिए साधुवाद । सामग्री का चुनाव बहुत सोच -समझ कर किया गया है ।

मैं हिन्दी क्यों पढ़ता हूँ ..? पाठकों के लिए रुचिकर एवं ज्ञानवर्धक । फिरंगी हिन्दी पढ़ें और हम बोलने से शर्मायें । हिन्दी चेतना ने काफ़ी चेताया । धन्यवाद ।

-विनीत कुमार, देहरादून (भारत)

हिंदुस्तानियत का सफ़र में राही मासूम रज़ा के बारे में जानना बहुत हृदय स्पर्शी लगा

'हिन्दी चेतना' अभी तक नेट से पढ़ा था लेकिन आपके सौजन्य से अब ये मुझे वास्तविकता में मिल गई है, इसको देखना छूना एक स्वप्न के साकार होने जैसा है इसके लिए आप को कोटि धन्यवाद । जून २०१२ का अंक पढ़ा ,सभी कहानियाँ लेख अच्छे लगे, एस. आर.हरनोट का साक्षात्कार जो आपने लिया है काफी ज्ञान वर्धक रहा, हरनोट जी के बालपन के बारे में उनके संघर्ष के बारे में जानना दिलचस्प लगा । हिंदी साहित्य के, हिंदी लेखन की कई विधायों के बारे में जानकारी मिली ।

सुदर्शन प्रियदर्शिनी की कहानी 'मरीचिका' सत्य संवाद लगी, उन्होंने जो दर्द साझा किया है वह भीतर तक कचोटता है..सिहरन होती है.. ऐसा भी होता है ? विश्वास नहीं होता...पर सच्चाई से आँखे भी नहीं मूंदी जा सकती...लेकिन कहानी का अंत जल्दबाजी में किया प्रतीत होता है...कहानी अंत के साथ इंसाफ नहीं कर पाती ।

अनिल प्रभा कुमार की कहानी 'सफ़ेद चादर' भी प्रभाव छोड़ती है, हिरण का शहर में घुसना दुर्घटना ग्रस्त हो जाना, एक प्रतीक है । इसके बहाने कथाकार अमेरिका की धरती, परिवेश के बारे में बहुत कुछ कह जाता है , जो एक रोमान्च–दर्द का दे जाता है ।

शाहिदा बेगम शाहीन की कहानी झूठे आडम्बर, पौरुष पर एक ज़ोरदार तमाचा है । साधुवाद शाहिदा जी ।

डॉ. सुरेश अवस्थी भी अच्छा व्यंग्य कर गए । अखिलेश शुक्ल का संस्मरण पठनीय है, परसाई जी के बारे में जानना अच्छा लगा। इस अंक की छोटी कहानियाँ भी बिहारी की सतसई लगी । रश्मि प्रभा की ख्वाबों की लड़की कविता दिल को छूती है, रश्मि प्रभा कविता तो बहुत अच्छा लिखती है लेकिन हमेशा परदे में रहना पसंद करती है ऐसा क्यों ? कंचन चौहान की ग़ज़ल भी बहुत अच्छी लगी ।

मधु अरोड़ा को फेसबुक पर देखा है उनका लेख पहली बार पढ़ा हूँ । कमाल का लिखती हैं, उनका लेखन मनोरंजन नहीं ज्ञानवर्धन करता है । इससे प्रवासी भारतीयों के लेखन के बारे में जानने की भूख शांत होती है । विजय शर्मा तो मेरे प्रदेश (अविभाजित बिहार) की हैं इन्होंने भी काफी अच्छा योगदान किया है, हिंदुस्तानियत का सफ़र में राही मासूम रज़ा के बारे में जानना बहुत हृदय स्पर्शी लगा ।

भारतीय परंपरा के अनुसार अंत में मीठा खाते है कभी– कभी हाजमोला भी खाते हैं ... आप का सम्पादकीय शायद इसीलिए सबसे अंत में रहता है.... इस बार आप ने बड़ी बहन की भूमिका का निर्वहन किया है । एक सन्देश आप ने दिया है ना केवल लेखकों के लिए बल्कि यह सन्देश सभी मानव जाति के लिए उपयोगी है । आप का यह कथन मैं सभी से साझा करना चाहता हूँ कि हम सब को आकाश बनाना चाहिए सबको उभरने का मौका देना चाहिए... आशा है आप की सीख असर दिखाएगी । साहित्य में या साहित्य के इतर झगड़े बंद हो जायेंगे....आमीन ।

सादर

–आर.एन. त्रिपाठी रवि

सीजेएम सिविल कोर्ट हाजीपुर वैशाली बिहार

'हिन्दी–चेतना' पत्रिका तो वैसे ही बहुत सुंदर और सार्थक है....पर अप्रैल अंक का मुखपृष्ठ तो आँखों को लुभाने वाला है...चयन के लिए बधाई.....

–बिखरे मोती

●

लेखकों से अनुरोध

बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा आलेख न भेजें । अपनी सामग्री यूनीकोड फॉंट में टैक्स्ट फाइल अथवा वर्ड की फाइल के द्वारा ही भेजें । पीडीएफ़ या जेपीजी फ़ाइल में नहीं। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ई मेल आदि लिखा होना ज़रूरी है । आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र भी अवश्य भेजें । पुस्तक समीक्षा के साथ पुस्तक के आवरण का चित्र अवश्य भेजें ।

अंतिम पत्र

मुझे हिन्दी चेतना नियमित रूप से मिल रही है । आपके अथक परिश्रम और सूझबूझ से उसने बड़ा सुन्दर और सराहनीय रूप ग्रहण किया है । मेरी ओर से हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ स्वीकार करें ।

–गौतम सचदेव (यूके)

●

(डॉ. गौतम सचदेव हिन्दी चेतना के नियमित पाठक थे । समय समय पर वे पत्र लिखकर हिन्दी चेतना के बारे में अपने विचारों से हमें अवगत कराते रहते थे । पिछले अंक की प्रतिक्रिया में उनका यह पत्र हमें हिन्दी चेतना के वर्तमान अंक में प्रकाशन के लिये प्राप्त हुआ था । इस अंक के प्रकाशन की प्रक्रिया के दौरान ही हमें ये दु:खद समाचार प्राप्त हुआ कि उनका निधन हो गया है । यह पत्र हिन्दी चेतना को लिखा गया उनका अंतिम पत्र ।)

विनम्र श्रद्धांजलि

ब्रिटेन के वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. गौतम सचदेव का 29 जून 2012 की सुबह 1.00 बजे दिल का ऑपरेशन असफल होने से निधन हो गया है । 'हिन्दी चेतना' परिवार हृदय की गहराइयों से श्रद्धा के फूल अर्पित करता है । ईश्वर उनकी दिवगंत आत्मा को शांति प्रदान करे ।

साक्षात्कार

बाज़ारवाद साहित्य के भीतर एक विषय के तौर पर भी मौजूद है और साहित्य को मार्केट में लाने के अस्त्र के तौर पर भी–तेजेन्द्र शर्मा

प्रतिष्ठित कहानीकार, ग़ज़लकार तेजेन्द्र शर्मा से की गई सुधा ओम ढींगरा की लम्बी बातचीत के कुछ अंश...

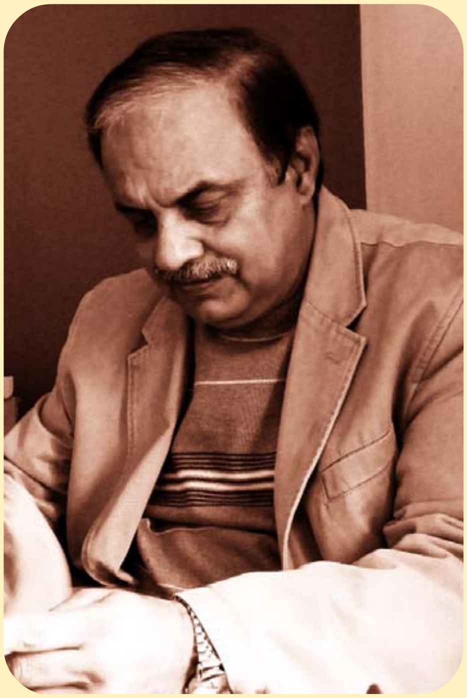

प्रश्न : *तेजेन्द्र जी, कोई समाचार, चरित्र या कोई घटना आप को जब विचलित करती है तो अवचेतन में कथ्य के बीज पड़ जाते होंगे और विचार अपनी क्रिया आरंभ कर देते होंगे तथा कहानी स्वरूप लेने लगती होगी या किसी और तरीके से आप की कहानियाँ जन्म लेती हैं दरअसल जानना चाहती हूँ कि कहानी लिखने की आप की प्रक्रिया क्या है ?*

उत्तरः सुधा जी, कहानी लिखना केवल सचेतन मन से नहीं होता है । यह एक निरंतर प्रक्रिया है । आपसे बात करते हुए भी कहीं मेरे दिमाग़ के किसी हिस्से में कहानी का तानाबाना बुना जा रहा है । कहानी हर बार किसी घटना पर ही आधारित हो, ऐसा भी नहीं है । हर कहानी की रचना प्रक्रिया एक सी है, ऐसा भी नहीं है । किसी की कही हुई एक बात भी कहानी बन जाती है तो कभी अपनी ही कोई सोच कहानी का रूप धारण कर लेती है । मैं जब- जब कहानी लिखता हूँ, मेरे मन में एक ही भावना होती है कि मैं कुछ नया कहूँ । जब तक कुछ नया कहने को नहीं होता, कहानी शुरू नहीं कर पाता । मैंने हादसों पर भी कहानियां लिखी हैं जैसे कि काला सागर और ढिबरी टाइट । कनिष्क विमान दुर्घटना में मेरे अपने साथी मारे गये थे । मैं उस हादसे के बाद के हालात से बहुत नज़दीकी से जुड़ा था । यूनियन की तरफ़ से भी और मैनेजमेंट की तरफ़ से भी । जो कुछ मैंने उस समय देखा, मेरा इन्सानियत से विश्वास ही उठ गया । रिश्तों के अर्थ ही बदल गये । मैं कहानी तब तक लिखना शुरू नहीं करता जब तक कि कहानी मेरे दिमाग़ में न लिखी जाए। विचारों की उठापटक, सोच की गहराइयों से गुज़रते हुए स्थितियों और चरित्रों के साथ समय बिताना शुरू कर देता हूँ । उनकी भाषा, बात करने का ढंग और प्रतिक्रियाएं समझने का प्रयास करता हूँ । अपने आसपास के जीवन से लोगों की व्यवहार-विशिष्टता समझने का प्रयास करता हूँ । उनकी आदतों को अपने चरित्रों के साथ जोड़ देता हूँ । चरित्र हाड़-मांस के हो जाते हैं । मैं चरित्रों पर अपनी भाषा नहीं लादता; उन्हें पूरी स्वतंत्रता देता हूं। किन्तु उनसे स्वयं आतंकित नहीं होता। मित्रों के साथ बातचीत के दौरान कभी कोई कुछ ऐसा कह देता है जो कि दिल में घर कर जाता है। याद रखिये कि कहानी वही किस्सा बनता है जिसमें कहानी बनने का दम होता है। कहानी का पहला ड्राफ़्ट लिखने के बाद उसे तीन सप्ताह के लिये रख देता हूं। उससे एक निश्चित दूरी बनाता हूं। फिर उसे दोबारा उठाता हूं। जो अनावश्यक लगता है उसे काटता हूं, बदलता हूं। जो अच्छा बन गया है, उसे निहारता हूं, ख़ुश होता हूं। आपको एक मज़ेदार बात बताऊं कि कहानी क़ब्र का मुनाफ़ा की शुरूआत एक मज़ाक से हुई थी जब हमारे एक मित्र ने एक पार्टी में कहा कि उसने पिछले वर्ष अपनी पत्नी को एक फ़ाइव-स्टार क़ब्र उपहार में दी थी, किन्तु उसकी पत्नी ने अभी तक उस उपहार का इस्तेमाल नहीं किया। बस हो गया मेरा शोध शुरू और बन गई कहानी।

प्रश्नः *क्या कभी ऐसा हुआ है कि आपके विचारों ने विषय निर्धारित करके कहानी लिखने की पहल की हो और फिर आपने उस विषय पर शोध शुरू किया हो और बाद में उसके लिए वातावरण जुटाया गया हो....*

उत्तरः सुधा जी, मैं क़ब्र का मुनाफ़ा की बात करना चाहूंगा । इस कहानी के लिए मुझे ख़ासी मशक्कत करनी पड़ी । यह एक अलग किस्म का शोध था । मुझे फ़ाइव स्टार क़ब्रिस्तान के बारे में पता करना पड़ा । बाज़ारवाद ने लाश के मेक-अप तक का उद्योग कैसे खड़ा कर दिया है । फिर मुस्लिम परिवेश की कहानी थी; इस विषय पर बहुत से मुस्लिम मित्रों की सोच जानने का प्रयास किया । इस कहानी के चार ड्राफ़्ट बने थे । मैं बिना शोध के कहानी नहीं लिखता – फिर चाहे वो शोध भावनाओं को लेकर ही क्यों न हो। मुझे याद है कि सिलवटें कहानी नायिका के बलात्कार से शुरू होती है। मैनें बहुत कुछ पढ़ा कि बलात्कार के बाद नारी की प्रतिक्रिया क्या हो सकती है। उन दिनों एअर इंडिया में काम करता था, बहुत सी एअर होस्टेसों से बात की। इंदु जी से इस विषय पर बातचीत की। इसी तरह ज़मीन भुरभुरी क्यों है? में ब्रिटेन की जेलों को लेकर लिखा है। ओपन जेल क्या होती है; आर्थिक जुर्म के क़ैदियों को किस तरह की जेलों में भेजा जाता है; ब्रिटेन की अदालतों में कार्यवाही कैसे की जाती है। मैं शोध को बहुत महत्व देता हूं। जब तक किसी भी विषय पर पूरी जानकारी ना प्राप्त कर लूं, लिखना शुरू नहीं करता। जैसे रेल्वे ही लें – यहां के ड्राइवर, कंट्रोल, स्टेशन स्टाफ़, सिग्नल-मैन आदि सभी की समस्याएं और नौकरी के आयाम अलग- अलग होते हैं। आपकी कहानी का चरित्र यदि इनमें से कोई भी काम करता हो, तो आपको रेल्वे को उस

चरित्र के माध्यम से देखना होगा। हर संस्था और विभाग की अपनी राजनीति होती है और प्रत्येक वर्ग की अपनी सोच। यह सब समझे बिना कहानी लिखने का प्रयास एक कमजोर प्रयास ही होगा। आपने देखा होगा कि कथा यू.के. ने मैं बोरिशाइल्ला और मैकलुस्कीगंज जैसे उपन्यासों को सम्मानित किया जो कि पूरी तरह से शोध पर आधारित हैं।

प्रश्नः *कब्र का मुनाफा, पासपोर्ट का रंग, कोख का किराया, टेलिफ़ोन लाइन, ओवरफ़्लो पार्किंग मेरी प्रिय कहानियाँ हैं । आप एक संवेदनशील कहानीकार हैं । आप की संवेदना ही मुझे आप की कहानियों की ओर आकर्षित करती है । पर 'कल फिर आना' में अन्तरंग दृश्य इतने भारी हो गए कि कहानी की संवेदना कहीं खो गई लगी मुझे..क्या उस दृश्य को कम करके आप अपनी बात नहीं कह सकते थे । क्या यह पश्चिम का प्रभाव है या आधुनिक कहानी की माँग है । 'ढिबरी टाईट', 'काला सागर',' 'बेघर आँखें', 'उड़ान',' कैंसर' जैसी कहानियाँ लिखने वाले लेखक ने 'कल फिर आना' कहानी दे कर चौंका दिया । क्या इसे सृजनशीलता की परिपक्वता या लेखनी का टर्निंग पॉइंट कहें । हर लेखक के जीवन में ऐसा होता है जब उसके लेखन में परिवर्तन आता है ।*

उत्तरः सुधा जी, आप ने देखा होगा कि मेरी हर कहानी एक दूसरे से भिन्न होती है। विषयवस्तु, टेक्नीक, भाषा, सब थीम के हिसाब से होते हैं। कल फिर आना पर मुझे एक्सट्रीम रिएक्श्न्स मिले। मर्दों की बात तो समझ में आयी क्योंकि ये कहानी उनकी पोल खोलती है, मगर औरतों में भी कहीं-कहीं आप वाली या आप से भी अधिक उग्र प्रतिक्रिया मिली। दरअसल ये कहानी एक नारी की फ़्रस्ट्रेशन की कहानी है। उसका पति उसको शारीरिक सुख नहीं दे पाता, जबकि सर्कमस्टैंशियल एविडेंस यह बताते हैं कि वो स्वयं घर के बाहर सुख पा रहा है। भला ऐसे में औरत का क्या कसूर है। पूरी कहानी में वह अपने पति से सुख पाने का प्रयास करती है, किन्तु वह साफ़ मना कर देता है। कल फिर आना की नायिका को कुछ समझ ही नहीं आता कि वह इस स्थिति से कैसे पार पाए। घर आये चोर के साथ सम्भोग उसका विद्रोह नहीं है, वह तो केवल एक हादसा है। इस कहानी का विद्रोह कहानी के अंतिम तीन शब्दों में निहित हैं, जब वह दरवाज़ा खोलते हुए चोर की पीठ को देखती है और कहती है - ''कल फिर आना।'' यह वाक्य नायिका सोच समझ कर कहती है। यह उसका विद्रोह है। एक हादसा उसे समझा जाता है कि वह जिन परिस्थितियों में जी रही है, उन परिस्थितियों में वह पति के अतिरिक्त किसी पराए पुरुष से शारीरिक सुख खोज सकती है। अब इस स्थिति में यदि मैं कहानी में हादसा पूरा नहीं दिखाता, तो नायिका का विद्रोह मुखर हो कर सामने नहीं आता। न तो मैं इसे पश्चिम का प्रभाव मानता हूँ और न ही आधुनिक कहानी की माँग, और न ही यह मेरी लेखनी का कोई टर्निंग पॉइंट है। ऐसा मेरी कहानी का ट्रीटमेंट मांगता था, बस इसी लिए उसे इस ढंग से किया। कल फिर आना के बाद की कहानियां जैसे कि कुछ आख़री दिन, कैलिप्सो, कल का समाचार, ज़मीन भुरभुरी क्यों है, ये सन्नाटा कब टूटेगा आदि बिलकुल अलग किस्म की कहानियां हैं। यानी कि ऐसा कोई डर नहीं कि अब के बाद मैं केवल एक जैसी कहानियां लिखनी शुरू कर दूंगा जिनमें यौन-चित्रण खुला होगा। कहानी की जैसी मांग होगी, वैसा ही उसे ट्रीटमेण्ट भी मिलेगा।

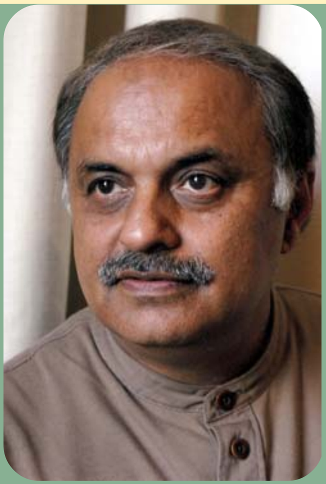

कहानी सभी विधाओं की माँ है, जननी है । लेखक क़लम उठाता है क्योंकि उसे कुछ कहना है । वह उसे कविता में कह सकता है, ग़ज़ल के रूप में कह सकता है या सीधे सीधे कहानी लिख देता है। मगर सच यह है कि लेखक अपने मन की कहानी सुनाना चाहता है। इसलिये कहानी विधा हमेशा ही पाठकों, लेखकों एवं आलोचकों में प्रिय रही है। कहानी विधा का अतीत भी गौरवशाली है, वर्तमान भी सुदृढ़ हैं और भविष्य भी उज्ज्वल है।

प्रश्नः *आज की हिन्दी कहानी और उसकी स्थिति के बारे में आप क्या सोचते हैं ?*

उत्तरः मेरा मानना है कि कहानी सभी विधाओं की माँ है, जननी है । लेखक क़लम उठाता है क्योंकि उसे कुछ कहना है । वह उसे कविता में कह सकता है, ग़ज़ल के रूप में कह सकता है या सीधे सीधे कहानी लिख देता है। मगर सच यह है कि लेखक अपने मन की कहानी सुनाना चाहता है। इसलिये कहानी विधा हमेशा ही पाठकों, लेखकों एवं आलोचकों में प्रिय रही है। कहानी विधा का अतीत भी गौरवशाली है, वर्तमान भी सुदृढ़ हैं और भविष्य भी उज्ज्वल है। जब मधुबाला की मृत्यु हुई, तो लोग सोचते थे कि क्या अब कभी सुन्दर अभिनेत्री सिनेमा की स्क्रीन पर दिखाई देखी । लेकिन आपने देखा कि सुन्दर और अच्छी अभिनेत्रियों की एक क़तार हमारे सामने आती चली गई। यही कहानी विधा के साथ भी हुआ है। आज कहानी की स्थिति बेहतरीन है क्योंकि तीन से चार पीढ़ियों के कहानीकार अभी भी कहानी विधा में सक्रिय सृजन कर रहे हैं। कहानीकारों और कहानियों के नाम देने की आवश्यक्ता नहीं समझता मगर तमाम कहानी-संग्रह जो कि बड़े छोटे प्रकाशक छाप रहे हैं और जिस तरह कहानी विशेषांक बाज़ार में आ रहे हैं । उससे मैं कहानी विधा को लेकर बहुत संतुष्ट हूं । देखिये, हर दशक के अपने कहानीकार होते हैं । वे अपने- अपने समय की कहानी कहते हैं । हमारे सामने- सामने एक नई पीढ़ी आकर खड़ी हो जाती है, जिसकी रचनाएं पहले से अलग होती हैं और एक नई ताज़गी का अहसास देती हैं । आज की कहानी किसी आंदोलन के दबाव की कहानी नहीं हैं । आज की कहानी सहज है और प्रेषित होती है । मैं उन आलोचकों में से नहीं हूं जो साठोत्तरी दशक से आगे की कहानी के बारे में बात करने से कतराते नज़र आते हैं । अंग्रेज़ी शब्द का इस्तेमाल किया

जाए तो कहानी विधा का यह दौर ख़ासा 'वायब्रेण्ट' है।

प्रश्नः *गुटबंदी के साथ -साथ आज साहित्य में बाज़ारवाद भी बहुत बढ़ गया है ...आप की क्या राय है ?*

उत्तरः सुधा जी, जहां तक साहित्य में गुटबाज़ी का सवाल है, तो वो हमेशा से रही है। गुटबाज़ी की इन्तेहा तो यह थी की पहल जैसी पत्रिका में प्रकाशित होने की पहली शर्त थी आपका मार्क्सवादी होना। प्रेमचन्द के ज़माने से साहित्य गुटों में बंटता रहा है। हां उनके ज़माने में ईर्ष्या से अधिक स्पर्धा का भाव रहता था। बाज़ारवाद ने आज जीवन के हर पहलू को प्रभावित किया है। आज बाज़ार का युग है और हमारे साहित्य में भी उसकी झलक साफ़ दिखाई देती है। पहले लोग वर्षों गुरु की सेवा करके संगीत सीखते थे। आज सोनी टी.वी. और ज़ी टीवी उन्हें सरल मौक़ा देते हैं कि वे आइडल बन सकें। ठीक उसी तरह आज का लेखक भी जल्दी में है। उसके पास समय नहीं है। वह चाहता है कि उसकी रचनाएं प्रकाशित हों उन पर बात हो और विद्यार्थी उस पर शोध करना शुरू कर दें। कहानीकार अपनी एक-एक कहानी कई- कई पत्रिकाओं में छपने के लिए भेजता है, उसे कोई अपराध बोध नहीं होता । मगर एक बात साफ़ है कि मानवीय मूल्यों के बिना साहित्य रचना नहीं हो सकती। वही साहित्य बचेगा जिस में मानवीय सरोकार होंगे। कहानी, कविता या व्यंग्य तभी सार्थक कहलाते हैं जब आम आदमी के दर्द की बात करते हैं। हिन्दी में पाप्युलर साहित्य और गंभीर साहित्य के बीच एक लम्बी खाई है। चाहे कोई बाज़ारवाद का इस्तेमाल अपने आप को प्रोजेक्ट करने के लिये इस्तेमाल करे या ना करे, सच तो है कि साहित्य रचना कर रहा है। क्या आप फ़ेसबुक पर अपनी-अपनी ढफली बजाने वालों को बाज़ारवाद का इस्तेमाल करने वाला नहीं कहेंगी। अबकी बार पुस्तक मेले के दौरान फ़ेसबुक एक पूरा पब्लिसिटी का अड्डा बनी हुई थी। क्या इसे हम बाज़ारवाद नहीं कहेंगे। आज के माहौल में बाज़ारवाद साहित्य के भीतर एक विषय के तौर पर भी मौजूद है और साहित्य को मार्केट में लाने के अस्त्र के तौर पर भी मौजूद है।

प्रश्नः *आप स्त्री विमर्श और नारी आन्दोलन के बारे में क्या सोचते हैं .....*

उत्तरः स्त्री विमर्श एवं नारी आन्दोलन अपने आप में अच्छे मुद्दे हैं। मगर मेरा मानना है कि साहित्य में इनका कोई स्थान नहीं। साहित्य में वामपन्थी लेखन, नई कहानी, अकहानी, अकविता, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, और अब प्रवासी साहित्य जैसी कई नारेबाज़ियां सुनने को मिलती रही हैं। मगर मुझे लगता है कि इन सब से साहित्य में गुणवत्ता नहीं आती। मेरी मानें तो साहित्य के लिए विचार आवश्यक है, विचारधारा नहीं। विचारधारा बाहर से आरोपित की जाती है, जबकि विचार भीतर से जन्म लेता है। विचारधारा पर लेख लिखे जा सकते हैं, पैम्फ़लेट छपवाए जा सकते हैं, मगर साहित्य को उनसे दूर रखना चाहिये। साहित्य आम आदमी के दर्द की बात करे, जीवन की कटु सचाइयों का चित्रण करे, प्रकृति के अचम्भों को निहारे और उनकी प्रशंसा करे, आपसी रिश्तों की व्याख्या करे, मगर किसी राजनीतिक विचारधारा के तहत नहीं । विमर्श और आंदोलन अस्थाई होते हैं जबकि साहित्य कालातीत होता है । विमर्श के मुद्दे बदलते रहेंगे, साहित्य हज़ार साल बाद भी ज़िन्दा रहेगा । बिना किसी विमर्श के भी नारी को केन्द्र में रख कर बेहतरीन कथा साहित्य हिन्दी, उर्दू, पंजाबी और अन्य भारतीय भाषाओं में लिखा जाता रहा है । कालिदास के ज़माने से स्त्री विमर्श का नाटक शुरू होने से पहले तक स्त्री साहित्य के केन्द्र में रही है । साहित्य विमर्श का मोहताज नहीं होता है । बल्कि बहुत बार विमर्श साहित्य को कमज़ोर बनाता है, कलात्मकता को नुक़सान पहुंचाता है । कहानी पढ़ने के बाद आलोचकों को विमर्श करने का सामान कहानी में होना चाहिये, विमर्श से साहित्य संचालित नहीं होना चाहिये ।

प्रश्नः *तेजेन्द्र जी, 'प्रवासी साहित्य' का बड़ा शोर है आज कल । कुछ लेखक आरक्षण माँग रहे हैं कुछ संरक्षण । कुछ कह रहे हैं कि हम बस हिन्दी के लेखक हैं, हमारे लेखन को प्रवासी न कहा जाए । आपने पिछले वर्ष यमुनानगर में प्रवासी साहित्यकारों का सम्मेलन करवाया था । कथा यूके ने भी इस तरफ काफ़ी काम किया है । अभी थोड़ी देर पहले आप ने अपने उत्तर में कहा है - 'अब प्रवासी साहित्य जैसी कई नारेबाज़ियां सुनने को मिलती रही हैं।' अगर यह नारेबाज़ी है तो आप*

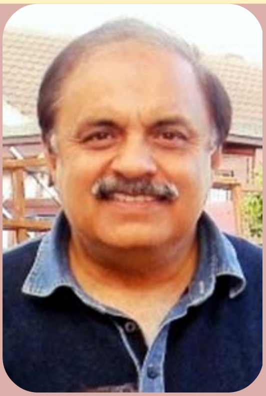

जन्म : 21 अक्टूबर 1952

शिक्षाः दिल्ली विश्विद्यालय से बी.ए. (ऑनर्स) अंग्रेज़ी, एवं एम.ए. अंग्रेज़ी, कम्पयूटर कार्य में डिप्लोमा ।

प्रकाशित कृतियां : काला सागर, ढिबरी टाईट, देह की कीमत, यह क्या हो गया !, बेघर आंखें, सीधी रेखा की परतें (तेजेन्द्र शर्मा की समग्र कहानियां भाग-1), क़ब्र का मुनाफ़ा (सभी कहानी संग्रह ।) ये घर तुम्हारा है... (कविता एवं ग़ज़ल संग्रह) ।

गतिविधियां : दूरदर्शन के लिए शांति सीरियल का लेखन । अन्नु कपूर द्वारा निर्देशित फ़िल्म अभय में नाना पाटेकर के साथ अभिनय। बी.बी.सी. लंदन, ऑल इंडिया रेडियो, व दूरदर्शन से कार्यक्रमों की प्रस्तुति, समाचार वाचन।

पुरस्कार/सम्मानः ढिबरी टाइट के लिए महाराष्ट्र राज्य साहित्य अकादमी पुरस्कार, सहयोग फ़ाउंडेशन का युवा साहित्यकार पुरस्कार - 1998, सुपथगा सम्मान - 1987, कृति यू.के. द्वारा वर्ष 2002 के लिये बेघर आँखें को सर्वश्रेष्ठ कहानी का पुरस्कार। प्रथम संकल्प साहित्य सम्मान - दिल्ली (2007), तितली बाल पत्रिका का साहित्य सम्मान (2007), भारतीय उच्चायोग, लन्दन द्वारा डॉ. हरिवंशराय बच्चन सम्मान (2008)

विशेष : वर्ष 1995 में कथाकारों के लिये इंदु शर्मा कथा सम्मान की स्थापना। 2000 में इंगलैंड में रह कर हिन्दी साहित्य रचने वाले साहित्यकारों हेतु पद्मानंद साहित्य सम्मान की स्थापना।

संपर्क : 27 Romilly Drive, Carpenders Park, Watford WD19 5EN, United Kingdom. Mobile: 00-44-7868738403
E-mail:kahanikar@gmail.com
kathauk@hotmail.com

ये सम्मेलन क्यों करवाते हैं... ? यह विरोधाभास क्यों ?

उत्तर: देखिये सुधा जी, हर प्रवासी लेखक को हक़ है कि वह अपने लेखन के बारे में अपनी राय रखे और उसे प्रकाशित करवाने का प्रयास करे। समस्या भारत की पत्रिकाओं की है। वे प्रवासी लेखकों को अपने नॉर्मल अंकों में जगह देने से कतराते हैं या फिर हमारी रचनाओं को 'प्रवासी क़लम' कॉलम के तहत छापते हैं। बहुत से संगठनों ने प्रवासी साहित्य के नाम पर भारत में दुकानदारी चला रखी है मगर प्रवासी लेखन के पठन-पाठन के लिए कोई गंभीर प्रयास नहीं किए। जो संपादक अपनी पत्रिकाओं के प्रवासी विशेषांक निकालते हैं, वे भी अंक निकाल कर इतिश्री कर देते हैं। समस्या दुधारी है। प्रवासी लेखक चाहता है कि उसके लिखे साहित्य पर मुख्यधारा अलग से ध्यान दे, मगर साथ ही चाहता है कि उसे प्रवासी न कहा जाए। मैनें यह मुहिम 2007 में चलाई थी, जब दुबई के सम्मेलन के लिये एक पर्चा लिखा था कि हमारे साहित्य को प्रवासी साहित्य न कहा जाए। किन्तु वहीं एक सच्चाई यह भी है कि विदेशों में बसे लेखक प्रवासी हैं । और लेखक तो वे हैं ही । अत: उन्हें प्रवासी लेखक कहने में कोई हर्ज नहीं है । मगर साहित्य कभी प्रवासी नहीं हो सकता। आज सरकार ने प्रवासी मंत्रालय बना दिया है, प्रवासी दिवस जनवरी में मनाया जाता है, विश्वविद्यालयों ने प्रवासी साहित्य के विभाग खोल दिये हैं । "प्रवासी साहित्य" पढ़ाया जा रहा है और उस पर शोध भी हो रहे हैं । समस्या तब खड़ी होती है जब हमारे साहित्य को प्रवासी साहित्य कह कर हाशिये पर डालने का षड्यंत्र रचा जाता है । यानी कि हमारे नाम कभी भी मुख्यधारा के लेखकों के साथ नहीं लिए जाएंगें । मगर सच तो यह है कि मुख्यधारा में वही लेखक शामिल होते हैं जो एक ख़ास किस्म की विचारधारा रखते हैं । कथा यू.के. ने डी.ए.वी. गर्ल्ज़ कॉलेज यमुना नगर के साथ मिल कर एक गंभीर प्रयास किया । इस कार्यक्रम में राजेन्द्र यादव जैसे साहित्यकार-संपादक के अलावा बहुत से आलोचक, साहित्यकार एवं प्राध्यापक शामिल हुए । दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रमुख प्रो. गोपेश्वर सिंह ने "प्रवासी साहित्य" पर साधिकार गहरे वक्तव्य दिये । मेरे व्यवहार में कहीं कोई विरोधाभास नहीं है । हम नारेबाज़ियों के ख़िलाफ हैं मगर गंभीर काम के समर्थक हैं । मैनें स्वयं अब तक कई प्रवासी संकलन संपादित किए हैं - समुद्र पार रचना संसार (हरि भटनागर के साथ), ब्रिटेन की उर्दू क़लम एवं समुद्र पार हिन्दी ग़ज़ल (ज़किया ज़ुबैरी के साथ), प्रवासी संसार का जून 2011 का प्रवासी कहानी विशेषांक और अभी हाल ही में दिल्ली हिन्दी अकादमी के लिए एक प्रवासी हिन्दी कहानी विशेषांक । मेरा प्रयास है कि भारत से बाहर पश्चिमी हेमीस्फ़ीयर में जो पहली पीढ़ी के प्रवासियों द्वारा हिन्दी साहित्य रचा जा रहा है, उसे भारत में सही स्थान मिले।

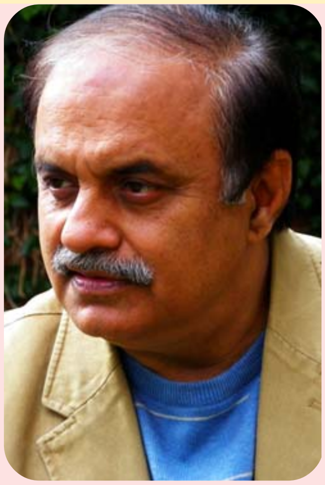

मैं विश्व हिन्दी सम्मलेनों, अंतरराष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलनों आदि के बहुत ख़िलाफ़ हूं। इनमें सरकारी ख़ज़ाने का अपव्यय होता ही है। एक यह बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी है कि विश्व हिन्दी सम्मेलनों में साहित्यकारों का जाना आवश्यक है। साहित्यकारों को शायद ईनाम-स्वरूप ऐसे मेलों में भेजा जाता है। मुझे आज तक समझ नहीं आता कि न्यूयॉर्क, त्रिनिदाद, सूरीनाम, डर्बन आदि शहरों या देशों में रायपुर का एक साहित्यकार या अध्यापक अगर अपना एक साहित्यिक या एकेडेमिक लेख पढ़ आता है, तो उससे हिन्दी को क्या लाभ होता है।

प्रश्न: *इस वर्ष भी आप ने मुम्बई में प्रवासी हिन्दी साहित्य पर अंतरराष्ट्रीय परिसंवाद करवाया । इन सम्मेलनों को करवाने के पीछे अभिप्राय ..?*

उत्तर: बात यह है कि विदेशों में रचे जा रहे साहित्य को भारतीय संपादक, आलोचक एवं लेखक गुणवत्ता में कुछ कमतर मानते हैं। शायद इसीलिये उसे आरक्षण कोटे में एक अलग ख़ांचा दे दिया गया है - प्रवासी साहित्य । भारत में प्रवासी साहित्यकारों के साथ शोषेबाज़ी बहुत होती है । उन्हें प्रवासी साहित्य रत्न, प्रवासी शिरोमणि और ना जाने किन- किन ख़िताबों से नवाज़ा जाता है। मगर उन पर कोई गंभीर चर्चा नहीं होती । कथा यू.के. द्वारा आयोजित प्रवासी सम्मेलनों में लेखकों पर लेख लिखवाए जाते हैं और उन लेखों का पाठ इन सम्मेलनों में होता है । फिर उन लेखों को एक पुस्तकाकार में प्रकाशित करवाने के प्रयास भी किये जा रहे हैं । इस तरह विदेशों में रचे जा रहे हिन्दी साहित्य पर गंभीर चर्चा हो पाएगी।

प्रश्न: *आज भारत से बाहर कई जगह देखा जा रहा है कि हिन्दी के विकास हेतु प्रयत्न करने के बजाय कई लोग हिन्दी के नाम पर बड़ी-बड़ी गोष्ठियां और सेमिनार कराकर भारत सरकार की जेब ढीली कराने में यकीं रख रहे हैं, जबकि होना ये चाहिए कि इस तरह अधिक खर्च और कम विकास की बजाय कम खर्च और अधिक विकास पर ध्यान देना चाहिए और अनुवाद, हिन्दी पर शोध, भाषा के प्रसार, उसपर अंतरराष्ट्रीय छात्रवृत्तियां एवं बदलते युग के साथ कदमताल मिलाने के लिए हिन्दी के बेहतरीन सॉफ्टवेयर बनाए जाने की आवश्यकता लगती है । पर लगता है जैसे भारत सरकार के हिन्दी विभागों में सबसे बड़े हिन्दी के भितरघाती बैठे हुए हैं, कई बार सिर्फ चंद दिनों के हिन्दी मिलन के नाम पर लाखों या कहें कि करोड़ों रुपये फूँक दिए जाते हैं । आप इसे कितना जायज़ मानते हैं या कि हिन्दी के योगदान में सहायक समझते हैं ?*

उत्तर: सुधा जी मैं विश्व हिन्दी सम्मलेनों, अंतरराष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलनों आदि के बहुत ख़िलाफ़ हूं। इनमें सरकारी ख़ज़ाने का अपव्यय होता ही है। एक यह बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी है कि विश्व हिन्दी

सम्मेलनों में साहित्यकारों का जाना आवश्यक है। साहित्यकारों को शायद ईनाम-स्वरूप ऐसे मेलों में भेजा जाता है। मुझे आजतक समझ नहीं आता कि न्यूयॉर्क, त्रिनिदाद, सूरीनाम, डर्बन आदि शहरों या देशों में रायपुर का एक साहित्यकार या अध्यापक अगर अपना एक साहित्यिक या एकेडेमिक लेख पढ़ आता है, तो उससे हिन्दी को क्या लाभ होता है। त्रिनिदाद के एक सम्मेलन में मुझे कहा गया कि मैं अपना लेख अंग्रेज़ी में पढ़ूं ताकि स्थानीय लोगों को भी समझ में आ जाए। इन विश्व हिन्दी सम्मेलनों से हिन्दी की स्थिति में कोई फ़र्क नहीं पड़ता। जिस शहर में ये आयोजन किये जाते हैं ; वहां एक भी हिन्दी पढ़ने, लिखने या बोलने वाला पैदा नहीं होता। आपको मज़ेदार बात बताता हूं कि इन सम्मेलनों में सैंकड़ों जुगाड़ू लेखक पहुंच जाते हैं। उन्हें अपने- अपने लेख पढ़ने के लिये दो से तीन मिनट मिलते हैं और कहा जाता है कि अपना-अपना लेख जमा करवा दें। मैनें बी.बी.सी. लंदन पर ऐसे विश्व हिन्दी सम्मेलनों के विरुद्ध जनमत जगाने का प्रयास किया है। हिन्दी दिवस और हिन्दी सम्मेलनों पर किये गये ख़र्चों को हिन्दी के सॉफ़्टवेयर आदि बनाने में ख़र्च किया जाए। क्या यह त्रासदी का विषय नहीं कि हिन्दी का मानक फ़ॉण्ट मंगल यूनिकोड अमरीका की माइक्रॉसॉफ़्ट कम्पनी बनाती है, न कि एक अरब से अधिक आबादी वाला देश भारत। अभी तक यह यूनिकोड फ़ॉण्ट छपाई में प्रयोग नहीं होता और पुराने किस्म के ट्रू-टाइप फ़ॉण्ट ही प्रकाशन में इस्तेमाल हो रहे हैं। पहले यह फ़िज़ूलख़र्ची केवल सरकारी स्तर पर होती थी, मगर अब तो निजी स्तर पर कुछ संस्थाएं तुलनात्मक रूप से अमीर लेखकों एवं लेखिकाओं को विदेश में ले जाकर उनकी पुस्तक का विमोचन करवाती हैं और टुच्चे- टुच्चे सम्मान देती हैं। मैं पूछना चाहता हूं कि किसी पुस्तक का विमोचन दिल्ली में हो, मुंबई में हो या फिर रूस, अमरीका या थाइलैण्ड में; उससे फ़र्क क्या पड़ता है। हमें ऐसी योजनाओं को सहयोग नहीं देना चाहिये। होना तो यह चाहिये कि हिन्दी की किसी भी प्रकार की डिग्री की मान्यता के लिए पूरा विश्व भारत की ओर देखे। मगर होता यह है कि हिन्दी वाले ललचाई नज़रों से विश्व भ्रमण की ओर देखते नज़र आते हैं। इस सरकारी ख़र्चे से हिन्दी साहित्य को विश्व की

पहले यह फ़िज़ूलख़र्ची केवल सरकारी स्तर पर होती थी, मगर अब तो निजी स्तर पर कुछ संस्थाएं तुलनात्मक रूप से अमीर लेखकों एवं लेखिकाओं को विदेश में ले जाकर उनकी पुस्तक का विमोचन करवाती हैं और टुच्चे-टुच्चे सम्मान देती हैं। मैं पूछना चाहता हूं कि किसी पुस्तक का विमोचन दिल्ली में हो, मुंबई में हो या फिर रूस, अमरीका या थाइलैण्ड में; उससे फ़र्क क्या पड़ता है। हमें ऐसी योजनाओं को सहयोग नहीं देना चाहिए। होना तो यह चाहिए कि हिन्दी की किसी भी प्रकार की डिग्री की मान्यता के लिए पूरा विश्व भारत की ओर देखे।

अन्य भाषाओं में अनुवाद करने पर ख़र्च किया जा सकता है। इन हिन्दी सम्मेलनों में बड़ी कॉर्पोरेट कम्पनियों के मैनेजर, सरकारी उच्च-अधिकारियों को बुला कर हिन्दी में अकाउण्ट रखने के फ़ायदे बताये जाने चाहिए। यदि भारत सरकार के कार्यालय, बैंक, कॉर्पोरेट दफ़्तर आदि हिन्दी में काम करना शुरू करेंगे तभी हिन्दी रोज़ी रोटी से जुड़ेगी। अभी तो फ़िलहाल हर विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी को राष्ट्र संघ की भाषा बनाने का संकल्प लेता है। ना जाने कितनी बार यह संकल्प लिया जा चुका है।

प्रश्न: *तेजेन्द्र जी मैं आप से सहमत हूँ, संकल्प तो लिए जाते हैं पर उस दिशा में कार्य नहीं किए जाते । और फिर अगले सम्मेलन में वही संकल्प दोहराए जाते हैं । अच्छा अब मैं अपने अगले प्रश्न की ओर मुड़ती हूँ । आज भी भारतीय समाज में कट्टर हिन्दू या मुस्लिम ना होने को सेकुलर होने से जोड़ा जाता है या फिर कई बार सेकुलर होने का अर्थ धर्म में विश्वास ना रखने वाला माना जाता है । आप इस बारे में क्या कहेंगे ?*

उत्तर: भारतीय समाज में पांच बार नमाज़ पढ़ने वाला मुसलमान भी सेक्युलर कहलाता है। गुरूद्वारे में जूते साफ़ करने वाला सिख भी सेक्यूलर कहला सकता है। मगर अपने आप को हिन्दू कहने वाला व्यक्ति सांप्रदायिक घोषित हो जाता है। यानी कि भारत में अपने आप को हिन्दू कहने वाला व्यक्ति सेक्यूलर नहीं हो सकता। दरअसल भारत में सेक्यूलर शब्द का अर्थ बिल्कुल अनर्थ हो गया है। यह मूल रूप से एक फ्रेंच शब्द है। फ्रांस में जो लोग चर्च विरोधी होते हैं उन्हें सेक्यूलर कहा जाता है। यहां भारत में इसका अर्थ पूरी तरह से बदल दिया गया है। हमारे यहां काँग्रेस पार्टी मुस्लिम लीग पार्टी के साथ सरकार चला सकती है। मुस्लिम लीग सांप्रदायिक पार्टी नहीं है, मगर भारतीय जनता पार्टी सांप्रदायिक है। भारत में शब्दों की व्याख्या अपने ढंग से लोग करते हैं। सबसे मज़ेदार सेक्यूलर बंगाल के मार्क्सवादी हैं। वे दुर्गा पूजा भी करते हैं और कम्यूनिस्ट भी हैं। मैं इस बात से सहमत हूं कि भारत में पूरी तरह से सेक्यूलर शायद ही कोई हो; क्योंकि सेक्यूलर होने की पहली शर्त है भगवान में आस्था ना होना। इसलिये भारत के सेक्यूलर लोगों को मैं सुविधाभोगी सेक्यूलर कहता हूं यानि कि स्यूडो-सेक्यूलर।

प्रश्न: *अच्छा अब यह बताएँ कि तेजेन्द्र शर्मा की नज़र में लेखक तेजेन्द्र शर्मा...?*

उत्तर: कसर रही... कसर रही.... कसर रही.......

प्रश्न: *विदेशों में कौन से रचनाकार बहुत अच्छा लिख रहे हैं ....?*

उत्तर: सच्ची बात तो यह है कि मुझे विदेशों में लिखने वालों में खोजना पड़ेगा कि कौन अच्छा साहित्य नहीं रच रहा। हम सबके लिये यह सुखद स्थिति है कि अमरीका, कनाडा, ब्रिटेन, युरोप, खाड़ी देशों एवं सिंगापुर व आस्ट्रेलिया में स्तरीय हिन्दी साहित्य रचा जा रहा है। मुझे समुद्र पार रचना संसार, समुद्र पार हिन्दी ग़ज़ल, प्रवासी संसार एवं सृजन संदर्भ के विशेषांकों को संपादित करने का मौक़ा मिला। उसके दौरान मुझे प्रवासी लेखकों के काम को क़रीब से देखने का अवसर मिला। मुझे लगता है कि बहुत ही थोड़े समय में हमारे लेखकों ने मुख्यधारा के हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान बनाना शुरू कर दिया है ।

(मधु अरोड़ा द्वारा सम्पादित पुस्तक 'बातें' में पूरी बातचीत पढ़ी जा सकती है....)

●

कहानी

घड़ा

विवेक मिश्र

विशाल उठकर बिस्तर पर बैठ गए। उनके माथे पर पसीने की बूँदें चमक रही थीं। विशाल तेज़ी से बेडरूम से निकल कर ड्राइंगरूम में आ गए। शीतल फ़ोन पर बात करने में व्यस्त थीं। विशाल ने कमरे के कोने में रखे घड़े को उठाया और ड्राईंगरूम से निकल कर लॉन में आ गए। शीतल भी विशाल के पीछे-पीछे बाहर आ गईं। वह विशाल से कुछ कह पातीं तब तक विशाल ने उस बड़े राजस्थानी घड़े को, जिस पर कच्चे पर चटक रंगों से फूल-पत्तियाँ और बेल-बूटे बने थे, ज़ोर से ज़मीन पर दे मारा।

विशाल हाँफ़ रहे थे और शीतल उनकी बाँह पकड़े हतप्रभ खड़ी थी। घड़े के छोटे-छोटे टुकड़े लॉन में बिखर गए थे।

आज जब विशाल घर लौटे थे तब वह बहुत ख़ुश थे और शीतल का हाल जानने के लिए उत्सुक लग रहे थे। विशाल ने घर आते ही पूछा था, ''क्या कहा डॉक्टर ने?''... ''कैसा है बेबी?, ... सब नार्मल तो है न?'' शीतल ने आश्वस्ति के भाव चेहरे पर लाते हुए कहा था ''हाँ सब ठीक ही है, वज़न, ब्लड प्रेशर ... आज अल्ट्रा साउंड भी करवाया ... सचमुच विशाल, कैसा विचित्र अनुभव है, अपने ही भीतर पलते बच्चे की तस्वीर स्क्रीन पर देखना, उसके छोटे-छोटे हाथ-पैर, पैर तो ऐसे चल रहे थे जैसे उसे मालूम हो कि हम उसे देख रहे हैं। कितना अजीब लगता है अपने भीतर एक और दिल को धड़कते हुए देखना, मैं तो अपने आँसू नहीं रोक सकी, ... बस अब मैं उसे देखना चाहती हूँ''।

विशाल की आँखें उत्सुकता और कौतूहल से भरी थीं। उन्होंने शीतल को बीच में ही रोक कर पूछा...''कोई समस्या तो नहीं है, सब ठीक है न?, ... काश मैं भी तुम्हारे साथ चल पाता, ... एनी वे, फ़ाइनली क्या कहा डॉक्टर ने?''

शीतल ने विशाल के कन्धे पर टँगे बैग को उतारते हुए कहा...''डॉक्टर ने कहा बेबी बिल्कुल ठीक है, बस थोड़ा खाने-पीने का ध्यान रखना है, ... मौसम बदल रहा है न, और मेरा गला भी कुछ ठीक नहीं, इसलिए ठंडी चीज़ें खाने और फ़्रिज का पानी पीने को मना किया है''।

शीतल ने कमरे के कोने में रखे एक नए राजस्थानी घड़े की ओर इशारा करते हुए कहा... ''देखो, हास्पिटल से लौटते हुए मैं यह घड़ा भी ले आई, अब इसी का पानी पियूँगी''।

विशाल की दृष्टि घड़े पर पड़ते ही उन्हें ऐसा लगा जैसे उनकी आँखों में कुछ चुभ रहा हो। कमरे के कोने में रखे मिट्टी के घड़े पर कच्चे पर चटक रंगों से फूल-पत्तियाँ बनी थीं। शीतल ने विशाल की ओर देखते हुए पूछा, ''सुन्दर है न?'' विशाल ने कोई जवाब नहीं दिया, सिर्फ़ शीतल की ओर देखा, एक बार फिर घड़े को देखा और बेडरूम की ओर बढ़ गए। उनके पीछे शीतल भी बेडरूम में आ गईं। शीतल ने पूछा ''क्या हुआ तुम्हें?''

विशाल ने थोड़ा रुक कर उत्तर दिया, ''तुम भी कमाल करती हो, आजकल पानी पीने के लिए कौन घड़ा घर में रखता है ... वो भी इतना बड़ा! कुछ भी उठा लाती हो। फ़्रिज का पानी नहीं पीना था तो एक छोटी सी सुराही ले आती, ... पर यह इतना बड़ा फूल-पत्तियों वाला राजस्थानी घड़ा, ... हटाओ इसे वहाँ से''।

शीतल बिना कुछ कहे विशाल को देखती रह गई। विशाल, जो ऐसे समय में शीतल का हर तरह से ध्यान रख रहे थे। बच्चे के जन्म का उन्हें शीतल से भी अधिक बेसब्री से इंतज़ार था। उन्होंने ख़ुद अपने हाथों से बेडरूम में चारों ओर गोल-मटोल, गोरे-काले-साँवले, हँसते-रोते कई बच्चों के चित्र लगाए थे, ... पर आज, अचानक एक घड़े को लेकर विशाल का इस तरह ग़ुस्सा होना, शीतल को कुछ समझ नहीं आया। वह बेडरूम से बाहर आ गईं। विशाल कपड़े बदल कर बेडरूम में ही लेट गए। ऐसे समय में जब वह अपनी पत्नी का इतना ध्यान रख रहे थे, उन्हें भी इस तरह शीतल से बोलना अच्छा नहीं लगा था। पर...वह घड़ा, जिसपर कच्चे पर चटक रंगों से फूल-पत्तियाँ बनीं थीं, उनकी आँखों में अभी भी चुभ रहा था। विशाल ने आँखें बन्द करलीं, पर अब भी वह उनकी आँखों के सामने था और उन्हें बार-बार एक ऐसे गहरे कुँए में खींचे ले जा रहा था जिसकी गहराइयों में झिलमिलाते पानी पर उन्हें ऐसा ही राजस्थानी बड़ा मिट्टी का घड़ा दिखाई देता, जिसपर कच्चे रंगों से फूल-पत्तियाँ बने थे, वह उस गहरे कुँए के गंदले पानी की सतह पर ऐसे हिलते-डुलते हुए तैरता, जैसे ख़ुद को डूबने से बचाना चाहता हो, पर धीरे-धीरे उसमें पानी भरने लगता और उस घड़े से हाँफ़ती, छटपटाती बुलबुले बनाती हवा बाहर निकलती। घड़ा हार जाता और आख़िर में डूब जाता।

विशाल उस घड़े को, उस कुँए को, उस शाम को भूल जाना चाहते थे, जिस शाम वह राजस्थान में, अपने गाँव ढाँढेसा में, अपनी हवेली के बरामदे में बड़ी बेचैनी से टहल रहे थे। हवेली के भीतर के एक कमरे से किसी औरत के रोने-चीख़ने की आवाज़ आ रही थी। यह विशाल की भाभी की आवाज़ थी। वह गर्भवती थीं और गर्भ नौ महीने से भी ऊपर का हो चुका था। आज दोपहर से ही उन्हें दर्द उठ रहा था। हवेली के भीतर के कमरे में डॉक्टर उनकी जाँच कर रही थी। डॉक्टर ने कमरे से बाहर निकलते ही कहा था, ''इन्हें अस्पताल ले जाना होगा, वैसे तो सब ठीक है, पर घर में प्रसव होने पर थोड़ी मुश्किल हो सकती है''। पर विशाल के बड़े भाई साहब ने भाभी को अस्पताल ले जाने से मना कर दिया था। विशाल डॉक्टर को शहर छोड़ने चले गए थे, जो गाँव ढाँढेसा से बीस-बाईस किलोमीटर दूर था।

विशाल डॉक्टर को छोड़कर जब तक हवेली वापस लौटे थे, सूरज डूब चुका था, पर हवेली के बरामदे की बत्तियाँ नहीं जल रहीं थीं। भीतर से भाभी की रोने की आवाज़ें आ रहीं थीं। हवेली के आँगन में कुछ औरतें, भाई साहब के दो ख़ास कारिन्दे और दाई, जिसे डॉक्टर के जाने के बाद जचकी के लिए बुलाया गया था, बैठे थे। भाई साहब भाभी के पास कमरे में थे। आँगन के बीच में एक बड़ा राजस्थानी घड़ा रखा था, जिसपर कच्चे पर चटक रंगों से फूल-पत्तियाँ बनी थीं। हवेली में एक भयावह सन्नाटा तैर रहा था। आज विशाल को उस घड़े पर बने फूल, उसकी गर्दन पर बने बेल-बूटे अच्छे नहीं लग रहे थे।

दाई ने उठते हुए कहा, ''मरी हुई छोरी जनी है बींदड़ी ने'' और आगे बढ़ते हुए काला कपड़ा घड़े पर ढक दिया। भाभी के रोने की आवाज़ तेज़ हो गई। भाई साहब कमरे से बाहर आ गए। उन्होंने आँगन में बैठे अपने खास कारिन्दों को इशारा किया। दोनों उठकर घड़े की तरफ़ बढ़े। तभी घड़ा काँप उठा।

मिट्टी का बेजान घड़ा। बेल-बूटों और फूल-पत्तियों वाला घड़ा। विशाल सोच रहा था क्या किसी और ने भी उस घड़े को काँपते हुए देखा है? घड़ा ही हिला था या धरती हिल रही थी। घड़े की ओर बढ़ते हुए दोनों आदमी ठिठक गए। घड़ा फिर हिला और लुढ़क गया। घड़े में भरा सफ़ेद, घर का पिसा, दरदरा नमक फ़र्श पर फैल गया। दो नन्ही, नमक में सनी मुट्ठियाँ घड़े से बाहर निकल आईं।

भाभी जो कमरे के चौखट से टिकी रो रही थीं, उनकी आँखें ऊपर चढ़ गईं। अब उनकी चीख़ें दहाड़ों में बदलने लगीं। विशाल को लगा जैसे हवेली की दीवारें उनकी दहाड़ों से थर-थर काँप रही हैं। वह घड़े से बाहर झाँकती नन्हीं मुट्ठियों को घड़े से बाहर खींचकर सीने से लगा लेना चाहती थीं। वह उन्हें पकड़ने के लिए बढ़ीं भी, पर कमरे की चौखट को छोड़ते ही आँगन के फ़र्श पर मुँह के बल गिर पड़ीं। उनकी मुँह से निकली चीख़ कई विचित्र सी ध्वनियों में टूट गई, वह यदि कुछ साफ़-साफ़ बोल पातीं तो यही कहतीं ''मार डाला मेरी बच्ची को'', लेकिन उस ध्वनि को समेट कर जोड़ा नहीं जा सकता था, क्योंकि अब वह असंख्य टुकड़ों में बँट कर आँगन में तैरती हुई हवेली के बाहर पसरे अंधेरे में विलीन हो गई थी। पर उसके कुछ बारीक रेशे अब भी हवेली की दीवारों से टकरा कर उन्हें झनझना रहे थे।

फ़र्श पर फैला नमक आँगन में खड़े लोगों की आँखों में चुभ रहा था। सब अंधे, गूँगे, बहरे बन कर खड़े थे। अगर कुछ बोल रहा था तो वे थीं दो नन्ही-नन्ही नमक में सनी, घड़े के मुँह से बाहर झाँकती मुट्ठियाँ।

विशाल काँपते पैरों से अपनी आँखें मलते हुए, घड़े की ओर बढ़े, पर भाई साहब ने उन्हें बीच में ही रोक दिया। भाई साहब के दोनों ख़ास कारिन्दों ने मुट्ठियों को पकड़ कर वापस घड़े में ठेल दिया और मुँह पर काला कपड़ा बाँध दिया। औरतें भाभी को उठा कर कमरे में ले गईं। भाभी होश में थीं या नहीं कहा नहीं जा सकता। उनके दाँत भिंचे हुए, आँखें चढ़ी हुई थीं और हाथ-पाँव एक दम ठण्डे पड़ चुके थे।

विशाल की आँखों के सामने जैसे अँधेरा छा गया था। अपनी पूरी शक्ति समेट कर वह अपने पैरों पर खड़े रह पाने की कोशिश कर रहे थे। उनके सामने जो कुछ भी घट रहा था, वह किसी दु:स्वप्न-सा धीरे-धीरे उनकी आँखों के आगे तिर रहा था। उनके कानों में अभी भी भाभी की चीख़ें गूँज रही थीं। उन्होंने ख़ुद को सम्भालते हुए सिर को झटका और हवेली के दरवाज़े की ओर लपके जहाँ से भाई साहब और उनके दो आदमी, आँगन के बीचों-बीच रखे उस घड़े को उठाकर ले गए थे। वह जब तक हवेली के बाहर पहुँचे, भाई साहब की जीप काला धुँआ पीछे छोड़ती हुई हवेली से बाहर निकल चुकी थी। वह पागलों की तरह, गिरते-पड़ते काले धुँए के पीछे भाग रहे थे। पर धुँआ उन्हें पीछे छोड़ कर फ़र्राटे से गाँव के बाहर बने उस मनहूस कुँए पर जा पहुँचा था, जिसके चारों ओर गहरा सन्नाटा था। कुँए की मुँडेर पर एक दीया रोशनी देने की नाकाम-सी कोशिश कर रहा था। भाई साहब की जीप जिस फ़र्राटे से कुँए तक पहुँची थी, उसी फ़र्राटे से वापस हवेली की ओर लौट गई। विशाल कुँए की मुंडेर पर हाथ रखे हाँफ़ रहे थे। दीये की रोशनी में झिलमिलाते कुँए के पानी में बुलबुले उठ रहे थे।

घड़ा डूब चुका था।

●

विवेक मिश्र

जन्म 15 अगस्त, 1970

चालीस से अधिक वृत्तचित्रों की पटकथाएँ भी लिखी हैं तथा दूरदर्शन के कई कार्यक्रमों का निर्देशन भी किया है।

'माटी का गुंबद' इनका पहला कविता संग्रह है तथा 'दुनिया एक समंदर है' एक ग़ज़ल संग्रह है, जो हिन्दी अकादमी, दिल्ली के सहयोग से 2007 में प्रकाशित हुआ। सन् 2009 में दिल्ली के शिल्पायन प्रकाशन से इनका कहानी संग्रह 'हनियां तथा अन्य कहानियाँ' प्रकाशित हुआ, उनकी कहानियाँ 'हंस', 'वागर्थ', 'पाखी', 'परिकथा', 'इंडिया न्यूज', 'आधुनिक साहित्य' जैसी राष्ट्रीय साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं।

विवेक मिश्र को 'उद्भव साहित्य सम्मान' - 2006, 'अलकनंदा साहित्य मार्तण्ड सम्मान' - 2007 से भी सम्मानित किया जा चुका है। भारत-एशियाई साहित्य अकादमी द्वारा विवेक मिश्र की कृति 'बोल उठे हैं चित्र' के लिए साहित्य सृजन सम्मान - 2009 दिया गया है। वर्ष 2010 में सर्वोच्च न्यायालय की बौद्धिक एवं साहित्यिक संस्था 'कवितायन' द्वारा भी उनके साहित्यिक लेखन के लिए विशेष सम्मान दिया गया है। हाल ही में विवेक मिश्र को अंजना युवा कहानीकार पुरुस्कार तथा परिचय साहित्य परिषद(रशियन सेन्टर फार साइन्स एन्ड कल्चर से सम्बद्ध संस्था) द्वारा सत्य सृजन सम्मान भी दिया गया है।

सम्पर्क:-
123-सी, पॉकेट सी,
मयूर विहार, फ़ेज़-2
दिल्ली - 110 091
Mob: 9810853128
Email: vivek_space@yahoo.com

कहानी

काला समय

बलराम अग्रवाल

बलराम अग्रवाल

जन्म : 26 नवंबर, 1952

शिक्षा : एम. ए., पीएच. डी. (हिन्दी)।

पुस्तकें : कथा-संग्रह-सरसों के फूल, ज़ुबैदा', 'चन्ना चरनदास', बाल कथा संग्रह दूसरा भीम, समग्र अध्ययन-उत्तराखण्ड, खलील जिब्रान।

अंग्रेजी से अनुवाद : फोक टेल्स ऑव अण्डमान एंड निकोबार, लॉर्ड आर्थर सेविले'ज़ क्राइम एंड अदर स्टोरीज़(ऑस्कर वाइल्ड)।

सम्पादन : मलयालम की चर्चित लघुकथाएँ, तेलुगु की मानक लघुकथाएँ, 'समकालीन लघुकथा और प्रेमचंद', 'जय हो!'(राष्ट्रप्रेम के गीतों का संचयन); कुछ वरिष्ठ कथाकारों की चर्चित कहानियों के 12 संकलन; 1993 से 1996 तक साहित्यिक पत्रिका 'वर्तमान जनगाथा' का प्रकाशन/संपादन, सहकार संचय, द्वीप लहरी, तथा आलेख संवाद के विशेषांकों का संपादन। हिन्दी साहित्य कला परिषद, पोर्टब्लेयर की साहित्यिक पत्रिका 'द्वीप लहरी' को संपादन सहयोग।

ई-मेल : balram.agarwal1152@gmail.com

मोबाइल : 09968094431

घर के भीतर लाश थी, गृहपति नरसिंह की लाश। रोते, छाती और सिर पीटते परिवारजन थे। तहकीकात में मशगूल पुलिस थी। कुत्ते थे। बाहर भीड़ थी। डरे और सहमे लोगों की भीड़। जानने और बताने को उत्सुक जिज्ञासुओं व वाचकों की भीड़। अफवाहें बुनते और सुनते लोगों की भीड़। भीड़-जिसे कुछ भी पता नहीं था, सिवा इसके कि सामने वाली कोठी में कल रात कुछ डकैत घुस आए थे और एक आदमी को मार गये।

''इस हरामजादे ने बेमतलब ही टंटा बढ़ा दिया।'' कोठी पर तहकीकात में शामिल एक पुलिसमैन अपने साथी से कह रहा था,''आखिर कितना लूट ले जाते वे-लाख, दो लाख दस-बीस-पच्चीस लाख?''

''पैसा बड़ी मुश्किल से जोड़ा जाता है यादव।'' साथी बोला,''इतनी आसानी से दिया भी तो नहीं जाता।''

''भई, जान है तो जहान है राणे।'' यादव बोला,''अपनी जान देकर आखिर किसके लिए बचाया इसने पैसा, बोल! साला, खुद तो मरा ही, हमारी भी मशक्कत का इंतजाम कर गया।''

राणा उसकी इस बात पर बुरी तरह खीझ गया। कुछ देर तक तो वह उसके चेहरे को देखता रह गया, फिर बोला,''यार, एक आदमी जान से गया और तू है कि अपनी मशक्कत का रोना रो रहा है! ''

''न रोऊँ? यह अगर जान न देता तो थाने में छोटी-मोटी डकैती की रपट लिखी जाती, बस '' यादव बोला।

''लेकिन अब भई तू इमोशनल टाइप की बातें करता है और मैं प्रेक्टिकल टाइप की।''

''सी. ओ. साहब आ रहे हैं।'' उसकी बात को बीच में ही काटकर राणा अचानक फुसफुसाया और सावधान की मुद्रा में खड़ा हो गया।

''हलो राणा!'' सी. ओ. साहब ने जीप से उतरते ही उसकी ओर देखकर पुकारा और कुछ पूछने जैसा संकेत करते हुए आगे बढ़ आए।

''गुड मार्निंग सर।'' फुर्ती के साथ सेल्यूट मारकर राणा बोला,''कोई खास बात नहीं लेकिन'' उन्हें एक ओर को लेजाकर उसने उनके कान में कहा,''यह पता चला है कि नरसिंह को गोली लगते ही घर की औरतें बुरी तरह दहशत खा गईं और उन्होंने बिना किसी ना-नुकर के सेफ की चाबियाँ डकैतों को सौंप दीं।''

''हूँ!'' सी. ओ. साहब के गले से निकला।

''वे लोग सारी नगदी और जेवर ले गये सर!'' राणा ने अपनी बात पूरी की।

''हाउ मच? कुड यू एस्टीमेट दैट ऑर नॉट!'' सी. ओ. ने फुसफुसाकर पूछा।

''यस सर यही कोई पच्चीस-तीस लाख।'' राणा ने भी वैसे ही उन्हें बताया।

उन्होंने एक बार फिर 'हूँ' की आवाज़ निकाली और आगे बढ़ गए।

वह कोठी के भीतर पहुँचे, जहाँ कुत्ते बिखरे हुए और लस्त-पस्त लाश को सूँघ रहे थे। राणा जहाँ थे, वहीं रह गये।

''छानबीन के नाम पर तूने इसलिए चाबियाँ ली थीं औरतों से!'' एकांत पाकर यादव ने तैशभरे

अंदाज़ में राणा से पूछा। हालाँकि उसका स्वर बहुत तेज़ नहीं था, पर तीखा खूब था। चेहरा पूरी तरह कस गया था।

''कीप क्वाइट यादव।'' उसके ऐसे तेवर देखकर राणा मुकाबले के लिए तैयार अंदाज़ में बोला,''मैं फालतू की प्रेक्टिकैलिटी में विश्वास नहीं रखता।''

''अरे तू तो यार डाकुओं का भी बाप निकला!'' मना करने के बावजूद यादव आश्चर्यभरे स्वर में बोला,''जो चीज़ साले डाकू नहीं लेजा पाए वो!!''

''शट-अप यादव!'' राणा लगभग चीख पड़ा।

''अच्छा, एक बात तो बता'' उसकी चीख से बेपरवाह यादव ने बोलना जारी रखा,''यह स्कीम तेरे दिमाग की उपज थी या किसी के इशारे पर तूने ऐसा किया? सी. ओ. साहब के या?''

मूर्ख आदमी। बीसवीं सदी आखिरी दौर की हिचकियाँ ले रही है और यह! पुलिस भारतीय पुलिस विभाग में यह करने क्या आया है? और अगर आ ही गया है तो कर क्या रहा है यहाँ? क्या सुबह-शाम हाजिरी लगा देने को, अफसरों के आगे 'यस्सर' 'नोस्सर' बोल देने को और महीने की आखिरी तारीख को वेतन लेजाकर घरवाली के हाथों में थमा देने भर को 'पुलिस की नौकरी' कहते हैं? कई मामलों में तो परमात्मा भी भरपूर बेवकूफी करता है। शेरदिल और जबर-दिमाग़ लोगों को हलका-फुलका शरीर दे देता है और भारी-भरकम शरीर वाले, इस यादव-जैसे घटोत्कचों को दिलो-दिमाग से खारिज रखता है। नहीं-परमात्मा का ख्याल मन में आते ही राणा ने बारी-बारी अपने कानों को छूकर उसके प्रतिकूल अपने विचारों के लिए उससे जैसे क्षमा माँगी। उस-जैसे लोग औरों के प्रति चाहे जैसे भी रहें, परमात्मा के प्रति नकारात्मक नहीं रह सकते। उसका अस्तित्व दरअसल है ही उस-जैसे लोगों के कारण। भय बिन प्रीत न होय गुसाईं-बाबा तुलसीदास ने यह ऐसे ही थोड़े लिख दिया होगा। परमात्मा से अगर प्रीत बनाए रखनी है तो मन में 'भय' बनाए रखने वाले काम-चोरी-लफंगई-करते रहना परमावश्यक हो जाता है।

''चुप कैसे हो गया?'' यादव ने उसे पुन: टोका।

उसके सवाल पर राणा कुछ देर तक फिर चुप रह गया। वह यादव की ओर सिर्फ देखता रहा जैसे

मूर्ख आदमी। बीसवीं सदी आख़िरी दौर की हिचकियाँ ले रही है और यह! पुलिस भारतीय पुलिस विभाग में यह करने क्या आया है? और अगर आ ही गया है तो कर क्या रहा है यहाँ? क्या सुबह-शाम हाजिरी लगा देने को, अफसरों के आगे 'यस्सर' 'नोस्सर' बोल देने को और महीने की आख़िरी तारीख़ को वेतन लेजाकर घरवाली के हाथों में थमा देने भर को 'पुलिस की नौकरी' कहते हैं?

कि कुछ बोलने से पहले यह सोच रहा हो कि अपनी बात वह कहाँ से और कैसे शुरू करे। कुछ इस तरह कि यादव को समझा भी दिया जाए और अपना अन्दाज़ भी कड़ुवा न हो।

''यादव, अनुभव और भाग्य-ये दो चीज़ें हैं जो आदमी को ऊँचा उठाने में मदद करती हैं।'' अन्तत: उसने धीरे-धीरे बोलना शुरू किया,''भाग्य पर किसी का कोई जोर नहीं। लेकिन अनुभव! उन्हें अपनी चेतना और मेहनत के बल पर पाया भी जा सकता है और बढ़ाया भी जा सकता है।''

यादव चुपचाप उसे बोलते हुए सुनता रहा। हालाँकि अभी तक की राणा की बात उसकी समझ में नहीं आई थी।

''देखो, राज-मिस्त्री जैसे किसी पेशे में तो तुम हो नहीं कि मसाला अगर दीवार पर लगा तो मालिक का और नीचे गिरा तो भी मालिक का, अपन को तो शाम को दिहाड़ी मिल ही जानी है-अपन का क्या लगा और क्या गिरा। पुलिस की नौकरी में आए हो तो काम को देखकर रोओ मत। घुसो इसके भीतर। इसे जानो, जाँचो, परखो। सीखो-इसमें जीने, रहने और बने रहने के तौर-तरीके।''

''क्या! क्या मैं पुलिस-सेवा के तौर-तरीके नहीं जानता?'' यादव ने पूछा।

''बहुत-सी बातें हैं, जिन्हें जानना हमेशा ही जरूरी रहता है मेरे दोस्त!'' राणा बोला,''किताबों में सब-कुछ नहीं लिखा होता। आदमी का सबसे बड़ा शिक्षक समय है, उससे सीखो।''

यादव की समझ में इस बार भी कुछ नहीं आया। दरअसल वह बातों को सीधे-सीधे कहने और समझने का आदी था। और राणा, कम से कम इस समय, उसे सीधे-सीधे कुछ बताने का खतरा मोल नहीं ले रहा था। सो, इस समय की उसकी बातें उसे रहस्य-जैसी उलझी हुई लग रही थीं। हाँ, इतना वह जरूर समझ रहा था कि उसी के कैडर में, उसी के मीमो के तहत पुलिस-सेवा में आया राणा इस समय तक अधिकारियों की नजर में काफी चढ़ चुका था। और इसका सिर्फ एक कारण उसे नजर आता था-यह कि वह अपने-आप को जरूरत से कुछ ज़्यादा ही मुस्तैद 'पोज़' करता था। यादव को 'पोज़' करना कभी भी पसन्द नहीं रहा। अधिकारियों के आदेश और मौका-ए-वारदात पर मानवताजनित कर्त्तव्यपरायणता से अलग तुरंत न वह कुछ करता था, न कुछ सोचता था।

''किस सोच में पड़ गया?'' उसे अन्यमनस्क देखकर राणा ने पूछा।

''कुछ नहीं।'' उसके मुँह से निकला।

''यादव, आदमी को इस धरती पर तीन 'प' चाहिएँ।'' उसकी दुविधा को भाँपकर राणा ने पुन: बोलना शुरू किया,''तू बता सकता है कि वो तीन 'प' क्या हैं?''

''पवित्र हृदय प्यार और ।''

''और परलोक।'' राणा ने वाक्य को पूरा करके उसे दुत्कारा,''तुझे तो किसी मंदिर में बैठकर कथा-

वाचन करना चाहिए और बेंत या पिस्तौल नहीं, तेरे हाथों में मंजीरे ही ज्यादा अच्छे लगने थे।'' यह कहकर वह चुप हो गया। अफसोस इस बार उसके साफ-साफ उभर आया था। जाहिर था कि यादव से वह सच्ची मित्रता रखता था अन्यथा तो उसके भोलेपन पर वह दु:खी न होकर खुश ही होता, या फिर नि:स्पृह रहता।

''मेरे भाई, यह काल यह-जिसमें तू और मैं जी रहे हैं-कलिकाल कहलाता है। कलिकाल, यानी काला समय काला कहने, सुनने, देखने और भोगने का समय। सफेदी में भी काला ढूँढने का समय है यह। जिस तरह सतयुग में सत्यमय रहना कालोचित था उसी तरह अब कलिमय रहना कालोचित है। जो लोग काल के विरुद्ध गति रखते हैं-काल उन्हें नष्ट कर डालता है-यह तो तूने पढ़ ही रखा है।''

''हाँ, और यह भी कि सत्यमय रहना हर काल में शांतिप्रद है और कलिमय रहना हर काल में कष्टप्रद।'' यादव बोला।

''खैर छोड़!'' राणा उसकी बात पर तपाक से बोला,''यह विषय से कुछ अलग की बात हो गयी। इस काल में तीन 'प' कौन-से हैं, यह मैं तुझे बताता हूँ। वे हैं-पैसा, पद और प्रतिष्ठा। हम, नौकरी करके जीनेवालों के लिए पद का मतलब पदोन्नति भी हो सकता है। और इस, पुलिस की नौकरी में, ये तीनों ही कोई दुर्लभ चीजें नहीं हैं, बशर्ते कि कोई बोझ समझकर इसे न करे। अब देख।'' अपने आसपास नजरें घुमाकर और वहाँ किसी अन्य को न पाकर उसने अपेक्षाकृत धीमे स्वर में बोलना शुरू किया,''ये जो नगदी और जेवर, मैंने यहाँ से पार किए हैं, बहुत सोच-समझकर और अपने विभाग की प्रतिष्ठा को बचाने के लिए किए हैं, न कि किसी गलत इरादे से।''

उसकी इस बात से यादव के मुख पर एक व्यंग्यपूर्ण मुस्कान तैर आई।

''गलत समझ रहा है। सुन-'' उसकी मुद्रा को पहचानकर राणा ने सफाई देना शुरू किया,''यों तो किसी घर पर डकैतों का आ धमकना और एकाध को मार भागना हमारे विभाग के लिए आम घटना है और इसे हम खास गम्भीरतापूर्वक नहीं लेते। लेकिन कुछ मामलों में छोटी से छोटी घटना भी पुलिस विभाग के लिए सिरदर्द बन जाती है। हम एक राजनीति-निर्भर समाज में रह रहे हैं। छोटे से छोटे आदमी के सिर पर आज बड़े से बड़े राजनेता का हाथ अनायास ही प्रकट हो सकता है। अब, इस डकैती को ही ले। यहाँ एक आदमी मारा गया। घरवालों के अलावा किसे पता है कि मरने वाले ने डकैतों को कुछ भी नहीं ले जाने दिया। अब, वे अगर खुद सारा माल पार कर देते तो? हमें तो वह भी ढूँढना ही पड़ता न। हम बहुत जोर लगाते तो ज़्यादा से ज़्यादा डकैतों को पकड़ लेते; लेकिन सामान को कहाँ से बरामद करते? वह तो गया ही नहीं था। लेकिन अब! अब कौड़ी हमारे हाथ में है।''

''कैसे?''

''एक बात तो तू यह गाँठ में बाँध ले कि आज के समय में दूध का धुला कोई नहीं है। मैं तेरी बात नहीं कर रहा हूँ। मेरा मतलब उन हितैषियों से है, जो इस केस में खुलकर पुलिस के खिलाफ सामने आयेंगे-पत्रकार और राजनेता। इन्हें बड़े आराम से चुप किया-कराया जा सकता है। और दुर्भाग्य से कोई एक अगर नहीं चुप हुआ और प्रेशर अगर एब्नॉर्मली बढ़ गया तो नो-प्रॉब्लम। दो-चार चिरकुटों से यह माल बरामद दिखाकर हम अपने विभाग की नाक को बचा लेंगे और अगर न बढ़ा तो।''

''बुरा न माने तो पर्सनल लेवल पर एक बात बोलूँ?''

''बोल।''

''हमने खाया, डाकुओं ने खाया या इसके घरवालों ने। यह तो इसे नहीं खा पाया न। इस साले को अपनी जान देकर क्या मिला? ले जाने देता। जान तो बचती।''

यादव की इस बात पर राणा फिर मुस्कराया। आदत के मुताबिक कुछ देर तक तो वह चुप ही रहा। फिर एकाएक गंभीर हो गया और धीरे-धीरे बोला,''जिन्हें जीना आता है, वे पैसे के लिए कभी नहीं मरते यादव। अपने मान अपनी प्रतिष्ठा के लिए मरते हैं। तू तो गीता का पाठ करता है-इतना भी नहीं समझता! यह नरसिंह डकैती के समय इसके सामने रहे होंगे-एक तो यह कि ये चाबियाँ उन्हें सौंप दे और फिलहाल मौत को टालकर जिंदगीभर इस अहसास के साथ जीता रहे कि वह बुज़दिल निकला, और दूसरा यह कि जिस तरह सिर उठाकर वह जिया है, उसी तरह मर भी जाए मगर चाबियाँ न दे। उसने दूसरा रास्ता चुना-अंतिम समय तक सिर उठाकर जीने का रास्ता। यादव, हमारे द्वारा गहने, नगदी हटा देना एक अलग हादसा है, वह कड़वे यथार्थ से जुड़ा है, लेकिन नरसिंह का मरना एक 'उत्सर्ग' है। इस 'उत्सर्ग' को समझने की कोशिश करोगे तो तहकीकात तुम्हें बोझ नहीं लगेगी, मज़ा आएगा इसमें। ऐसे आदमी का हत्यारा खुला घूमता रहे सड़कों पर, बर्दाश्त नहीं कर पाओगे कभी।''

यह कहते-कहते भावावेश के कारण उसकी आँखें सुर्ख हो आईं और यादव को वहीं छोड़कर वह दूसरी ओर को चला गया।

●

लघुकथा विशेषांक

अक्तूबर-दिसम्बर-2012 अंक

हिन्दी चेतना का अक्तूबर-दिसम्बर-2012 का अंक लघुकथा विशेषांक होगा ।

कृपया रचनाएँ टाइप करके वर्ड की फ़ाइल में 31 अगस्त तक भेजें, पीडीएफ़ या जेपीजी फ़ाइल में नहीं। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ई मेल आदि लिखा होना ज़रूरी है । स्वीकृत रचनाओं की सूचना 25 सितम्बर के बाद दी जाएगी । रचनाकार अपनी लघुकथाएँ यूनिकोड या कृतिदेव फांट में इस पते पर मेल कर सकते हैं-

laghukathausca@gmail.com

आपकी मित्र,

सुधा ओम ढींगरा

hindichetna@yahoo.ca

डाक द्वारा निम्नलिखित पते पर रचनाएँ भेजी जा सकती हैं-

भारत का पता-

सुकेश साहनी, 193 /21, सिविल लाइन्स, बरेली-243001 (उ. प्र.)

कहानी

वह एक दिन !

उमेश अग्निहोत्री

दिन के दस बजे थे । उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा – क्या रवि का फोन आया ?

पत्नी ने संक्षिप्त–सा जवाब दिया – नहीं ।

वह रसोई में स्टोव के पास खड़ी थीं । सुबह से ही कुछ पकवान बना रही थीं । स्टोव पर प्रेशर कुकर चढ़ा था, जिसमें आलू उबल रहे थे ।

वह पास ही डाइनिंग टेबल के इर्द–गिर्द चहलकदमी करते रहे । अचानक चेहरे पर टेढ़ी सी मुस्कान आयी । बोले – बैंक ऑफ मुलतान के पचास डॉलर में भी कोई आकर्षण नहीं रहा अब । यह रक़म बढ़ा कर सौ कर दो ।

रवि कभी–कभी हँसी–हँसी में अपनी सास के लिये यही संबोधन इस्तेमाल करता है, क्योंकि वह मुल्तान से थीं । और बैंक का मतलब उनकी जमा पूंजी जिसमें से कुछ लिया ही जाता था, लौटाने की शर्त न थी । इशारा उस राशि की तरफ था जो वह, दोनों बेटियों, दामादों और नातियों को उनकी सालगिरहों पर देती आयी थीं । रवि की पैंतालीसवी सालगिरह थी उस दिन ।

–मैंने फोन किया था सुबह । उसे भी और वीना को भी । आंख खुलते ही पहला काम यही किया । पहले घर के नम्बर पर फोन किया, फिर दोनों के मोबाइलों पर । न उन्होंने उठाया, न बच्चों ने । कोई जवाब नहीं । मैंने मैसेज छोड़ दिया । रवि को हैप्पी बर्थ डे कह दिया । यह भी कहा है कि शाम का क्या प्रोग्राम है, बताना ?

प्रेशर कुकर ने सातवीं–आठवीं सीटी दी तो उनकी पत्नी ने कुकर को स्टोव से उतार कर काउंटर पर रख दिया ।

वह मार्च की पहली तारीख थी। पिछले साल इन्हीं दिनों भारी बर्फबारी हुई थी । कड़ाके की ठंड थी । तब उनके न आने की वजह समझ आयी थी उन्हें । अगर आते तो यूं ही उनकी कार कहीं फंस–फंसा जाती बर्फ में । बर्फ कमर–कमर तक जम गयी थी । लेकिन आज ....?

उन्होंने खिड़की से बाहर देखा । इस बार तो मौसम साफ है । गुलाबी सर्दी है । बल्कि लगता है वसंत समय से पहले ही दस्तक दे रहा है । कोई कारण नहीं है कि आ न सकते हों ?

–कहीं व्यस्त हो गये होंगे दोनों ।

–इतवार का दिन है । कोई और दिन होता तो यह सोचा जा सकता था कि किसी काम में व्यस्त हो गये होंगे ।

–आज कल इन लोगों के वीक–एंड ज्यादा व्यस्त रहते हैं ।

–हम अपने ज़माने में पहला काम यह करते थे कि बड़ों का आशीर्वाद पहले लेते थे, फिर कुछ और करते थे ।

–मैं तो वीक–एंड पर उन्हें नहीं छेड़ती ? फोन पर आशीर्वाद–शुभकामनाएं दे दीं, काफी है । उनकी अपनी मित्र–मंडली हैं । वे उनके साथ इंजाए करें,

उमेश अग्निहोत्री

प्रसारण की दुनिया से जुड़े रहे । पहले भारत में फिर अमेरिका में । दो कहानी संग्रह– गॉड गिवन फैमिली और वाह रे हम और हमारे ग़म, मेधा बुक्स से प्रकाशित। नाटकों की एक पुस्तक प्रकाशनाधीन ।

वॉशिंगटन महानगर स्थित दो नाटक मंडलियों – प्रवासी कला मंच और वॉशिंगटन हिंदोस्तानी थियेटर के संस्थापक और नाटक निर्देशक । इमेज–इन एशियन टेलीविज़न पर 'लो कर लो बात' कार्यक्रम के प्रस्तुतकर्ता ।

uagnihot@gmail.com

या हम बूढ़ों के साथ ? अगर आ गये तो वाह वाह । मेरी तो पूरी तैयारी है ।

ग्यारह बज गये । सोचा बड़ी बेटी को फोन करें ? उससे पूछें – बीना–रवि की कुछ खबर है ? लेकिन सीमा फोन उठाये तो न । एक बजे तक उसके घर में कथक की क्लासें चलती हैं । उसकी बेटी ही फोन पर लगी रहती है सहेलियों के साथ । एक बार दिन में दो–तीन बार फोन किया तो हैरान हो कर बोली थी – नाना ! क्या आपके अपने कोई फ्रेंड नहीं हैं ?

डांटना चाहिये था उसे उस दिन कि क्या जब देखो टेलीफ़ोन कान से लगाये रहती हो । देखो तो पलट कर उन्हें ही कठघरे में खड़ा कर रही है ।

आसमान चूमती पेड़ों की नंगी लम्बी शाखों के बीच बैठा एक लाल-लाल पंखदार कार्डिनल दाएँ-बाएँ देख रहा था। पास ही कौए-सा स्टारलिंग एक डाल पर आ बैठ गया था। सर्दी हो या गर्मी यह इन्ही पेड़ों पर डोलते रहते हैं बारहों महीने, जैसे प्रवासी पक्षियों की प्रतीक्षा में। पेड़ों पर पत्ते आने में अभी बीस-पच्चीस दिन तो लगेंगे।

पैंसठ-सत्तर साल की उम्र तक एक भी मित्र नहीं बनाया आपने ? हमें ही फोन करते रहते हो ।

–हां हैं । कई मित्र हैं । पर ज़ुबान पर एक नाम ही आया – जोशी जी ।

–बस सारे शहर, बल्कि सारे अमरीका में एक ही फ्रेंड । मेरे तो दसियों हैं ।

वह खिलखिलाकर हँस दी थी । वह चुप रह गये थे । पर बाद में सीमा के यहां फोन करने से कतराने लगे थे । और अक्सर सोचने लगे थे – जोशी जी, जिनसे साल में दो – चार पार्टियों में ही मुलाक़ात, और फोन पर कभी-कभार बात होती है, क्या उन्हें मित्र कहा सकता है ?

बारह बज गये । पूरे सप्ताह प्रतीक्षा करते रहे इस दिन की । सोचा था अगर सब का कहीं बाहर चल कर कुछ खाने का मूड बने तो बाहर ही चलेंगे । सप्ताह बीत गया था, वे स्वयं भी बाहर नहीं निकले थे । एक दिन ग्रोसरी करने बाहर गये थे श्रीकृष्णा ग्रोसरी में । मैकडॉनल्ड में कॉफी भी पी आये थे, गोरे-काले- स्पेनिश-कोरियाई अजनबी चेहरों को देखते हुए । लेकिन क्या उसे बाहर जाना कहा जा सकता है ? उनका मतलब था किसी वुडलैंड या चिपोट्ले में अपनों के साथ, यानी सपरिवार, किसी अच्छे से रेस्तरां में खाना खाने जाना ।

अब किसी का फोन आये तभी तो कुछ तय हो । यूं ग्रोसरी करते हुए उन्होंने बीयर के अलावा मरलो की एक बोतल भी रख ली थी शॉपर्स से । उन्हें दामादों के साथ बैठ कर पीना अच्छा लगता है । बल्कि दामादों की कम्पनी की ख़ातिर ही पीते हैं, वरना वह कब का पीना छोड़ चुके होते ।

उनकी पत्नी आलूओं के छिलके उतारने लगीं । रवि को उनके बनाये आलू के परांठे खास पसंद थे । कई बार तो वह उन्हें सर्प्राइज़ भी देता था । अचानक उसका फोन आता था – आपके घर के पास से गुज़र रहा हूं, लंच करने आ जाऊं ? आलू-परांठे खाऊंगा ।

एक बज गया । सोचने लगे, क्या पता आज भी अचानक आने का प्रोग्राम हो उनका ! यूं उन्हे सर्प्राइज़ देने की संस्कृति पसंद नहीं है । पर यह भी है कि जब बच्चे –चाहे कम ही – अचानक आ जाते हैं तो बहुत अच्छा लगता है ।

उनका मकान एक बंद गली में था । सड़क कुछ घूम कर उनके मकान की तरफ आती थी । सड़क पर आनेवाली कारें पेड़ों और मकानों की आड़ में से एकाएक प्रकट होती थीं । पर उस इतवार सुबह से एक भी कार आती दिखायी नहीं दी थी । भूले से भी नहीं । रवि और वीना की कार ही नहीं, आस-पड़ोसियों तक की भी । बल्कि आस-पड़ोसियों की कारें, जो उनके मकानों के बाहर खड़ी होनी चाहिए थीं, वे भी ग़ायब थीं । इन अमरीकियों का भी ग़ज़ब है ? ज़रा सा मौसम खुला देखा नहीं कि कार उठाते हैं और घूमने निकल पड़ते हैं ।

वह खुद भी निकलना चाहते हैं । पर कोई फोन आये तभी कुछ तय हो ?

आसमान चूमती पेड़ों की नंगी लम्बी शाखों के बीच बैठा एक लाल-लाल पंखदार कार्डिनल दाएँ-बाएँ देख रहा था । पास ही कौए-सा स्टारलिंग एक डाल पर आ बैठ गया था । सर्दी हो या गर्मी यह इन्ही पेड़ों पर डोलते रहते हैं बारहों महीने, जैसे प्रवासी पक्षियों की प्रतीक्षा में । पेड़ों पर पत्ते आने में अभी बीस-पच्चीस दिन तो लगेंगे । वह यह सोच ही रहे थे कि टेलीफोन की घंटी ने उनका ध्यान खींचा । वह रिसीवर की तरफ लपके ।

– हैलो । आवाज रवि की ही थी । बोला – मैसेज मिला । ब्लैसिंग्स देने के लिये धन्यवाद । मेरी एक सौ पांचवीं सालगिरह है आज ।

इसका ह्यूमर भी अपने ही ढंग का है । समझने में थोड़ा समय लगता है, और जो बात करनी होती है उससे ध्यान भटक जाता है ।

– कहां हो भई सुबह से ?

– कार पर बेकार... के काम । गुड़िया रात को 'स्लीप ओवर' के लिये गयी थी सहेली के घर, उसे लेने गये थे । अभी सीमा-समीर आ गये । यह हमें वुडलैंड ले आये । यहीं बैठे हैं । महसूस कर रहा हूं कोई बादशाह होऊं ।

रवि की परवरिश अमेरिका में हुई है । हिंदी उसने फिल्मों से सीखी है । कुछ हिंदी और अमरीकी अंग्रेजी की खिचड़ी पकाता है । क्या कह रहा होता है, कई बार फौरन पल्ले नहीं पड़ता । इस समय भी उसने बात किस वाक्य से खत्म की उन्हें समझ नहीं आया ।

उनकी पत्नी ने आलुओं को मैश कर के प्लास्टिक के डिब्बे में रखा । सोचा आज नहीं तो कल या परसों जब सब आयेंगे तब इस्तेमाल हो जायेंगे । वह लिविंग रूम में आकर सोफे पर बैठ गयीं । रिमोट उठाया, और टेलीविज़न पर ज़ी टीवी का प्रोग्राम देखने लगीं । यह प्रोग्राम वह एक रात पहले भी देख चुकी थीं । प्रोग्राम देखते देखते वह सुसतानें लगीं ।

सोचने लगे यह अजीब महिला है । पुराने प्रोग्राम देख-देख के भी इसका मन नहीं ऊबता । एक सीरियल की एक पात्रा के बोलने का ढंग उन्हें बिलकुल पसंद नहीं है । कई बार कहती भी हैं – पता नहीं यह कैसे बोलती है ? फिर भी देखती ज़रूर हैं वह सीरियल । कल तक सीरियलों में उन्हें कोई लॉजिक नज़र नहीं आता था । शायद अब आदत पड़ गयी है । नीरसता में रस आने लगा है । बोरियत की हद है ।

– शाम की कोई बात ही नहीं की उसने । हद है दोनों बहनों ने अलग से प्रोग्राम बना लिया ? हमें भी बुला लिया होता ।

– उनके लिये यह कोई नई बात नहीं है । वह रोज़ ही जाते हैं ।

– इकट्ठे ?

वह बोलते रहे । लेकिन पत्नी ने कोई प्रतिक्रिया

नहीं दिखायी । या तो वह सो रही थीं, या फिर उन्हें इस विषय में कोई दिलचस्पी नहीं थी ।

उन्होंने पचास डॉलर वाली बात फिर छेड़ी ।

–सौ कर ही दो अब ।

पत्नी ने आंखें खोलीं । पर आवाज़ सोई–सोई सी । – दो सौ भी कर दूं तो भी अंतर पड़नेवाला नहीं है । परमात्मा की कृपा से चारों आई–टी में हैं, अच्छा कमाते हैं । पचास – सौ तो रेस्तराओं में यूं ही फूंक देते हैं । मेरे पचास की क्या गिनती । जब मिलेंगे तब दे दूंगी ।

वह टेलीविज़न देखती रहीं । कभी आंखें खोलतीं, कभी मूंद लेतीं । उन्हें याद आया कि उनकी पत्नी और रवि के बीच पचास डॉलरों को लेकर मज़ाक भी चलता है । एक बार बोलीं थीं – बैंक ऑफ मुलतान कहते हो, तुम्हें पता है इनका और मेरा ज्वांइट एकाउंट है ।

– लेकिन कंट्रोल तो आपके पास ...?

वह पचास ले लेने के बाद ज़िद करता है – एक दस का और । उनकी पत्नी भी हंसी करती हैं – दस ! मेरे पचास इक्यावन नहीं होंगे । लेकिन वह भी एक ही शरारती है । कहता है अच्छा ...नहीं दो एक भी । चलिये यह दस वाला पुराना ले लो, दीजिये नया वाला । क्या बैंक के पास एक नया नोट भी नहीं ? बैंक फ़ेल हो गया ?

– वर्ल्ड बैंक फ़ेल हो जाये पर यह कभी फ़ेल नहीं होगा । कभी आज़मा कर देख लेना ।

होंठों पर हल्की सी मुस्कान आयी, पर वह दांतों में भिंच के रह गयी ।

दोनों के बीच यह संवाद वह कई बार सुन चुके हैं । आज वह भी नहीं ।

चार बजे के करीब फिर फोन की घंटी बजी । अब किस का हो सकता है ? इस बार फोन पर जोशी जी थे । हाय – हैलो फिर इधर – उधर की बातें करने लगे – क्या आप आप्टे को जानते हैं ?

– कौन आप्टे ? हां–हां, कुछ याद आ रहा है । पर लगभग पंद्रह–बीस बरस से कोई कॉन्टेक्ट नहीं है ।

– उसकी बेटी का देहांत हो गया ।

– सच । ओह सुन कर दुख हुआ । हुआ क्या था ?

– पूरी तरह मुझे भी नहीं मालूम । किसी मनोरोग अस्पताल मे थी । जन्म से ... ।

–ओहो ।

– आज साढ़े पांच बजे उसका अंतिम संस्कार है । पोप फ्यूनरल होम में ।

फोन पर बात खत्म हो जाने के बाद वह अपनी पत्नी से पूछते रहे कि क्या आप्टे की कोई बेटी भी थी ? आप्टे के तो दो बेटे थे शायद ? उनकी पत्नी को आप्टे की शक्ल तक याद नहीं आ रही थी । यह तक याद नहीं आ रहा था कि आप्टे की पत्नी और बच्चों को वह कब और कहां मिली थीं ।

साढ़े चार बज गये । जो परिंदे कुछ देर पहले पेड़ों पर बैठे दिखायी दिये थे, वे वहां नहीं थे । टहनियां बहुत खाली–खाली लग रही थीं। खाली और फीकी । वह बोले – आप्टे की बेटी की अंत्येष्टि पर चलें ।

उनकी पत्नीं ने आंखे खोलीं । उठीं ।

और वह दोनों फ्यूनरल होम जाने के लिये तैयार होने लगे ।

कहानी

कोमा

श्याम सखा 'श्याम'

डाक्टर कह रहा था, सॉरी मिसिज मलकानी, आपके पति मि. मलकानी के दोनों गुर्दे खराब हो गए हैं। वे अपना कार्य पूर्णतया छोड़ चुके हैं। इस वजह से उनके रक्त में इतना टाक्सिक पदार्थ इकठ्ठा हो गया है कि वे कोमा से बाहर नहीं आ पा रहे हैं। डायलिसिस के बावजूद उनके रक्त में यूरिया की मात्रा प्रतिपल बढ़ रही है। अब तो एकमात्र उपाय गुर्दों का प्रत्यारोपण है।

पत्नी के चेहरे पर अवसाद व चिन्ता के बादल छा रहे हैं। वह मुड़कर मेरे मृतप्राय: शरीर को देखती है जिसमें अनेक नलियाँ घुसेड़ दी गई हैं।

डाक्टर चले गए। पत्नी बिटुर-बिटुर कर मुझे देख रही है। मैं उसका कष्ट समझता हूँ। मुझे सब सुन रहा है। मेरा मस्तिष्क भी काम कर रहा है, पर मैं बोल नहीं सकता। हिल-डुल नहीं सकता, शायद सारी मांसपेशियाँ निष्क्रिय हो गई हैं। मैं हाथ से हिलाकर सन्देश देना चाहता हूँ। कभी आँख से इशारा करना चाहता हूँ पर कुछ नहीं कर पाता।

अब फिर मेरी विचारधारा कोमा की तरफ मुड़ती है। मैंने अनेक मरीज़ देखे हैं कोमा के। इलाज भी किया है। इसी विभाग का योग्य डाक्टर रहा हूँ, कोमा में जाने से पहले। सर्विस रिकार्ड में तो अब भी हूँ शायद। कल सब-कुछ खत्म हो जाएगा।

क्या कोमा में सभी व्यक्तियों का यही हाल होता है? माने जो हम चिकित्सक समझते-सोचते आए थे, कोमा वह नहीं है। कोमा में मस्तिष्क पूरा का पूरा काम करता है, आँखें देखती हैं थोड़ा धुँधला दृश्य नज़र आता है। कान सुनते हैं क्योंकि सोचने-देखने तथा सुनने में मांसपेशियों को विशेष कार्य नहीं करना होता। सोचने में तो कतई नहीं। हे राम ! फिर तो कोमा बड़ा भयानक होता है। मैं सोचता हूँ, तिल-तिल कर मरना शायद कोमा का दूसरा नाम है।

मैं स्वयं एक डाक्टर हूँ। कोमा यूनिट में जाने कितने मरीज़ों का इलाज कर चुका हूँ। पर अब तक हमारी धारणा, माने डाक्टरों की धारणा, यही रही है कि कोमा में सारी इन्द्रियां शिथिल हो जाती हैं। परन्तु यह मेरे साथ क्या हो रहा है? मुझे सब-कुछ सुन रहा है। यहाँ तक कि देख-पहचान भी सकता हूँ। सोच भी सकता हूँ। पर यह सब-कुछ तो बहुत भयानक है। चाहे कुछ प्रतिशत में ऐसा होता हो, पर वाकई भयावह स्थिति है।

कमरे का दरवाज़ा खुलता है। पत्नी का भाई सुनील जो एयर इण्डिया में है आकर कुर्सी पर बैठ जाता है। पत्नी दूसरी कुर्सी पर बैठी है। वह एक उचटती-सी हिकारत भरी नज़र मुझ पर फेंकता है। मेरी पत्नी के इस भाई ने मुझे जीजा के रूप में कभी नहीं कबूला, क्योंकि मेरा और पत्नी का प्रेम विवाह था। वह मेरी कविताओं की दीवानी थी। पर मैं सिन्धी था तथा वे लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण । सुनील के मन में मेरे प्रति अव्यक्त निरादर रहा है। वह मुझे और हमारे रिश्ते को, यहां तक की मेरी मौजूदगी को भी नकारता रहा है।

सुनील मेरी पत्नी प्रमिला से कहता है 'गुर्दे कहाँ से मिलेंगे ? कौन देगा ? इस कमबख्त का तो कोई सगा भी नहीं'। मैं अनाथ था तथा एक सिन्धी ट्रस्ट ने मुझे पढ़ाया था। मैं सोचता हूँ, पत्नी उसे डाँटेगी जैसा कि पहले कई बार कर चुकी है। परन्तु पत्नी भी चुप है, शायद असीम दु:ख से, या फिर क्या कहूँ या फिर शायद उसे मेरा-उसका रिश्ता समाप्त होता लगता है। ऐसे में भाई से भी क्यों बिगाड़े?

"भैया, क्या गुर्दा कहीं से मोल नहीं मिल सकता?" वह कहती है। मुझे अच्छा लगता है। पत्नी अभी रो रही है। मेरी चिन्ता है, उसे।

मिल सकता है। पर दो ढाई-लाख रुपए लेगा गुर्दा दान करने वाला। फिर सौ झमेले, किसी को पता लग गया तो। आपरेशन का खर्चा, अस्पताल का खर्चा, अस्पताल के बाद गुरदे को परित्यक्त होने से बचाने के लिए दो-तीन साल महँगी दवाइयाँ। सब मिलाकर लगभग दस लाख। कहाँ से लाओगी इतना रुपया ? अभी तक भी ढाई-तीन लाख खर्च हो चुका है और फिर गारन्टी कहाँ है कि यह बच जाएगा। तुमने तो इसके बहकावे में आकर नौकरी भी नहीं की। सुनील कोई मौका नहीं छोड़ता, मुझे नीचा दिखाने का । मुझे गुस्सा चढ़ आया है। पर सब बेकार, मैं भला गुस्सा कैसे दर्शाऊँ ?

"फ्लैट बेचने से नहीं चलेगा", पत्नी मरी आवाज़ से कहती है। मुझे भला लगता है। कितना मिलेगा ? साढ़े तीन लाख, फिर तुम सड़क पर रहोगी। और तुम उसे बेच भी नहीं सकती । जब तक यह जिन्दा है क्योंकि नाम तो इसी के है, ना।

फिर दोनों चुप हो जाते हैं । मेरे कान उधर ही लगे हैं। अब न केवल मेरा धुंधलापन बढ़ गया है बल्कि आवाज़ भी दूर से आती हुई लगती है, जैसे किसी कुंए में से।

पत्नी फिर कहती है भैया कुछ तो करना पड़ेगा। ऐसे तो नहीं छोड़ा जा सकता इनको। पर उसकी आवाज़ में दम नहीं है। ऐसा लगता है कि यथार्थ उसे भी दिखने लगा है।

"देखो ! तुम तक़दीर से जीत नहीं सकती। हमसे, अपने परिवार से तो तुमने मनमानी कर ली इससे विवाह करके, पर तक़दीर.......... वह बीच में चुप हो जाता है । नर्स आकर मेनीटोल की बोतल बदल देती है और चली जाती है।

हम मध्य वर्गीय लोग कितने कायर होते हैं, कितने कैलकुलेटिंग ! प्राप्त सुख सुविधाओं को छोड़ने का साहस हम में उतना नहीं होता जितना गरीबों में होता है। शायद मैं प्रमिला की जगह होता तो यही करता। मेरे चेहरे पर तो क्या है पता नहीं, मेरे भीतर यह बीभत्स सत्य मुझे अट्टहास करने पर मजबूर कर रहा था। मेरा अन्तस-फराज़ अहमद की पंक्तियाँ गुनगुना रहा है-
ढूँढता कहाँ है तू वफ़ा के मोती
यह खज़ाने शायद ख्वाबों में मिलें।

सुनील फिर कहता है, ''इसने कोई बीमा भी करवा रखा है या नहीं।

पत्नी चुप रहती है। मैं तड़फ उठता हूँ। वह इसे धमकाती क्यों नहीं? कैसी पतिव्रता नारी है ? क्या यह वही है जिसने इन सबसे लड़कर मुझसे विवाह रचाया था।

डाक्टर फिर कमरे में आता है। पूछता है, फिर क्या फैसला किया ?'' सुनील से पहले पत्नी बोलती है 'डाक्टर गुर्दे प्रत्यारोपण के बाद इनके बचने की कितनी उम्मीद है ?'

मेरी उम्मीद जवाँ हो जाती है। शायद प्रमिला ने फिर फैसला कर लिया। भाई की दलीलों के ख़िलाफ वह सब-कुछ बेचकर मेरा इलाज करवाएगी।

'फिफ्टी-फिफ्टी मिसिज मलकानी', डाक्टर कहता है।

'तब तो आप ऐसे ही कोशिश करके देखें, क्योंकि गुरदा देने वाला तो कोई है नहीं।'

मैं सकते में हूँ। मुझे सहसा याद आता है कि हमारे मेडिकल कॉलेज हॉस्टल के बाहर खोखे वाला मनोहर। उसकी पत्नी को कैंसर हो गया था। निदान भी बड़ी देर से हुआ था। लगभग आखिरी स्टेज थी। उसने उसे अस्पताल में दाखिल करवाया था। डाक्टर के साफ़ जवाब देने के बावजूद भी वह दिलेरी से कहता रहा ''जनाब आप कोशिश तो कीजिए जो होगा देखा जाएगा। इसको भाँवर डालकर लाया था तो वचन दिया था पण्डित, जात-बिरादरी तथा अग्नि के सामने, कि इसका पूरा ख्याल रखूँगा।'' मनोहर की पत्नी का रोग काबू नहीं आ रहा था। कीमती कीमो थेरेपी में मनोहर ने पहले अपना पुराना स्कूटर, फिर खोखा, फिर शहर के बाहर बना कोठरीनुमा घर बेच दिया था। फिर रिश्ते-नाते, यार-दोस्तों, यहाँ तक कि हम विद्यार्थियों से कर्ज लेकर इलाज करवाता रहा। उसकी पत्नी दस दिन कोमा में रही। वह रात-दिन उसके सिरहाने बैठा कहता रहता ''रामरती घबराना नहीं तुम ठीक हो जाओगी। मैंने माता की मन्नत मांगी है, मन्नत कभी बेकार नहीं जाती।'' मैं भी रामरती को देखने गया था। संयोग से जब उसने आखिरी साँस ली तो मैं वहीं था। उसके पीले जर्द चेहरे को मनोहर ने अपनी गोद में ले रखा था। रामरती की साँसें उखड़ रही थीं। पर उसके नीले पड़ते होठों पर एक मुस्कान थी। मनोहर उसका माथा सहलाता हुआ कहता जा रहा था कि ''घबराओ नहीं रामरती'' और रामरती बिना घबराए चली गई। शायद कोमा में भी उसे अपने महबूब के प्यार का सहारा था, भरोसा था।

सुनील और प्रमिला की आवाज़ अब मुझे अस्पष्ट लग रही थी। हम मध्य वर्गीय लोग कितने कायर होते हैं, कितने कैलकुलेटिंग ! प्राप्त सुख सुविधाओं को छोड़ने का साहस हम में उतना नहीं होता जितना गरीबों में होता है। शायद मैं प्रमिला की जगह होता तो यही करता। मेरे चेहरे पर तो क्या है पता नहीं, मेरे भीतर यह बीभत्स सत्य मुझे अट्टहास करने पर मजबूर कर रहा था। मेरा अन्तस-फराज़ अहमद की पंक्तियाँ गुनगुना रहा है-

ढूँढता कहाँ है तू वफ़ा के मोती
यह खज़ाने शायद खवाबों में मिलें।

मेरी कड़वाहट धीरे-धीरे शून्य में विलीन हो रही थी। मुझे अनन्त निद्रा के आने की आहट सुन रही है। ऐ दोस्तो, रकीबों, मेरा सलाम अलविदा, दुआ करना मुझे दोबारा वहाँ जन्म मिले जहाँ सरसों के तेल का दिया टिमटिमाता हो। जहाँ हवा बेरोक-टोक आती हो। जहाँ पिता के बदन से पसीना सूखता ही न हो। जहाँ माँ के आंचल के अलावा कुछ नहीं हो। और कुछ नहीं तो मुझे मनोहर और रामरती में से एक बना देना। पर डाक्टर मलकानी नहीं, अलविदा।

●

श्याम सखा 'श्याम'

जन्मः 28 अगस्त 1948, रोहतक

शिक्षाः M.B;B.S. FCGP

कृतियांः अंग्रेज़ी, हिन्दी, पंजाबी व हरियाणवी में कुल प्रकाशित 18, चार उपन्यास, चार कहानी संग्रह, पाँच कविता, एक दोहा सतसई, दो ग़ज़ल संग्रह।

अंग्रेज़ी उपन्यास strongwomen@wndheaven.com (शीघ्र प्रकाश्य)

सम्पादनः मसि-कागद (साहित्यिक त्रैमासिकी 11 वर्ष)

सम्मानः लोक साहित्य व लोक कला का सर्वोच सम्मान पं. लखमीचंद सम्मान (हरियाणा साहित्य अकादमी)। विभिन्न अकादमियों द्वारा 5 पुस्तकें (अकथ, घणी गई थोड़ी रही (कथा संग्रह), समझणिये की मर (हरियाणवी उपन्यास), कोई फायदा नहीं (हिन्दी उपन्यास), इक सी बेला (पंजाबी कहानी संग्रह) तथा हिन्दी एवं पंजाबी की 10 कहानियाँ भी पुरस्कृत। राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राज्यों की संस्थाओं द्वारा अनेक सम्मानों से अलंकृत।

विशेषः एक उपन्यास कुरुक्षेत्र विश्वविद्यलाय के हिन्दी एम.ए. (फाइनल) के पाठ्यक्रम में। रचना कर्म पर पीएच.डी. व 4 एम.फिल शोध कार्य सम्पन्न।

संप्रतिः निदेशक, हरियाणा साहित्य अकादमी

संपर्कः अकादमी भवन, पी-16, सेक्टर- 14, पंचकूला- 134113 (हरियाणा)

ईमेलः shyamskha1973@gmail.com

घुमन्तू भाषः 09416359019

Beacon Signs 1985 Inc.

7040 Torbram Rd. Unit # 4, Mississauga, ONT. L4T 3Z4

Specializing In:

Illuminated Signs awning & pylons

Channel & Neon letters

Banners

Architectural signs

VEHICLE GRAPHICS

Engraving

Silk screen

Design Services

Precision CNC cutout plastic, wood & metal letters & logos

Large format full Colour imaging System

SALES – SERVICE - RENTALS

Manjit Dubey

दुबे परिवार की ओर से हिन्दी चेतना को बहुत बहुत शुभकामनायें

Tel: (905) 678-2859 Fax: (905) 678-1271

E-mail: beaconsigns@bellnet.ca

व्यंग्य

यहाँ रिश्वत देना मना है

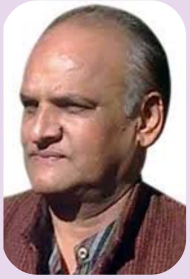

गिरीश पंकज

बोर्ड पर साफ-साफ लिखा था: 'यहाँ रिश्वत देना मना है'।

पढ़कर चौक पड़ा। ये क्या माज़रा है भाई? कहीं सपना-वपना तो नहीं देख रहा । फ़ौरन से पेश्तर खुद की चिकोटी काटी । दर्द हुआ, तो कन्फर्म हो गया कि मैं सपना नहीं देख रहा । तो फिर ये रिश्वत-विरोधी तख्ती क्यों? पहले तो लोग बड़े 'सभ्य' थे। 'संस्कारित' थे। अचानक कैसे 'बिगड़' गए? ये कैसी बहकी-बहकी बतिया कर रहे हैं भाई लोग? रिश्वत देना मना है? क्या घोड़ा घास से यारी कर लेगा? अरे, ऐसा हुई गवा तो फिर खाएगा क्या ?

दफ्तर के कम्प्यूटर पर रमी खेल रहे बड़े बाबू से मैंने पूछा- ''ये क्या माज़रा है? पहले तो आप ऐसे न थे। मगर अब ऐसे कैसे हो गए? अचानक मती मारी गई? बात क्या है ? 'रिश्वत लेना मना है' का बोर्ड लटका लिया है। अब मेरा क्या होगा कालिया?''

''सरकार हमने आपसे हमेशा रिश्वत खाई है। आपका काम होगा, ज़रूर होगा।''

''लेकिन तुम लोग बिना रिश्वत डकारे तो कोई काम ही नहीं करते। मगर ये देखो, रिश्वतविरोधी बोर्ड।''

मेरे इशारे पर बाबू हँस पड़ा। फिर उसने दूसरी तरफ दिखाया, जहाँ लिखा था - 'यहाँ थूकना मना है।' मैंने देखा वह स्थान थूक से भरा पड़ा था। पान-तम्बाखू आदि-आदि से माडर्न आर्ट बना हुआ था ।

बाबू ने तीसरी तरफ दिखाया- ''सिगरेट पीना मना है।''

मैंने देखा वहाँ बैठे दो-चार लोग बड़े मजे से सिगरेट-बीड़ी पी रहे थे। फिर बाबू ने मुझे चौथी तरफ दिखाया। वहाँ लिखा था - ''यहाँ सोना मना है।' ठीक उसके नीचे एक बाबू ऊँघ रहा था।

बाबू का मन नहीं भरा । वह उठा, मुझे बाहर ले आया, फिर बोला - ''वो देखो, वहाँ क्या लिखा है ?''

मैंने देखा, लिखा था- 'नो पार्किंग। यहाँ स्कूटर, सायकल रखना सख्त मना है।'

वहाँ ढेरों स्कूटर, सायकलें खड़ी हुई बोर्ड को मुँह चिढ़ा रही थी।

बाबू मुस्कराते हुए बोला - ''कुछ समझे कि नहीं समझे ?''

मैंने मुसकराते हुए कहा - ''कुछ-कुछ समझ रहा हूँ अब ।''

बाबू बोला- ''तो भाई मेरे, ये बापू का देश है। लोगों को जिस काम के लिए मना करेंगे, वही काम लोग बढ़-चढ़कर करेंगे। तो बन्धु, आप बोर्ड की तरफ तनिक भी ध्यान न दें और अपना कर्तव्य निभाएँ और मुझे आपका काम करने के लिए फ़ौरन 'प्रेरित' करें। आपकी जेब में जो गाँधी जी का बहुरंगी चित्र है, उसे बाहर निकालें । ''

''लेकिन बोर्ड के नीचे ही बैठ कर रिश्वत देना-लेना पाप नहीं लगता ?''

मेरी बात सुन कर बाबू ज़ोरदार तरीके से हँसा - ''ये पाप है क्या, ये पुण्य है क्या दोनों पर धर्म की मुहरें हैं'। आज सड़कों पर लिखे हैं, सैकड़ों नारे न देख। बाजार की महँगाई न देख। नैतिकता के तारे न देख।''

बाबू ने दुष्यंत के शेर की अंत्येष्टि करते हुए गर्व से समझाया - 'देखिए, सिगरेट के पैकेट पर लिखा रहता है न कि 'सिगरेट पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है', फिर भी लोग पीते हैं कि

नहीं? दूध के डिब्बों पर लिखा रहता है कि माँ का दूध ही सर्वश्रेष्ठ है, फिर भी लोग डब्बाबंद दूध पिलाते हैं कि नहीं ? सरकारी संपत्ति आपकी अपनी है, लेकिन लोगबाग उस संपत्ति के साथ परायों की तरह बर्ताव करते हैं कि नहीं ? अरे बाबा, कित्ते उदाहरण दूँ कि जो लिखा जा रहा है, उसके खिलाफ करना ही हमारी राष्ट्रीय -संस्कृति बन गई है और आप अब तक इसी धर्म-संकट पर अटके हुए हैं कि बोर्ड पर अटके हैं कि लिखा है, रिश्वत न दें। अरे, लिखा है तो लिखा है, अपनी बला से। आप तो बापूजी का नाम लेकर निकालो रकम और अपनी ठहरी हुई फाइल को आगे बढ़वाओ।''

बाबू के लंबे-चौड़े भाषण से मेरी उफनती हुई नैतिकता की नदी शांत हुई। मैंने जेब में हाथ डाले। तभी कहीं से आवाज आई ''अरे, ये क्या कर रहा है पागल ?''

''रिश्वत देने की तैयारी।''

''बोर्ड देखता नहीं, लिखा है, यहाँ रिश्वत न दें।''

''तो क्या हुआ,लिखे हुए का पालन कौन करता है ? कोई नहीं करता, तो मैं क्यों करूँ ?''

''इसी में तो देश बर्बाद है। 'कोई नहीं करता तो मैं क्यों करूँ' की जगह तुम ये क्यों नहीं सोचते कि कोई नहीं करता इसलिये मैं करूँगा ?''

आवाज आ रही थी लेकिन कहाँ से, पहले तो समझ ही न पाया। बाद में दिमाग की ट्यूबलाइट जली : अरे, ये तो मेरी अंतरात्मा है। ओह, तो ससुरी आत्मा थी ये। अक्सर यह आत्मा गड़बड़ कर देती है। जैसे ही कोई गलत काम करो, फ़ौरन सामने आ जाती है।

आत्मा बोली- ''ठीक है यहाँ नियम-कानून-निर्देश टूटने के लिए ही बनते हैं, लेकिन दो-चार लोग तो ऐसे बनें जो इनका पालन करें।''

मुझे लगा अंतरात्मा ठीक कह रही है। मैंने बाबू को देखा, फिर बोर्ड को: अक्षर साफ-साफ चमक रहे थे- ''रिश्वत देना मना है।''

मैंने जेब के भीतर घुसे हाथ को बाहर निकाल लिया और कहा - ''अच्छा, तो हम चलते हैं।''

बाबू ने मुसकराते हुए पूछा-''फिर कब मिलोगे?''

मैं बिना उत्तर दिए लौट आया । लेकिन यही सोच सोच कर 'टेन्शनाये' जा रहा था कि बिन रिश्वत के मेरा काम कैसे होगा? ऐसे कोई निर्देश कब आएँगे कि रिश्वत माँगने वाले को कड़ी सजा मिलेगी। लेन-देन वाले दोनों दंडित होंगे। खैर, ये दौर जब आएगा तब आएगा। फिलहाल तो मैंने नियम का पालन किया है। कल की कल देखी जाएगी। कीचड़ वाले रास्तों पर जितना दूर चल सके उतना काफी। लेकिन मैं यह भी जनता था कि कल मुझे फिर आना पडेगा. आज जा रहा हूँ तो क्या हुआ. लौट के बुद्धुओं को 'घर' आना ही पड़ता है । जाते-जाते मुझे अपना पुराना दोहा याद आ गया, ''पंकज रिश्वत राखिये, बिन रिश्वत सब सून, बिन इसके न काम करे, 'बॉस', 'क्लर्क' अरु 'प्यून' ।''

girishpankaj1@gmail.com

दृष्टिकोण

हिन्दी चेतना: एक समग्रतावादी पत्रिका

मनोज श्रीवास्तव

आज हिन्दी साहित्य की पत्रिकाओं की भीड़ में साहित्य के रसिया पाठक घिसी-पिटी परंपराओं से हटकर कोई नई लीक, कुछ नई बातें, पुनरावृत्तियों से हटकर कतिपय नव-प्रयोगों की तलाश में भटकते-से नज़र आ रहे हैं। उनके भटकाव पर विराम लगाने के लिए पत्रिकाओं के प्रकाशक-संपादक भी उनके लिए सुरुचिपूर्ण पाठ्य सामग्री परोसने के लिए एड़ी-चोटी की कोशिश में लगे हुए हैं...और इसका सुपरिणाम साक्षात सामने दिखाई दे रहा है! अर्थात विशेषांक पत्रिकाओं का हुज़ूम उमड़ पड़ा है। युवा लेखन, नवलेखन, आधी दुनिया/महिला लेखन, दलित साहित्य, प्रेम, ग्रामीण जीवन आदि जैसी थीम को केंद्र में रखकर, पत्रिकाओं के लोकप्रिय विशेषांक ऐसे लोगों द्वारा भी पढ़े जा रहे हैं जिनका मन या तो साहित्य के अनुशीलन से बहुत पहले उचट गया था या जिनका साहित्य से ज़्यादा कुछ वास्ता नहीं था। आश्चर्य तो तब होता है जबकि ख़ासतौर से भारतीय पाठकों के हाथ में कोई ऐसी पत्रिका नज़र आती है जिसका प्रकाशन किसी समुद्रपारीय देश से हुआ होता है। इससे एक सच तो प्रतिपादित होता ही है कि हिन्दी और इसके साहित्य का परास सार्वभौमिक होता जा रहा है और हिन्दी सभी प्रकार के भौगोलिक उच्चावचों, भाषाई द्वेष और साहित्यिक अहं को लांघकर अपनी अस्मिता को सर्व-स्वीकार्यता के मानदंड पर वैश्विक स्तर पर स्थापित करने के लिए आतुर हो रही है।

नि:संदेह! मेरा सहज संकेत त्रैमासिक आधार पर प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'हिन्दी चेतना' की ओर है, जिसका एक हिन्दीतर ज़मीन से निर्बाध प्रकाशन गत १३ वर्षों से हो रहा है और जिसने विदेशों में लिखे जा रहे हिन्दी साहित्य को बड़ी शिद्दत और करीने से विश्व के समक्ष परोसने की श्लाघ्य कोशिश की है । जैसा कि इस पत्रिका के नाम से ही विदित है, इसका लक्ष्य हिन्दी की चेतना को सार्वत्रिक आधार पर उद्भूत करना है, इस सच से विमुख नहीं हुआ जा सकता कि इसके प्रकाशन-संपादन में दत्तचित्त स्वयं-स्फूर्त प्रकाशक-संपादक टीम के हौसले बुलंद हैं । वह, हिंदुस्तान की सर-ज़मीं से प्रकाशित होने वाली नामी-गिरामी पत्रिकाओं को बखूबी पछाड़ते हुए, विविधता के आधार पर सुरुचिपूर्ण पाठ्य सामग्री प्रस्तुत करने का मात्रा रखती है । इतना ही नहीं, दर्जनों विशेषांक निकालकर, 'हिन्दी चेतना' की टीम ने यह साबित कर दिया है कि भारत से दूर रहकर भी विशेषतया भारतीय हस्तियों के बाबत ऐसे विशेषांक निकाले जा सकते हैं जिनकी चर्चा न केवल लोकप्रिय साहित्यिक गलियारों में होती है अपितु पाठकीय स्तर पर भी उसे मुक्त कंठ से सराहा जाता है।

'हिन्दी चेतना' के मुख्य संपादक श्री श्याम त्रिपाठी और संपादक डॉ. सुधा ओम ढींगरा के अपराजेय मनोबल को रेखांकित करने वाले अधोलिखित शब्द मानस में सर्वथा-सर्वदा गुंजायमान होते रहेंगे:-

"हिन्दी चेतना ने हिन्दी साहित्य कोश को कई विशेषांकों से समृद्ध किया है, जिनमें उल्लेखनीय हैं डॉ. हरिवंश राय बच्चन, यशपाल, महाकवि प्रो. हरिशंकर आदेश, पंडित चंद्रशेखर पाण्डेय, डॉ. नरेंद्र कोहली, डॉ. कामिल बुल्के, मदन मोहन मालवीय आदि। इनका भरपूर स्वागत हुआ है और पाठकों तथा आलोचकों की सराहना मिली है...।"

अब तक प्रकाशित ५२ अंकों में से अंतिम ५१वें और ५२वें अंकों पर गंभीरता से विचार करें तो पत्रिका के दो रूपों से साक्षात्कार होता है; अर्थात, ५१वां अंक इसके नियमित और पारंपरिक स्वरूप को रूपायित करता है जबकि ५२वां अंक, जो सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार प्रेम जनमेजय पर केंद्रित है, पत्रिका की टीम के उस विशिष्ट दृष्टिकोण को निरूपित करता है जिसके अनुसार एक विशेषांक को निखरे-संवरे रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए । दोनों पत्रिकाओं में एक बात अभीष्ट है कि इनमें रचनाओं और लेखों की स्तरीयता को बनाए रखने के लिए उनके लेखकों के बजाय, उनकी उत्कृष्टता पर ख़ास ध्यान दिया गया है। एक उम्दा गुट-निरपेक्ष और गैर-राजनीतिक पत्रिका की यही महत्त्वपूर्ण विशेषता है जिसकी कसौटी पर दोनों अंक खरे उतरते हैं। पत्रिका का यही उद्देश्य डॉ. ढींगरा के उवाच में परिलक्षित होता है:-

'हिन्दी चेतना' की टीम किसी वाद-विवाद, राजनीति या गुटबंदी, विचारधारा व विमर्श से परे होकर स्वतंत्र सोच और विचार से कार्य करती है।"

बेशक! 'हिन्दी चेतना' की यही विशिष्टता भारत से प्रकाशित 'हंस', 'वर्तमान साहित्य', 'वागर्थ', 'परिकथा', 'लमही', 'समकालीन भारतीय साहित्य', 'नया ज्ञानोदय' आदि जैसी लोकप्रिय पत्रिकाओं से बिल्कुल अलग प्रतिष्ठित करती है।

पत्रिका का ५१वां अंक हिन्दी साहित्य के प्रवासी रचनाकारों के लेखन-कौशल्य से रू-ब-रू कराता है और उनमें मुखरित हिंदी और हिंदुस्तानी संस्कृति के प्रति अविलगेय प्रेम की व्यग्र सुगबुगाहट के प्रति हमें आगाह करता है। इस अंक में डॉ.सुधा ओम ढींगरा समेत, प्राय: दर्जन-भर प्रवासी रचनाकार हैं जिन्होंने लेख, कहानी, लघुकथा, ग़ज़ल, कविता, बालकथा आदि के ज़रिए अपनी सिद्धहस्त रचनात्मक क्षमता का परिचय दिया है। जबकि कनाडा के लेखक प्रदीप कुमार भारतीय दर्शन में चतुष्टय आश्रम व्यवस्था के माध्यम से सामाजिक वर्गीकरण की संक्षिप्त किंतु तार्किक व्याख्या करते हैं, ब्रिटेन की ज़कीया ज़ुबैरी की कहानी 'कच्चा गोश्त' भारतीय परिवेश में शोषण-चक्र की एक हृदय-विदारक गाथा है, जिसमें मदनमोहन की सरपंच बृजबिहारी के प्रति अंधी स्वामिभक्ति सदियों पुरानी प्रचलित दास-प्रथा की ओर हमारा ध्यानआकृष्ट करती है। कहानी पढ़कर प्रेमचंद्रीय युग की स्मृति तरोताज़ा हो जाती है । आधुनिक समाज में बृजबिहारी जैसे कुटिल पात्र की हर गांव-मोहल्ले में उपस्थिति से इन्कार नहीं किया जा सकता है। लेखिका, यत्र-तत्र भाषागत कमियों के बावज़ूद, चित्रोपम चित्रण के जरिए, पुष्ट कथानक बुनने में चूक नहीं करती है । डेनिश लेखिका

अर्चना पैन्यूली की अगली कहानी 'केतलीना' केतलीना के स्त्री-सुलभ मनोविज्ञान की मर्मस्पर्शीय तस्वीर खींचने के अलावा दो देशों अर्थात पुर्तगाल और भारत की संस्कृतियों के बीच द्वंद्वात्मक संबंधों की दिलचस्प विवेचना करती है, जिसमें विवाह-पूर्व संबंधों के कारण पैदा हुई केतलीना बड़ी होकर द्वंद्वात्मक भावनाओं के बीच अपने भारतीय पिता की भौतिक अनुपस्थिति में, उनकी संपत्ति और पितृत्व पर कानूनी हक़ जमाने पहली बार दिल्ली जाती है; किंतु, उसे किसी दावे के बिना आत्मीय रिश्तों के ऐसे सुकून और पहचान देने वाले लोग मिलते हैं कि वह कृतज्ञता से अभिभूत हो जाती है। यहाँ लेखिका भारतीय संस्कृति की उदारता और उदात्तता को बेझिझक रेखांकित करते हुए यह प्रतिपादित करती है कि विश्व में व्यष्टिवाद के विकराल थपेड़ों से भी भारत के समष्टिवाद का कुछ भी बाल बाँका होने वाला नहीं है। भारतीय समष्टिवाद जो भी मानवीय और मानवानुकूल है, उसे आत्मसात करने के लिए सदैव तैयार रहता है। तभी तो अमरीका के दार्शनिक-कवि राल्फ़ वाल्डो एमरसन भारतीय दर्शन से अभिभूत होकर कहते हैंकि 'पश्चिम का व्यक्तिवाद एक छलावा है।' (Individualism is a delusion.)

हिन्दी चेतना के इसी अंक में प्रवासी लेखन के क्रम में अगली लेखिका डॉ. सुधा ओम ढींगरा आती हैं जिन्होंने अपनी सूक्ष्म, व्यापक और खोजी दृष्टि के ज़रिए विशेषतया अमरीका में प्रवासी लेखकों के हिंदी साहित्य में उल्लेखनीय हस्तक्षेप की विशद चर्चा की है. नि:संदेह! उन्होंने अमरीका में हिन्दी कथा लेखन के बारे में इतना विस्तृत विवरण देकर उस खाली स्थान को भरने की सफल कोशिश की है जिसे कोई भारतीय लेखक, शोधकर्ता या समीक्षक इतनी सुगमता से नहीं भर पाता या उनके द्वारा दी गई जानकारी के अभाव में हिंदी का पाठक अब तक अँधेरे में होता । उन्होंने अमरीका में हिंदी कथा-साहित्य की शुरुआत साठ के दशक में त्रिवेणी लेखिकाओं-उषा प्रियंवदा, सोमा वीरा और सुनीता जैन-द्वारा माना है । अस्तु, अमरीका के प्रवासी हिंदी लेखकों की कालानुक्रम आधार पर जो लम्बी फेहरिस्त उन्होंने सामने रखी है, वह बेशक !उनके गहन अनुशीलन का परिचायक है । लेखकों के कथा-साहित्य, जिसमें कहानियों के अतिरिक्त उपन्यास भी शामिल हैं, का बाकायदा ब्यौरा देते हुए देशकाल, उद्देश्य एवं कथानक आदि का स्वाभाविक, संक्षिप्त और सारगर्भित वर्णन किया है और प्रत्येक कथाकार के कृतित्व पर शोधपरक राय भी प्रस्तुत की है । डॉ. सुधा का अध्ययन-परास इतना विस्तीर्ण है कि उन्हें अमरीका के हिन्दी लेखकों के बारे में भारतीय लेखकों की रायशुमारी भी चुनिन्दा आधार पर करने में महारत हासिल है । डॉ.महीप सिंह के इस कथन को कि अमेरिका ने वहां के हिन्दी लेखकों को निगल लिया है, वह अपनी तार्किकता के तीर से धराशायी करते हुए लिखती हैं कि 'अमेरिका ने उन्हें निगला नहीं, वरन यहाँ की पृष्ठभूमि उनके लेखन के लिए उर्वर सिद्ध हुई और नई सोच, नए सामाजिक सरोकार, नई चुनौतियाँ उनकी कहानियों को नयापन दे, उर्जित कर गईं ।' उनका मानना है कि भारतीय जीवन में आई पश्चिमी सोच, पश्चिम और पूर्व के बीच खाई को पाटने में सहायक सिद्ध होगी और यही विचारधारा अमरीका के हिन्दी कथाकारों में प्रमुखता से पैठ बनाती जा रही है । जब वह दावे के साथ इस तथ्य को उद्घाटित करती हैं कि अमरीकी हिन्दी साहित्य को उच्च शिक्षा के लिए स्वीकृति दी जानी चाहिए तो हमें उनके इस दावे पर तनिक भी संदेह नहीं होता है । उनका स्वयं का कथा-साहित्य शिल्प और भाव-पक्ष की कसौटियों पर न केवल खरा उतरता है बल्कि प्रशंसकों को भी आह्लादित करता है । प्रेम जनमेजय उनकी कहानियों पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि उनकी कहानियों के पात्र प्रवासी मन की ज़िंदगी के विभिन्न कोनों को जीते दिखाई देते हैं ।

इसी अंक में भगवत शरण (कनाडा), अमित कुमार सिंह (नीदरलैंड), विजय सती (बुदापैश्त), रेखा भाटिया (अमेरिका), दीपक मशाल (यू.के.) और अनिल प्रभाकुमार (अमेरिका) की कविताएँ कविता-सुलभ सहज अभिव्यक्तियों तथा भाव-प्रवणता के माध्यम से मानस पर अपना अमिट प्रभाव छोड़ती हैं । इस अंक में भारतीय कथाकार पंकज सुबीर की कहानी 'फ़रिश्ता' साम्प्रदायिक अहं, जातीय उन्माद और व्यक्तिगत स्वार्थ को त्यागकर मानवीय दृष्टिकोण अपनाए जाने की हृदयस्पर्शीय विवेचना करती है । कहानी किसी गूढ़ मनोविज्ञान या दर्शन से विरत होकर मनुष्य के सहज संबंधों की व्याख्या करती है । भारतीय रचनाकार नित्यानन्द तुषार और प्रकाश अर्श की ग़ज़लें अभिव्यक्ति की सहजता से लबरेज़ हैं जबकि नरेन्द्र व्यास की कविता 'गर्भ में तुम्हारे' और रेखा भाटिया की कविता 'प्रकृति' पाठक को भावुकता की लहरों में बहा ले जाती है। रमेश शौनक द्वारा विजयेत्री ज़िमबोस्का की कविता का अनुवाद कविता के मूल भाव को संप्रेषित करने में भलीभाँति सक्षम है। हिन्दी चेतना के इस अंक में भारतीय रचनाकारों को समुचित स्वीकार्यता दी गई है जो यह साबित करती है कि यह केवल प्रवासी या अमरीकी रचनाकारों की ही पत्रिका नहीं है, बल्कि हिन्दी साहित्य-सागर को अपनी बूंद-बूंद रचनाओं से सम्पृक्त करने वाले सभी हिन्दी-प्रेमियों का एक बेशकीमती दस्तावेज़ भी है। भारतीय लेखकों, यथा-सुकेश साहनी, डॉ. सतीशराज और श्याम सुंदर अग्रवाल की तीन लघुकथाएं और सुधा भार्गव की बाल कहानी इस अंक को सर्वांगीण स्वरूप प्रदान करती हैं क्योंकि ये दोनों विधाएं प्राय: सभी हिन्दी पत्रिकाओं में रुचिकर स्तंभों के रूप में पढ़ी जाती हैं । पत्रिका को विधागत खंडों में विभाजित करते हुए, सम्पादन-कौशल्य को बखूबी निखारा गया है । 'पाती' में विशिष्ट पत्रों को महत्वांकित करते हुए पाठकों के विचारों को जिस क्रमबद्धता से रखा गया है, वह यह प्रतिपादित करता है कि संपादक मंडल पाठकों के विचारों को बड़ी गंभीरता से लेता है एवं उनके सुझावों और मशविरे को अमली जामा पहनाना चाहता है। इसी क्रम में पत्रिका का स्तंभ 'अधेड़ उम्र में थामी कलम' विशेष उल्लेखनीय है क्योंकि संपादक मंडल का यह मानना जायज़ है कि साहित्य-कर्म उम्र की मोहताज़ नहीं है । इस स्तंभ में, अमेरीकी कवयित्री प्रतिभा सिंह की कविता 'अपने स्वार्थ की दुनिया है' को पढ़कर नहीं लगता कि इसे अनगढ़ हाथों से रचा गया है क्योंकि इसमें भाव-प्रवणता का सहज स्फ़ुटन है। 'साहित्यिक समाचार' के अंतर्गत, कला और साहित्य से संबंधित विश्वव्यापी गतिविधियों का सचित्र दिग्दर्शन कराकर, एक साहित्यिक ज़िम्मेदारी का सफल निर्वहन किया गया है। पत्रिका का 'आख़िरी पन्ना' संपादकमंडल का भविष्यलक्षी दृष्टिकोण रूपायित करता है जिसके अनुसार रचनाकार इसके अगले अंक के लिए अपना योगदान सुनिश्चित कर सकता है और पाठक उसका स्वागत बड़ी उत्कंठा से करने के लिए स्वयं को तैयार करता है।

इस समग्रतावादी विशिष्ट अंक को यदि नव-प्रयोगों से अनुप्राणित एक परंपरागत अंक कहा जाए तो इसमें कोई संदेह नहीं होगा क्योंकि जहाँ

इसमें एक हिन्दी पत्रिका के पारंपरिक स्वरूप को सुरक्षित रखा गया है,वहीं इसमें पत्रिका के आकर्षण पर पूरा ध्यान देते हुए संपादक मंडल ने अपनी प्रयोगधर्मिता पर ख़ास बल दिया है। इसकी तुलना में 52वां अंक इस नज़रिए से ज़्यादा महत्वपूर्ण है कि इसमें विशेषांक के सभी स्वीकार्य मानदंडों को अपनाया गया है। यह अंक सुपरिचित और जनप्रिय व्यंग्यकार और 'व्यंग्य यात्रा' के संपादक प्रेम जनमेजय के व्यक्तित्व-कृतित्व और उनकी रचनाधर्मिता को केन्द्र में रखकर उनके साहित्यिक सफर पर बहुकोणीय नज़रिया पेश करता है। इस विशेषांक के कनाडा में लोकार्पित होने के पश्चात, साहित्यिक गलियारों में यह सवालिया बल प्राय: सभी साहित्य-प्रेमियों के माथे पर उभर आया: ज्ञानपीठ, हिन्दी अकादमी, साहित्य अकादमी आदि के बड़े-बड़े सम्मानों और राष्ट्रीय अलंकरणों से अभिभूत नामचीन लेखकों को दरकिनार कर प्रेम जनमेजय पर ही यह विशेषांक क्यों? पर, जैसा कि हिन्दी चेतना के प्रबुद्ध संपादक मंडल का मानना है कि लेखक का क़द स्वयं जनता निर्धारित करती है, सम्मान-पुरस्कार नहीं; क्योंकि यह सर्वमान्य है कि सम्मानों और पुरस्कारों के पीछे कितनी राजनीति होती है, कितने हथकंडे अपनाए जाते हैं, इसलिए व्यंग्य-विधा के पोषण और विकास हेतु अपनी सम्पूर्ण ऊर्जस्विता अर्पित करने वाले जनमेजय पर विशेषांक निकालना तर्कसम्मत और व्यवहार्य है! राजनीति, कूटनीति, गोलबंदीऔर हथकंडों से परहेज़ करने वाले जनमेजय का क़द साहित्यिक वीथियों में इसलिए आंकने की ज़ुर्रत नहीं की जाती क्योंकि एक तो ये एक ऐसी विधा के उन्नायक हैं जिसके समीक्षकों और आलेचकों की संख्या बहुत कम है; दूसरे, कथा साहित्य और काव्य साहित्य में व्याप्त ब्राह्मणवादी प्रवृत्तियों ने कभी दूसरी विधाओं को आगे आने का मौका ही नहीं दिया। अस्तु, जनमेजय के अक्षुण्ण सामर्थ्य और पौरुष ने व्यंग्य को उस मुकाम तक लाने का दमखम दिखाया है जहाँ इसे एक साहित्यिक शैली न मानकर, एक विधा माना है। हिन्दी चेतना का यह विशेषांक इसी भाव-अनुभाव से अनुप्रेरित होकर एक वरिष्ठ व्यंग्यकार के माध्यम से जन-मानस में व्यंग्य-चेतना जागृत करने का एक सफल प्रयास है।

इस अंक में न केवल हिन्दी व्यंग्य-साहित्य के ही, बल्कि अन्य विधाओं के भी कोई चौबीस प्रबुद्ध विचारकों ने जनमेजय के संबंध में अपने लेख-आलेखों का योगदान किया है। यह अंक इसलिए भी अत्यंत रुचिकर और पठनीय बन पड़ा है क्योंकि कुछ लेखक तो ऐसे हैं जो जनमेजय के निजी ज़िंदगी में ताक-झाँक कर चुके हैं और इस वजह से हमें इस व्यंग्यकार के वर्जित जीवन-पक्षों के बारे में भी बहुत-कुछ जानने-सुनने का अवसर यह विशेषांक प्रदान करता है।

विशेषांक का आग़ाज़ पंकज सुबीर द्वारा लिए गए साक्षात्कार से होता है। जनमेजय का यह साक्षात्कार व्यंग्य-विधा के प्रति उनका स्पष्ट दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के अलावा, उनकी साहित्यिक विद्वता, वर्तमान संक्रमणशील राष्ट्रीय समाज के प्रति उनका नज़रिया, नवउदारवाद और बाज़ारवाद के अनैतिक मायाजाल के ख़िलाफ़ उनकी रोषपूर्ण प्रतिक्रिया, आदमी की फ़िज़ूल आपाधापी में लुप्त उसकी अस्मिता के बाबत उनकी चेतावनियाँ और समाज में व्यंग्य-चेतना की अपरिहार्य उपस्थिति की अनिवार्यता पर व्यापक प्रकाश डालता है। वह मौजूदा अनीतिपूर्ण परिवर्तनों पर क्रोधावेश में गुर्रा उठते हैं: 'केवल शहरों का चेहरा ही नहीं बदल रहा है, व्यक्ति के अंदर का चेहरा भी बदल रहा है।' साहित्यिक धंधागिरी पर कटाक्ष करते हुए वह अपनी भड़ांस इन शब्दों में निकालते हैं: 'आज नंगई की मार्केटिंग का धंधा ज़ोरों पर चल रहा है और साहित्य में भी ऐसे धंधे बाजों का समुचित विकास हो रहा है।' वह हमारी व्यर्थ गतिविधियों का उपहास कुछ इस तरह उड़ाते हैं : 'अचानक दूसरों का कबाड़ हमारी सुंदरता और हमारी सुंदरता दूसरों का कबाड़ बन रही है।' इसीलिए, वह इस सच से हमारा बार-बार साक्षात्कार कराने की अनिवार्य कोशिश करते हैं कि 'व्यंग्य-चेतना मनुष्य के पूर्ण बौद्धिक विकास का शंखनाद है।'

इस अंक में महेश दर्पण के लेख 'सरापा व्यंग्यकार हैं प्रेम', डॉ. मनोज श्रीवास्तव के लेख 'जनमेजय सामाजिक घटनाओं के रडार हैं', डॉ. अजय अनुरागी के लेख 'व्यंग्य के दिशा युक्त प्रहारक : प्रेम जनमेजय', तरसेम गुजराल के लेख 'विसंगतियों का स्वाभाविक व्यंग्यकार' और मनोहर पुरी के आलेख 'व्यंग्य को विधा के रूप में पिरोता एक संपादक: प्रेम जनमेजय' में व्यंग्यकार की व्यंग्यात्मक दृष्टि, शिल्प-विधान, उनके स्वर और व्यंग्य-परास के बारे में समीचीन प्रकाश डाला गया है। जबकि प्रदीप पंत की बतकही 'प्रेम जनमेजय औरों से हटकर हैं',डा. हरीश नवल के संस्मरणनुमा लेख'नवल-प्रेम: एक लव स्टोरी', आत्मकथात्मकशैली में सूरज प्रकाश के आलेख 'मेरे पालनहार: प्रेम जनमेजय', डॉ. अशोक चक्रधर के संस्मरणात्मक लेख 'प्रेम डियर! नायलान पूल अगेन...', ज्ञान चतुर्वेदी के उद्गार 'मुझे अपनी इस मित्रता पर गर्व है', उषा राजे सक्सेना के लेख 'प्रेम जनमेजयसे मुलाकातें' और डॉ. नरेंद्र कोहली के संस्मरण' प्रेम जनमेजय और मैं' में उनकी जाती ज़िंदगी के बाबत हमें मार्मिक जानकारी मिलती है। यज्ञ शर्मा का लेख 'यह व्यक्ति गीता पढ़कर पैदा हुआ है' जनमेजय की कर्मठता औरकर्मण्यता की विशेष चर्चा करता है। इन सबके अतिरिक्त, अनिल जोशी द्वारा लिया गया साक्षात्कार फिर हमें जनमेजय के व्यंग्य-लेखन के प्रति दृष्टिकोण और इस विधा के प्रति उनकी विचारधारा से परिचय कराता है। बेशक! यह साक्षात्कार स्वयं बड़े चुटीले अंदाज़ में लिया गया है जहाँ व्यंग्यकार की रचनाधर्मिता को खंगालने की कोशिश की गई है। डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ, डॉ. अजय नावरिया, राधे श्याम तिवारी, अविनाश वाचस्पति, प्रो. हरि शंकर आदेश, प्रताप सहगल और लालित्य ललित, अनिल जोशी और गिरीश पंकज के लेख भी जनमेजय के वैविध्यपूर्ण व्यक्तित्व और कृतित्व की सार्थक चर्चा करते हैं। अमित कुमार सिंह की कविता 'व्यंग्य और प्रेम' जनमेजय का प्रशस्तिगान बड़े बेहतर ढंग से करती है।

कुल मिलाकर यह विशेषांक जनमेजय पर केंद्रित एक पूर्ण पत्रिका के रूप में मुखर होती है। जहाँ जनमेजय से संबंधित संधान करने वाले शोध छात्रों के लिए यह पत्रिका बेशकीमती साबित होगी, वहीं इसमें दी गई दिलचस्प जानकारियां जनमेजय की मक़बूलियत को मुकम्मल भी करेगी। लिहाजा, जिस ढंग से जनमेजय व्यंग्य के सशक्त हस्ताक्षर के रूप में आज दुनिया के सामने आए हैं और जो रणभेरी उन्होंने व्यंग्य के माध्यम से बजाई है, वह व्यंग्य-प्रेमियों को यह कहने से रोक नहीं सकती कि 'जनमेजय व्यंग्य-विधा के मुक्तिबोध' हैं। हिन्दी चेतना परिवार उन पर केंद्रित इतनी विशिष्ट पत्रिका निकालने के लिए बधाई का पात्र है।

drmanojs5@gmail.com

BEST DEALS FLOORING

Residential & Commercial

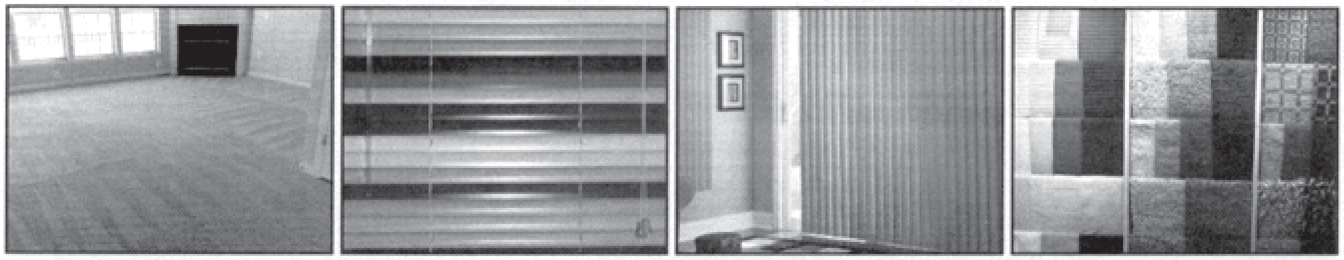

WE ALSO SUPPLY

• Base Boards • Quater Rounds • Mouldings • Custom Stairs
• All Kinds of Trims • Carpet Binding Available

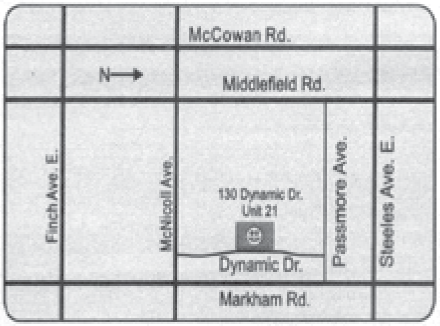

Call: RAJ 416-292-6248
130 Dynamic Drive, Unit #21, Scarborough, ON M1V 5C9
www.bestdealsflooring.ca

Custom Blinds • Ciramic Tiles • Hall Runner
FREE- Installation - Under Padding - Delivery

Free delivery
Under pad
Installation

Residential
Commercial
Industrial
Motels & Restaurants

Free Shop at
Home Service Call:
416-292-6248

Jaswinder Saran
Sales Representative

Direct: 416-953-6233
Office: 905-201-9977
HomeLife/Future Realty Inc.,
Independently Owned and Operated Brockerage*
205-7 Eastvale Dr., Markham, ON L3S 4N8
Highest Standard Agents...Highest Results!...

HOMELIFE
HIGHER STANDARDS

MLS

लघुकथाएँ

श्रद्धांजलि

डॉ. सतीश दुबे

पिता की मौत हुए चार दिन हो चुके थे। वह घुटनों पर चेहरा नीचे किए बैठा था। तभी छोटा भाई कान में बुदबुदाया, ''पिता के दफ्तर से एकाउंटेन्ट आए हैं।'' उसने सर उठाकर, सामने बिछे जूट के बोरे पर गमगीन मुद्रा बनाए आलथी-पालथी मारकर बैठे व्यक्ति की ओर देखा। पाँचेक मिनट बाद वह बोरे सहित उसकी ओर खिसका, ''मौत के तीसरे दिन बाद मिलने वाला एक्सग्रेशिया पेमेन्ट ले आया हूँ...... सरकार की जी. सी. पर यही बड़ी मेहरबानी है...... लो, ए. आर. पर दस्तखत कर दो....। उसने दस्तखत कर दिए। उन्होंने नोट की गड्डियाँ उसकी ओर खिसका दीं।

''गिन लो !..... तुमसे क्या बताएँ पटेल बाबू बड़े अच्छे आदमी थे। सब जन इतने कि बेजा लफ्ज कभी जबान पर नहीं लाए.... किफायत-पसंद बहुत थे, कहते थे, एक पैसा भी इधर-उधर खर्च करना संतान का पेट काटना है।''

उसकी निगाहें उनकी ओर उठ गई।

''हाँ-हाँ..... ऐसा ही सुझाव था उनका, शायद तुम्हें नहीं मालूम वो पीने के शौकीन थे, पर पीना नहीं चाहते थे ,इसलिए कि.....''

''यह आप गलत बोल रहे हैं, उन्होनें ता ज़िन्दगी....''

''तुम बच्चे हो, क्या जानो वो इसलिए नहीं पीते थे कि पैसा खर्च होगा।'' उसने पिता की याद में आँसू पोंछ लिये।

''अच्छा, मैं चलता हूँ....''

''जी, अच्छा....''

''सुनो ! ऐसा करो, इसमें से सौ-दो सौ रुपये दे दो.... हम एक- दो लोग कहीं बैंठ लेंगे .... इससे उनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी...''

''आप लोगों के शराब पीने से उनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी....''

हाँ, तनखा के अलावा जो भी पेमेन्ट मिलता था, उसमें से वे जरूर कुछ न कुछ देते थे, और कहते थे - इसकी दारू पी लेना.... अपने पैसे से हमको पीते देख वे खुश होते थे.....''

उसने उनकी ओर घृणा की दृष्टि से देखा तथा नोट उनके सामने रख दिये, ''ले लीजिए।''

उन्होंने सौ के दो नोट उठा लिये तथा ''अच्छा, मैं चलता हूँ '' की मुद्रा में उठ खड़े हुए।

●

भावना सक्सेना

झूले का दाम

शहर में बड़ा पार्क बना था। समाचार पत्र उद्घाटन की तस्वीरों से भरा हुआ था। रेडियो पर, टेलीविज़न के हर चैनल पर पार्क की चर्चा थी। मुनिया नहीं जानती थी 700 करोड़ कितना होता है; लेकिन जब माँ ने नुक्कड़ की दुकान पर डबलरोटी लाने भेजा तो वहाँ कुछ सुन आई थी और इतना समझ गयी थी कि बहुत बढ़िया पार्क बना है! अपनी कालोनी के सूखी मिट्टी वाले रेलिंग टूटे व गायों के गोबर से भरे पार्क में बहुत दिन से जाना छोड़ दिया था। वहाँ के सभी झूले भी तो टूट चुके थे। बहुत जिद करने पर और माँ के मनाने पर पिताजी रविवार को नए पार्क ले जाने को मान गए। आलू पूड़ी, थर्मस चिप्स, छोटे अन्नू का बैट-बॉल लिये पार्क पहुँचे तो दरबान ने गेट पर ही सारा खाना रखवा दिया, ''अंदर खाना पीना मना है! जाते समय वापस मिल जाएगा; लेकिन बाहर का रास्ता दो नंबर गेट से है। यहाँ तक चल कर आना होगा!''

अंदर अन्नू ने बॉल उछाली तो तुरंत एक गार्ड दौड़ा आया। -''अरे-अरे-रे ,बोर्ड नहीं देखते,क्या लिखा है - घास पर खेलना मना है!''

ताज़ा खिले गुलाब ने मुनिया की आँखों में चमक भर दी ।उसने हौले से पंखुड़ी छुई तो माली चिल्लाया -''ए लड़की ! फूल क्यों तोड़ रही है!''

वह रुआँसी हो उठी -''पापा, मैं तो फूल छू रही थी !''

सुंदरता की फंकी लगा कर ट्रैक पर चलते बाहर निकलने को थे कि एकाएक मुनिया उदास स्वर में पूछ बैठी ''माँ झूले कितने के आते हैं?''

●

लघुकथाएँ

पेट पर लात

विक्रम सोनी

उसे आज भी मजदूरी नहीं मिली। मजबूत कद-काठी का था अत: भीख माँगना उसको बीमार बना देता। शहर भर की सड़क नापने के बाद वह मोटर स्टैण्ड के शैड में सुस्ताने बैठ गया है।

करीब ही एक बाबू पेटी-बिस्तर पर बैठे इधर-उधर देख रहे थे। उसने पूछा, 'सामान ढोना है बाबू जी ? चलिये मैं पहुँचा दूँ, कहाँ चलियेगा ?''

''धामपुर! क्या लोगे?''

''सोच समझकर दे दीजिएगा।''

''फिर भी ! तय रहे तो अच्छा है न?''

''पाँच रुपये।''

''चलो!''

वह अभी पेटी उठवा ही रहा था, दो-तीन वर्दीधारी कुली आ धमके। एक ने बाबू जी से कहा, 'आप लोग पढ़े-लिखे होकर भी लायसेन्स वाले कुलियों को चोर समझते हैं। जानते हैं ये कुली बन गँवार जैसा आदमी कौन है? शहर के नामी गुण्डे जग्गी का खास पट्ठा। अभी ले जाकर रास्ते में आपको नंगा कर देता।'

वह हक्का-बक्का कभी कुली की तरफ कभी बाबू जी की तरफ देख रहा था। वह कुछ बोलता, इससे पहले ही कुली ने उसके गाल पर एक तमाचा जड़ते हुए कहा, ''जा ! अपने बाप से कह देना, यह मेरा इलाका है।'' फिर वह बाबू जी की ओर पलटा, ''जाइये आपको हमारा साथी सुरक्षित पहुँचा आएगा।''

''कहाँ जाइएगा?''

''धामपुर!''

''पन्द्रह-रुपये कुली को दे दीजिएगा।''

बाबू जी भी डर गये थे। उनके जाते ही उसी मरियल कुली ने उससे कहा, ''कौन है बे? आइन्दा पेट पर लात मारने इधर आया, तो अंतड़ी निकाल लूँगा समझा! चल भाग यहाँ से।''

वह बाहर आते-आते सोच रहा था, कौन किसके पेट पर लात मार रहा है?

●

आलेख

शब्दों की दास्तान
हिन्दी, हिन्दू , हिन्दुस्तान

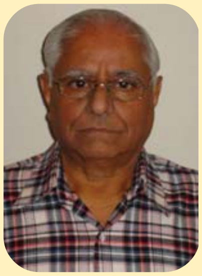

डॉ.रवीन्द्र अग्निहोत्री

हिन्दी हिन्दू , हिन्दुस्तान - आज ये शब्द सभी देशवासियों की शब्दावली के सुपरिचित शब्द हैं । इसलिए आज यह कल्पना करना भी कठिन है कि कभी ये शब्द सर्वथा अपरिचित थे, अज्ञात थे । कुछ लोग कहते हैं कि ये शब्द उसी हिन्दू धर्म से संबंधित हैं जो इस देश का सबसे प्राचीन धर्म है और आज भी इस देश के अधिकांश लोग जिसके अनुयायी हैं ; पर कठिनाई यह है कि यद्यपि हिन्दी इस देश की प्रमुख भाषा है, तथापि न तो सारे हिन्दू हिन्दीभाषी हैं, और न सारे हिन्दीभाषी हिन्दू हैं । इसके अतिरिक्त, जिसे हम हिन्दू धर्म कहते हैं, उसका सारा प्राचीन साहित्य संस्कृत भाषा में है और उस साहित्य में कहीं भी इनमें से कोई शब्द मिलता ही नहीं । अत: यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इन शब्दों का कोई सम्बन्ध संस्कृत से नहीं है । तो प्रश्न उठता है कि ये शब्द आए कहाँ से ? और हमारे समाज में प्रचलित कैसे हो गए ?

इस विषय में लोगों में मतभेद है । कुछ लोगों का मानना है कि मुसलमानों ने ये शब्द बनाए और हिन्दुओं से पुराने समय से चले आ रहे वैमनस्य के कारण गर्हित अर्थ में बनाए । अपने पक्ष की पुष्टि में वे अरबी भाषा के ऐसे शब्दकोशों को उद्धत करते हैं जिनमें 'हिन्दू' का अर्थ चोर, लुटेरा, लम्पट आदि दिया हुआ है; पर दूसरे लोग इसका खंडन करते हुए कहते हैं कि मुसलमान जिस इस्लाम मज़हब के अनुयायी हैं उसकी शुरुआत तो अब से लगभग डेढ़ हज़ार वर्ष पूर्व हुई है , जबकि हिन्दू धर्म इससे बहुत पुराना है । साथ ही, ये शब्द इस्लाम की शुरुआत से पहले भी विश्व साहित्य में मिलते हैं । आइये देखें कि वास्तविकता क्या है ।

विद्वानों का कहना है कि प्राचीन संस्कृत और पालि ग्रंथों में तो हिन्दी / हिन्दू / हिन्दुस्तान शब्द कहीं भी नहीं मिलते, पर विश्व साहित्य में इस देश के सम्बन्ध में 'हिन्दू' या 'इंडो' शब्द मिलते हैं । भारत के बाहर हिन्दू शब्द का प्राचीनतम उल्लेख पारसियों के धर्मग्रन्थ अवेस्ता में मिलता है (रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1993 ; पृष्ठ 112); पर अनुमान है कि वहां यह शब्द इस देश की प्रमुख नदी 'सिन्धु' के लिए आया है । अवेस्ता के अतिरिक्त 'हिन्दू' शब्द का प्राचीन उल्लेख ईसा से लगभग 500 वर्ष पूर्व के फारस (वर्तमान ईरान) के नरेश दारा महान (ईसा पूर्व 522 - 486 ; यूनानियों ने उसका नाम Darius लिखा है) के अभिलेखों में पाया जाता है । पर वहां हिन्दू शब्द का प्रयोग नदी या धर्म के लिए नहीं हुआ है , वह एक प्रदेश का नाम है ।

दारा के साम्राज्य में 23 प्रांत थे जिन्हें "क्षत्रपियाँ" कहा जाता था । उनमें से 'गंदार' और 'हिंदु' भारतीय भूभाग में थीं । दारा महान के पर्सिपालिस अभिलेख और नख्शे रुस्तम अभिलेख में गंदार के साथ हिंदुश का उल्लेख है । उसके एक और अभिलेख (सूसा पैलस) में 'हिन्दव' शब्द आया है । दारा महान के बाद पारसीक नरेश शेरेश (xerexsus) के पर्सिपालिस अभिलेख में भी गंदार और हिंदुश शब्द पाए गए हैं । यह गंदार भारत का गांधार प्रदेश (वर्तमान अफगानिस्तान) और हिंदु / हिंदुश सिन्धु प्रदेश था ।

भाषा वैज्ञानिकों का कहना है कि पारसीक लोग प्राचीन फारसी भाषा बोलते थे जिसमें 'स' का उच्चारण 'ह' होता था । इसीलिए वहां 'सप्ताह' को हफ्ता , असुर को 'अहुर' , 'सोम' को 'अहोम' कहा जाता था । और इसी वज़न पर 'सिन्धु' का 'हिंदु' हो गया जो सिन्धु नदी से सिंचित प्रदेश का भी नाम था और उस प्रदेश के निवासियों का भी। कालान्तर में उस प्रदेश के निवासियों को एवं उनकी भाषा को 'हिंदी ' भी कहने लगे वैसे ही जैसे सिंध के रहने वालों को और उनकी भाषा को 'सिंधी' कहते हैं । 'स' के स्थान पर 'ह' का प्रयोग करने की प्रवृत्ति अपने भी देश में आज मौजूद है । राजस्थान में उदयपुर और उसके आसपास के क्षेत्रों में 'सड़क' को 'हड़क' , 'छह-सात' को 'छह-हात' कहा जाता है ।

पारसीक तो हमारे पड़ोसी थे, और वेदमत के ही अनुयायी थे । उनके धर्मग्रन्थ 'अवेस्ता' और हमारे धर्मग्रन्थ वेद का उद्गम एक ही धातु 'विद' (ज्ञान / जानना) से हुआ है । वेद और अवेस्ता की विषय वस्तु में भी बहुत कुछ समानता है । पारसीयों के माध्यम से जब यूनानियों का 'हिंदु' शब्द से परिचय हुआ तो उन्होंने 'हिंदु' के महाप्राण 'हि' को अल्पप्राण 'इ' कर लिया क्योंकि यूनानी में 'ह' के लिए कोई अक्षर नहीं था । इसलिए वे 'हिंदु ' को 'इंदु' (Indu) / 'इन्दो'(Indo) लिखने और बोलने लगे . सिन्धु में कई नदियाँ आकर मिलती हैं । अत: यूनानियों ने उसे 'इंदुज'(Indus) कहा जैसे गंगा को गैंजेज (Ganges) कहा. इस इंदुज शब्द का ही उेचारण बाद में लोग 'इन्डस' करने लगे । इसी विकृति से 'इंडिया' नाम निकला . इटली के कवि वर्जिल (ईसा पूर्व 70 - 19) ने इंडिया के बदले केवल 'इंद' लिखा है और अंग्रेजी कवि जान मिल्टन (1608 - 1674) ने भी भारत का नाम 'इंड' ही लिखा है ।

चीनी यात्री हुएनसांग (629 ईसवी) ने भी इस देश को 'हिंदु' कहा है , पर उसने इस शब्द का उद्गम सिन्धु नदी के बजाय चीनी भाषा के शब्द 'इन्तु' से बताया है जिसका अर्थ चंद्रमा होता है । उसने लिखा है कि आकाश में तारों के बीच

चन्द्रमा की जैसी प्रतिष्ठा होती है , संसार में उसी प्रकार प्रतिष्ठित होने के कारण भारत को चीन के लोग 'इन्तु' या 'हिंदु' कहते हैं । हुएनसांग का यह विवरण हमें इस तथ्य का स्मरण करा देता है कि यह देश कभी विश्व गुरू रहा है, ज्ञान – विज्ञान में ही नहीं, मानव व्यवहार की शिक्षा देने में भी अग्रणी रहा है । तभी तो मनुस्मृति (2/20) में कहा गया है, एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः स्वं स्वं चारित्र्यम् शिक्षेरन पृथिव्याम् सर्व मानवाः (इस देश के विद्वानों से ही पूरे भूमंडल के लोगों ने ज्ञान– विज्ञान – आचार – व्यवहार की शिक्षा प्राप्त की) ।

स्पष्ट है कि देश के अर्थ में हिन्दू शब्द का चलन विश्व साहित्य में इस्लाम के जन्म से बहुत पहले, कोई हज़ार डेढ़ हज़ार वर्ष पहले दारा के अभिलेखों में शुरू हो गया था । अवेस्ता तो उससे भी बहुत पहले की रचना है। अतः इस शब्द के निर्माण में इस्लाम के अनुयायियों का कोई हाथ नहीं है ; हाँ, इन्हें प्रचलन में लाने में अवश्य उनका भी योगदान है ।

विश्व साहित्य में इन शब्दों की जो भी स्थिति हो, हमारे यहाँ इन शब्दों का प्रचलन लगभग तेरह सौ वर्ष पूर्व ईसा की सातवीं शताब्दी में तब शुरू हुआ जब अरब के सौदागर भारत के पश्चिमी तट पर आने लगे । यही कारण है कि सातवीं शताब्दी से पहले के प्राचीन भारतीय साहित्य में हमें ये शब्द नहीं मिलते । जब यहाँ के लोगों ने इन शब्दों को स्वीकार कर लिया तब इन्हें अपने अर्थ देने भी शुरू कर दिए । जैसे, शब्द कल्पद्रुम – कोश में लिखा, ''हीनं दूषयति इति हिन्दू '' जो हीनता को स्वीकार न करे वह हिन्दू है । जब पता चला कि मुस्लिम कोश में 'हिन्दू' शब्द दूषित अर्थ में है तो उससे विचलित हुए बिना उसकी प्रतिक्रिया में रामकोष नामक ग्रन्थ में लिखा, ''हिंदु दुष्टो न भवति नानार्यो न विदूषकः ; सद्धर्मपाल को विद्वान श्रौतधर्मपरायणः'' (हिन्दू न तो दुष्ट होता है, न विदूषक, न अनार्य . वह सद्धर्म पालक, वैदिक धर्म को मानने वाला विद्वान होता है) । इसी प्रकार वृद्ध स्मृति नामक ग्रन्थ में लिखा, ''हिंसया दूयते यश्च सदाचरणतत्परः, वेदगो प्रतिमासेवी स हिन्दू मुखशब्दभाक (जो सदाचारी, वैदिक मार्ग पर चलने वाला, प्रतिमापूजक और हिंसा से दुःख मानने वाला है, वह हिन्दू है) ।

> स्पष्ट है कि देश के अर्थ में हिन्दू शब्द का चलन विश्व साहित्य में इस्लाम के जन्म से बहुत पहले , कोई हज़ार डेढ़ हज़ार वर्ष पहले दारा के अभिलेखों में शुरू हो गया था ।अवेस्ता तो उससे भी बहुत पहले की रचना है। अतः इस शब्द के निर्माण में इस्लाम के अनुयायियों का कोई हाथ नहीं है ; हाँ, इन्हें प्रचलन में लाने में अवश्य उनका भी योगदान है ।

माधव दिग्विजय के अनुसार ओंकार जिसका मूलमंत्र है, पुनर्जन्म में जिसकी दृढ़ आस्था है, जो गोभक्त है, भारत को जो अपना गुरु मानता है, हिंसा की जो निंदा करता है – वह हिन्दू है (ओंकारमूलमंत्राढयः पुनर्जन्मदृढाशयः , गोभक्तो भारतगुरु हिन्दुहिंसनदूषकः) । स्पष्ट है कि समय के साथ इन शब्दों के अर्थों में अंतर आने लगा और धीरे – धीरे 'हिन्दू' शब्द धर्म विशेष के अर्थ में तथा 'हिन्दी' शब्द भाषा के अर्थ में रूढ़ होने लगे ।'

इसके बावजूद इनके मूल अर्थ को सुरक्षित रखने की कोशिश भी अभी कुछ समय पहले तक होती रही । लगभग एक शताब्दी पूर्व स्वातंत्र्य वीर सावरकर जी (1883 – 1966) के बनाए गए उस श्लोक से तो अनेक लोग परिचित हैं जिसमें इस देश के सभी निवासियों को हिन्दू कहा गया है और जो पर्याप्त समय तक हिन्दू महासभा का भी आदर्शवाक्य रहा : ''आसिंधोः सिन्धुपर्यन्ता यस्य भारत भूमिका , पितृ भूः पुण्य भूश्चैव स वै हिन्दुरिति स्मृतः'' (वे सभी लोग हिन्दू हैं जो सिन्धु नदी से लेकर समुद्र तक फैले विस्तृत भूभाग में रहते हैं और जो भारत को अपनी पितृभूमि तथा तीर्थ मानते हैं), पर मुसलमानों के प्रसिद्ध नेता सर सैयद अहमद खां (1811 – 1898) के उस वक्तव्य से कम लोग परिचित हैं जो उन्होंने सन 1883 में पंजाब की एक सभा में दिया । उन्होंने कहा, ''मेरी राय में हिन्दू लफ़्ज़ का मतलब किसी मज़हब से नहीं, बल्कि जो भी हिन्दुस्तान में रहता है उसे अपने को हिन्दू कहने का हक़ है । मैं भी हिन्दुस्तान में रहता हूँ , पर मुझे अफसोस है कि आप मुझे हिन्दू नहीं मानते । '' you have used the term Hindu for yourselves. This is not correct. For, in my opinion, the word Hindu does not denote a particular religion, but, on the contrary, every one who lives in India has the right to call himself a Hindu. I am , therefore, sorry that though I live in India , you do not consider me a Hindu . (Tara chand : Freedom Movement, Vol. II , Government of India, 1968 ; Pages 367 - 368) इसी अर्थ में 'हिंदी' शब्द का भी प्रयोग होता रहा है ।

मोहम्मद इकबाल (1877 – 1938) के प्रसिद्ध गीत 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा' में पंक्ति है ''हिन्दी हैं हम वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा''. इसमें 'हिन्दी' देशवासियों के लिए ही कहा गया है । प्रायः सारे उर्दू एवं फारसी साहित्य में भारतवासियों को 'हिन्दी' ही कहा गया है. यह सामान्य परम्परा रही है कि किसी देश के निवासियों और उनकी भाषा को एक ही नाम से अभिहित किया जाता है । जैसे चीन के निवासी चीनी और उनकी भाषा भी चीनी, जापान के निवासी जापानी और उनकी भाषा भी जापानी । वैसे ही हिंद के निवासी 'हिंदी' और उनकी भाषा भी हिंदी ।

जहाँ तक हिन्दुस्तान शब्द का सम्बन्ध है यह उस स्थान का वाचक रहा जहाँ 'हिन्दू' रहते हों (संस्कृतप्रेमी इसे 'हिन्दुस्थान ' कहना पसंद करते हैं); पर इस शब्द का प्रयोग उर्दू का प्रचलन (16 वीं शताब्दी) होने के बाद ही मिलता है । यद्यपि तब एक 'धर्म' के रूप में हिन्दू शब्द प्रतिष्ठित हो चुका था, इसके बावजूद हिन्दुस्तान शब्द का प्रयोग उस देश के लिए ही होता था जिसमें तब भी विभिन्न धर्मानुयायी रहते थे । स्वतंत्र भारत के संविधान में तो अपने देश का नाम ''इंडिया दैट इज़ भारत'' लिखा है , पर बोलचाल में आज भी सभी धर्मानुयायी 'हिन्दुस्तान' शब्द का प्रयोग निस्संकोच करते हैं । इस प्रकार इसमें इतिहास और भूगोल दोनों ही दृष्टियों से 'हिन्दू' शब्द का मूल अर्थ आज भी सुरक्षित है ।

agnihotriravindra@yahoo.com

अविस्मरणीय

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

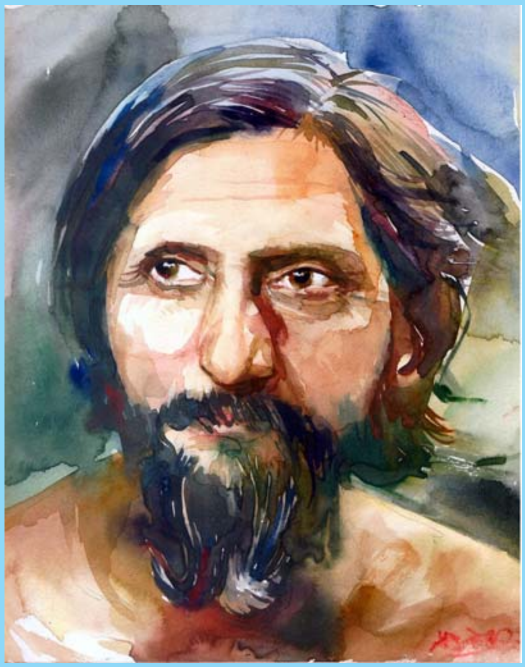

कुत्ता भौंकने लगा

आज ठंडक अधिक है।
बाहर ओले पड़ चुके हैं,
एक हफ़्ता पहले पाला पड़ा था–
अरहर कुल की कुल मर चुकी थी,
हवा हाड़ तक बेध जाती है,
गेहूँ के पेड़ ऐंठे खड़े हैं,
खेतिहरों में जान नहीं,
मन मारे दरवाज़े कौड़े ताप रहे हैं
एक दूसरे से गिरे गले बातें करते हुए,
कुहरा छाया हुआ।
ऊपर से हवाबाज़ उड़ गया।
ज़मीनदार का सिपाही लट्ठ कंधे पर डाले
आया और लोगों की ओर देख कर कहा,
'डेरे पर थानेदार आए हैं;
डिप्टी साहब नें चंदा लगाया है,
एक हफ़्ते के अंदर देना है।
चलो, बात दे आओ।
कौड़े से कुछ हट कर
लोगों के साथ कुत्ता खेतिहर का बैठा था,
चलते सिपाही को देखकर खड़ा हुआ,
और भौंकने लगा,
करुणा से बंधु खेतिहर को देख-देख कर।

●

Shil K. Sanwalka, Q.C.
Barrister, Solicitor & Notary

18 WYNFORD DRIVE,
SUITE #602,
DON MILLS, ONT. M3C 3S2

Telephone: (416) 449-7755
Fax: (416) 449-6969

sksanwalka@rogers.com

Hindi Pracharni Sabha

(Non-Profit Charitable Organization)

Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna ID No. 84016 0410 RR0001

Membership Form

For Donation and Life Membership we will provide a Tax Receipt

Annual Subscription:	**$25.00 Canada and U.S.A.**
Life Membership:	**$200.00**
Donation:	**$____________________**
Method of Payment:	**Cheque, payable to “Hindi Pracharni Sabha”**

For India:
Pankaj Subeer
P.C. Lab
Samrat Complex Basement
Opp. Bus Stand
Sehore -466001
M.P. India
Phone: 07562-405545
Mobile: 09977855399

सदस्यता शुल्क (भारत में)
वार्षिक: 400 रुपये
दो वर्ष: 600 रुपये
पाँच वर्ष: 1500 रुपये
आजीवन: 3000 रुपये

Name:____________________________________

Address:__________________________________

____

____

Telephone: Home:________________ **Business:** ________________

Mobile:____________________ **Fax:**________________

e-mail:____________________________________

Contact in Canada:

Hindi Pracharni Sabha
6 Larksmere Court
Markham, Ontario L3R 3R1
Canada
(905)-475-7165
Fax: (905)-475-8667
e-mail: hindichetna@yahoo.ca

Contact in USA:

Dr. Sudha Om Dhingra
101 Guymon Court
Morrisville,
North Carolina
NC27560, USA
(919)-678-9056
e-mail: ceddlt@yahoo.com

संस्मरण

विदाई

शशि पाधा

शादी के बाद प्रभा जब पहली बार सैनिक छावनी में अपने पति कैप्टेन हर पाल के साथ आई थी तो सैनिक परिवारों की रीत के अनुसार सब से पहले अन्य अधिकारियों की पत्नियां उस नई नवेली दुल्हन को मेरे घर ही लाई थीं । उस छावनी के सर्वोच्च अधिकारी की पत्नी होने के नाते मेरा यह दायित्व भी था कि हर नई दुल्हन का स्वागत मैं अपने घर में ऐसे ही करूं जैसे एक ससुराल में आने पर सासू माँ करती है । अत: शगुन, गीत , चुहल, मिठाई भेंट, शरारत आदि का ऐसा वातावरण बना कि प्रभा ऐसे नए और भिन्न परिवेश में थोड़ी सहज हो गई और निसंकोच हो कर सब से खुल के बातें करने लगी ।

हर नई ब्याही के पास घर सजाने का पूरा सामान भी नहीं होता अत: सैनिक परिवारों का एक अलिखित नियम सा है कि अन्य अधिकारियों की पत्नियां अपने घर के सामान से उसका घर सजा देतीं हैं , कम से कम रसोई और शयन कक्ष ताकि दूसरे शहर में घर बसाने में नव दम्पति को कोई कठिनाई न हो ।

उस रात को ही आफिसर्स मेस में प्रभा और हरपाल की शादी की खुशी में रात्रि भोज का आयोजन था । प्रभा बहुत हँसमुख थी । सब के आग्रह पर उसने उस रात पंजाबी गीतों से सब का मन मोह लिया । इस तरह वो नई नवेली हमारे वृहद परिवार की प्रिय सदस्य बन गई ।

प्रभा ने गृहस्थी सँभालते ही सैनिक परिवार कल्याण केंद्र का काम भी संभाल लिया । मैंने उसे कम पढ़ी लिखी माताओं के बच्चों को स्कूल में जाने से पहले आरम्भिक शिक्षा देने का भार सौंपा । जल्दी ही वह सारे बच्चों की प्रिय पल्भा आंटी बन गई । इस तरह अपने मायके और ससुराल से बहुत दूर बसे छोटे से पर्वतीय शहर में प्रभा पूर्णतय: सैनिक जीवन के रंग में रंग गई ।

लगभग चार वर्ष के अंतराल के बाद श्री लंका में तमिल टाईगरों (श्री लंका में अलग राज्य के लियें माँग कर रही एक स्वघोषित सेना) और सरकार की सुरक्षा के लिए तैनात सुरक्षा बलों में घमासान युद्ध आरम्भ हो गया ।

भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने दोनों पक्षों के बीच समझौता कराने का भरपूर प्रयत्न किया किन्तु स्थिति बिगड़ती गई ।

आखिर श्री लंका की सरकार ने देश में शान्ति स्थापना हेतु सहायता का अनुरोध किया । अत: शान्ति स्थापना के संकल्प से भारतीय सेना की कुछ टुकड़ियाँ 'शान्ति सेना' के रूप में श्री लंका भेजी गईं । उन सैनिकों की यूनिटों में मेरे पति की स्पेशल फोर्सिस की यूनिट भी भेजी गई । उस समय मैं यूनिट से बाहर दिल्ली में रहती थी क्योंकि मेरे पति सैनिक मुख्यालय नई दिल्ली में कार्यरत थे किन्तु भारतीय सेना को निर्देश देने हेतु श्री लंका में ही भेजे गए थे ।

एक शाम सैनिक मुख्यालय से मुझे टेलीफोन आया । फोन पर एक अधिकारी ने कहा, "मिसेज पाधा, बहुत दु:ख के साथ आपको सूचित कर रहा हूँ कि आज श्री लंका में युद्ध में हमारी यूनिट के कैप्टन सतीश और कैप्टन हरपाल शहीद हो गए हैं । उनके अस्थि कलश कल दिल्ली हवाई अड्डे पर पहुँच रहे हैं । इन्हें यूनिट की छावनी (लगभग ४०० किलोमीटर दूर हिमाचल के नाहन शहर) में परसों ले जा रहे हैं । आप भी अस्थि कलश ले जाने वाले वाहन में नाहन तक चलेंगी" ।

समाचार सुन कर मैं सुन्न थी , जिन हंसते – खेलते वीर जवानों को कुछ दिन पहले श्री लंका में शान्ति स्थापना हेतु विदा किया था आज उनके अवशेष लेकर जाने की बात से सारा शरीर काँप उठा । मैंने आँखें बंद करके प्रभु से प्रार्थना की कि हे ईश्वर मुझे इतनी शक्ति देना कि मैं उस वीर सैनिक की पत्नी तथा उसके परिवार को धीर बंधा सकूं । भगवान ही जाने कि ऐसी कठिन परीक्षा की घड़ी में ऐसी शक्ति कहाँ से आ जाती है ?

अगले दिन जब अस्थि कलश नई दिल्ली के हवाई अड्डे पर पहुँचे तो मेरे साथ दो अन्य सैनिक पत्नियां तथा दो अन्य अधिकारी भी वहाँ पहुँच गए थे । एक विशेष स्वागत कक्ष में एक टेबल पर दो कलश रखे हुए थे । दोनों पर फूल मालाएं बंधी थीं और एक तरफ उनके नाम की अक्षरपट्टी बंधी हुई थी । देख कर आँखों से गंगा– यमुना बह निकली । मैं सोचने लगी, दो सप्ताह पहले यह दोनों यहाँ से चलते हुए गए थे और आज छोटे से कलश में कैसे समा गए ? हमने हाथ जोड़ कर, नतमस्तक होकर उन्हें श्रद्धांजलि दी । स्वागत कक्ष में आए सभी सैनिक अधिकारियों ने उन कलशों को सम्मान देते हुए सलामी दी । अब समय था उन्हें अगले पड़ाव तक पहुँचाने का । गाड़ी में बैठते ही मैंने और दीपा ने उन दोनों कलशों को अपनी गोद में रख लिया । गाड़ी चल रही थी और हम सब चुपचाप इन दोनों कलशों को गोद में लेकर ऐसे सावधानी से बैठे रहे कि इन बच्चों को कोई धक्का, कोई चोट न लगे । बीच–बीच में कोई न कोई हरपाल और सतीश के साथ बीते अपने–अपने संस्मरण सुनाता रहा । प्रबोध ने तो हरपाल का एक प्रिय पंजाबी गाना भी गाया । ऐसे समय बीत रहा था जैसे वे दोनों भी हमारे साथ हों ।

छह घंटे की यात्रा के बाद हम "नाहन" पहुँच गए । वहाँ यूनिट के देवस्थान में पहले से ही अन्य सैनिक परिवार प्रतीक्षा में बैठे थे । दोनों अस्थि कलशों को भगवान के सामने रख दिया गया । कैप्टन सतीश की पत्नी क्योंकि उस समय दूर सतीश के गाँव चली गई थी अत: उस के कलश को लेकर दो अधिकारी हिमाचल में उसके गाँव की ओर चले गए ।

अब बहुत ही कठिन घड़ी सामने थी । मुझे प्रभा के घर जाकर उसे मन्दिर तक लाना था । मैंने

फिर से देवी दुर्गा की प्रार्थना की और चल पड़ी । घर पहुँचते ही मैंने प्रभा को गले लगाया । वो टकटकी लगा कर मुझे देखती रही । मानो मुझसे कुछ पूछना चाहती हो । उसका पूरा शरीर काँप रहा था । मैंने देखा कि उसने गुलाबी रंग का पंजाबी सूट पहन रखा था जो शायद उसकी शादी का जोड़ा था क्योंकि अभी तक उसके किनारों पर गोटा लगा हुआ था ।

मैंने धीमे स्वर में उससे कहा 'मंदिर तक चलो प्रभा, हरपाल को विदा करना है ।' उसने बच्चे की तरह मेरा हाथ पकड़ा और, कमरे में फ्रेम में लगी हरपाल और अपनी शादी की तस्वीर की ओर कुछ देर तक निहारा और फिर मेरे साथ चल पड़ी । सच कहूँ तो प्रभा का धैर्य देख कर मेरा रोम- रोम रो रहा था किन्तु वो थी कि जड़वत चली जा रही थी और मन ही मन जपजी का पाठ कर रही थी ।

देवस्थान के हाल के बीचों - बीच लाल कपड़े से बंधा अस्थि कलश एक चौकी पर रखा था । प्रभा धीमे क़दमों से उस तक पहुंची । उसने बड़े प्यार से उस कलश को छुआ और उस पर लगे लाल कपड़े को धीरे- धीरे खोलने लगी । साथ में वो अस्फुट स्वरों में कुछ बातें कर रही थी मानो हरपाल से कुछ कह रही हो । प्रभा ने कलश के भीतर हाथ डाला और बहुत देर तक अस्थियों को सहलाती रही । उसने अपनी अंगुली से अपनी शादी की अंगूठी खोली और कलश के अंदर डाल दी । पंडित जी ने एक कपड़े में बंधा हुआ हरपाल का सोने का कड़ा और उसकी अंगूठी प्रभा को दी । अपने सुहाग के प्रतीक चिन्हों को बड़े धैर्य से ले कर उसने उन्हें अपने वक्षस्थल से लगा लिया । पंडित जी ने संकेत दिया कि अब विदा का समय है । मैं प्रभा के पास गई और उसके काँधे पर हाथ रख कर मैंने कहा 'हरपाल को विदा करो' ।

प्रभा ने कलश के अंदर से कुछ रज मुट्ठी में भरी और अपने गुलाबी आँचल के छोर में बाँध ली । कुछ कदम पीछे हट कर वो फिर से कलश के गले लग गई मानो हरपाल के गले लग रही हो । किसी ने उसे उठाया । वो अंतिम प्रणाम करके शून्य की ओर ताकती हुई बोली 'अब यह आत्मा परमात्मा एक हो गए हैं । अब मैं उसे कैसे ढूँढूँगी ? कहाँ जाऊँगी ? कितना लंबा होगा वो रास्ता ?' और उसकी रुलाई फूट पड़ी । एक बार जाने से पहले फिर से उसने कलश को छुआ और मंदिर की दीवारों को भेदती हुई हृदयविदारक चीख के साथ उसने कहा 'पालीईईईइ , तुसी कित्थे ओ' । थोआनु जैदा चोट ते नइं आई न ? (पाली , आप कहाँ हो, आप को ज़्यादा चोट तो नहीं आई) हम अब तक नहीं जानते थे कि प्रभा प्यार से हरपाल को पाली कहती थी । चार वर्ष का वैवाहिक जीवन और इतनी वीरता, संयम और धैर्य से अपने शूरवीर पति को विदा करने वाली वीरांगना प्रभा के आगे हम सब नतमस्तक हो गए ।

दो दिन के बाद हम सब लौट गए । प्रभा के माता- पिता और सासू माँ और यूनिट के अन्य सदस्य अब उसके साथ थे । वापिसी में जैसे- जैसे हमारी जीप चल रही थी, सोच रही थी, यह युद्ध क्यों ? जब इस धरती-आकाश को कोई नहीं बाँट सकता, समुद्र के हिस्से नहीं हो सकते, वायु को अपनी परिधियों में कोई रोक नहीं सकता, फिर किस सत्ता के लिए, किस ज़मीन के लिए, इतने भविष्य अन्धकार मय होते हैं ? आज जो दृश्य हमारी पलटन में देखा है, ऐसा न जाने कितने दूर दराज़ पहाड़ों में , गाँवों में, नगरों में रोज़ घट रहा होगा । हरपाल को याद करके मन में एक प्रश्न उठा ''जब प्रभा की आने वाली सन्तान यह पूछेगी कि पापा को किसने भगवान के पास भेजा था तो इसका उत्तर कौन देगा ?''

shashipadha@gmail.com

विश्वविद्यालय के प्रांगण से....

मैं हिन्दी क्यों पढ़ता हूँ ..

टिमोथी ब्रायंट

हिन्दी-उर्दू का अध्ययन, नार्थ कैरोलाईना, स्टेट यूनिवर्सिटी

(टिमोथी ब्रायंट ने अमेरिका की सेना में बहुत वर्ष काम किया है । अब अमरीकी सरकार और एक एनजीओ के साथ काम करते हैं)

कुछ साल पहले जब मैंने अपने दोस्त से कहा कि मैं पंजाबी सीखना चाहता हूँ और पंजाबी समुदाय में राहत कार्य (एन जी ओ) के विकास के साथ शामिल होना चाहता हूँ, तब मेरे दोस्त ने सुझाव दिया कि मुझे पहले हिन्दी भाषा सीखनी चाहिये जो अमेरिका के ज़्यादातर विश्वविद्यालयों में सिखाई जा रही है । साथ में उन्होंने यह भी कहा कि अगर किसी को हिन्दी भाषा की अच्छी पकड़ है तो दक्षिण एशिया के कई क्षेत्रों के लोगों के साथ बातचीत करने में आसानी होती है, चाहे वे पंजाबी, गुजराती, मराठी, नेपाली और उर्दूवाले क्यों न हों । उसके बाद मैंने पाया कि नार्थ कैरोलाईना स्टेट यूनिवर्सिटी में हिन्दी-उर्दू का शिक्षण कार्य चल रहा है । डॉ. सुजाता मोदी और डॉ. नीलाक्षी फुकन हिन्दी-उर्दू भाषा और साहित्य के शिक्षण के साथ-साथ दक्षिण एशियाई भाषाओं और संस्कृतियों के बढ़ावे के लिये अनेक कार्यक्रमों का आयोजन भी करती रहती हैं । मैंनें तुरन्त ही इसमें दाख़िला ले लिया । अभी मैं इंटरमीडिएट कोर्स ख़तम कर चुका हूँ और इस अगस्त से एडवान्स्ड लेवल के हिन्दी कोर्स में शामिल हो जाऊंगा । मुझे उम्मीद है कि पढ़ाई ख़तम होने के तुरन्त बाद ही मैं भारत जाऊँगा और हमारे एन जी ओ के ज़रिये गांवों के विकास में पूरा सहयोग दूंगा ।

डॉ. अनीता कपूर

अमेरिका की कवयित्रियों की मनोभूमि

परिवेश कोई भी हो....देसी या परदेशी, संवेदनशील मन की छटपटाहट, जिंदगी का कभी मुस्कराना और कभी रूठना, जीवन की लकीरें - कभी पूर्णविराम और कभी अर्धविराम, कभी प्रश्नवाचक, सभी को कलम की नोक से भावनाओं की स्याही में डुबोकर कवितायें लिखी जाती रही हैं। अच्छी कविता वही है, जो पाठक से सीधा संवाद करे। रचनाकार की पूरी मासूमियत को प्रमाता तक सम्प्रेषित कर दे। ऐसी ही रचनाओं के द्वारा अमरीका में बसी कवयित्रियों की कविताएँ साहित्य की यात्रा करने-कराने का एक अनायास माध्यम बनती रही है।

देश से विदेश तक कविता का हमेशा एक अपना ही क्षितिज रहा है। ऐसा ही एक क्षितिज बनाया, लाहौर अविभाजित भारत में जन्मी, १९८२ से ओहायो में रह रहीं, शिखंडी युग, बराह, यह युग रावण है, मुझे बुद्ध नहीं बनना, मैं कौन हाँ (पंजाबी) काव्य-संग्रहों की रचयिता वरिष्ठ कहानीकार, उपन्यासकार सुदर्शन प्रियदर्शिनी की कविताओं ने। उसी क्षितिज पर, उनकी एक प्रतिनिधि कविता 'चांद' ने कथ्य और शिल्प के सहारे संवेदना और अपने परिवेश से दूर किसी बिछुड़े को याद करते नारी-मन को बखूबी दर्शाया है-

खिड़की के रास्ते/उस दिन/चाँद मेरी देहली पर/मीलों की दूरी नापता

/तुम्हें छू कर आया/बैठा/मेरी मुंडेर पर/मैंने हथेली में भींच कर/माथे से लगा लिया।

कविता की आत्मा की पहचान, उसकी अभिव्यक्ति से होती है। कवयित्री की एक और कविता 'कण', इसी बात को सार्थक करती दिखती है-

एक कण/आकाश से/आर्द्र नमी का/गिरा / अटका रह या/निस्तब्ध/पलक पर -/सामने चार कहार/चार हताहतों/की लाश /ढो रहे थे ...

नार्थ कैरोलाईना में रहने वाली जानी- मानी प्रतिष्ठित कवयित्री, कहानीकार, पत्रकार, उपन्यासकार सुधा ओम ढींगरा, जालन्धर, पंजाब से हैं और अंतरराष्ट्रीय हिन्दी समिति (अमेरिका) के कवि सम्मेलनों की राष्ट्रीय संयोजक हैं । सुधा जी ने यहाँ रचनात्मक सृष्टि का भव्य निर्माण किया है। अमेरिका में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में कार्यरत सुधा ओम ढींगरा के काव्य संग्रह हैं- धूप से रूठी चाँदनी, तलाश पहचान की, सफ़र यादों का, मेरा दावा है (अमेरिका के कवियों का संपादन) । हर कविता एक तजुर्बा है, एक ख़्वाब है, एक भाव है । जब दिल के भीतर मनोभावों का तहलका मचता है, तब श्रेष्ठ रचना जन्म लेती है। अपने देश-परदेश की भूली-बिसरी यादों को जीवंत करती, जानी मानी प्रवासी रचनाकार सुधा ओम ढींगरा की कविता, 'देस की छाँव', एक परिपक्व मन की संवेदना भरी अभिव्यक्ति का नमूना है...जो कवयित्री को कला की कसौटी पर खरा उतारता है-

साजन मोरे नैना भर-भर हैं आवें/देस की याद में छलक-छलक हैं जावें

याद आवे/वो मन्दिर/वो गुरुद्वारा/वो धर्मशाला/वो पुराना पीपल का पेड़...

सुधा जी विदेश में रहते हुए भी अपनी मिट्टी से जुड़ी हुई संवेशनशील रचनाकार है, जो परिवार, सम्बन्धों और परिवेश को विषय-वस्तु बनाकर अपनी रचनाओं द्वारा पाठक को अनुभव सागर से जोड़ लेती हैं। एक कविता ,यह वादा करो में ऐसे ही भाव दिखते है-

यह वादा करो/ कभी ना उदास होंगे/ सृष्टि के कष्ट चाहे सब साथ होंगे

प्रसन्नता के क्षणों को/एकांत से ना सजाना/ हम न सही, कुछ लोग खास होंगे ।

मनोबल में सकारात्मक संचार कराती सुधा जी की कविताएँ, 'मैं दीप बाँटती हूँ', में, कवि मन के भाव कहते हैं-

मैं दीप बाँटती हूँ / इनमें तेल है मुहब्बत का/ बाती है प्यार की/ और लौ है प्रेम की

रौशन करती है जो / हर अंधियारे / हृदय ओ' मस्तिष्क को....

सुधा जी की कविताएँ नारी जागृति, प्रेरणा और नारी के विशाल हृदय तथा दायित्व को दर्शाती हुई मौन क्रांति का आह्वान करती हैं ।

कराची, पाकिस्तान में जन्मी कवयित्री देवी नागरानी जी मूलत: सिंधी भाषी है। देवी जी, काफी अरसे से अमरीका के न्यू जर्सी शहर में रह रही है। देवी जी हिन्दी ग़ज़ल में सम्माननीय स्थान रखती हैं और इनका ग़ज़ल संग्रह है चिराग़े दिल । किसी भी बात को अपनी निजी शैली में, नए अंदाज से कहने का उनका अपना ही सलीका है । देवी जी की कविता 'चक्रव्यूह' में नारी शक्ति और सोच के निराले तेवर दिखाई देते हैं.....

लड़ाई लड़ रही हूँ मैं भी अपनी/ शस्त्र उठाये बिन/ खुद को मारकर

जीवन चिता पर लेटे लेटे/ चक्रव्यूह को छेदकर/ पार जा सकती हूँ

जीवन और रिश्तों को बहुत करीब से देख चुकी देवी की के अनुभव उनकी रचनाओं में साफ उजागर होते है। उनकी एक और कविता, 'जिंदगी एक रिश्ता, एक फासला' में जिंदगी की आहट साफ सुनाई देती है-

कागज़ के कोरे पन्ने/जिंदगी तो नहीं/न ही काले रंग की पूतन/का नाम है जिंदगी/ जिंदगी है एक रिश्ता/रात का दिन से

कहते हैं कि अगर किसी रचनाकार को जानना हो, तो उसकी लिखी कविताएँ पढ़ लें। एक ऐसी ही प्रतिष्ठित कवयित्री है मैरीलैंड की रेखा मैत्र; जो देस-परदेस के जीवन के बीच में एक संधि पूर्ण पहलू से हमारा परिचय कराती है। बेशर्म के फूल, मुट्ठी भर धूप, उस पार, रिश्तों की पगडंडिया, मोहब्बत के सिक्के, ढाई आखर, मन की गली,

यादों का इन्द्रधनुष आपके काव्य संग्रह हैं । रेखा जी की कविता 'अपरिचित अनुभूति', की पंक्तियाँ-

आज अपरिचित शहर में/अपरिचित-सी अनुभूति भी हुई थी।

इसी भाव को सहजता से दर्शाती हैं। उनकी कवितायें मानव संपर्क में भी, रूमानियत तलाशती दिखती हैं। वे 'बेनाम रिश्ते' में लिखती है-

मिटने के डर से/उंगलियाँ कहाँ थमती है/उन्हें रौशनाई मयस्सर न हो/तो भी वे लिखती हैं/लिखना उनकी फितरत है

रेखा मैत्र के बिम्ब अद्भुत होते हैं ।

राँची, झारखण्ड में जन्मी, ह्यूस्टन में अध्यापनरत, कवयित्री, कहानीकार इला प्रसाद मानती है कि, जब कल्पना यथार्थ में परिवर्तित होती है तब कहीं अपने वजूद से परिचित होने की अनुभूति का आभास होता है। धूप का टुकड़ा इनका कविता-संग्रह है । अपनी कविता 'दरार' में कवयित्री कहती है-

सच की ज़मीन पर खड़ी/ विश्वास की इमारत तो/ कब की ढह गई

अब तो नज़र आने लगी है/ बीच में उग आई / औपचारिकता की दरार

इला जी की कविता के शब्दों की गहराई में एक सच अपने प्रवासी दर्द की पीढ़ा अभिव्यक्त करता है, जब वे 'दूरियाँ' में लिखती है-

सब कुछ बड़ा है यहाँ /आकार में /इस देश की तरह/ असुरक्षा, अकेलापन और डर भी/ तब भी लौटना नहीं होता/ अपने देश में।

दिल्ली की डॉ. अनीता कपूर कवयित्री होने के साथ एक पत्रकार भी है और गत पंद्रह वर्षो से कैलिफोर्निया में रह रही हैं । उनकी कविताएँ स्वत: अनायास...कभी पिरामिड -सी तो कभी ताजमहल-सी बन कर चली आती हैं । डॉ. अनीता जी की हर कविता का अपना एक आकाश होता है और शब्द उस आकाश के सितारे, संवेदना चाँद और पाठक सूरज। बिखरे मोती, अछूते स्वर, कादंबरी, ओस में भीगे सपने और साँसों के हस्ताक्षर अनीता जी के काव्य संग्रह हैं । कविता 'सीधी बात' में वे कविता से सीधी बात करती हैं--

आज मन में आया है / न बनाऊँ तुम्हें माध्यम / करूँ मैं सीधी बात तुमसे

उस साहचर्य की करूँ बात / रहा है मेरा तुम्हारा

एक क्षितिज बनाया, लाहौर में जन्मी, १९८२ से ओहायो में रह रहीं सुदर्शन प्रियदर्शिनी की कविताओं ने।

सुधा ओम ढींगरा की कविताएँ नारी जागृति, प्रेरणा और दायित्व को दर्शाती हुई मौन क्रांति का आह्वान करती हैं ।

शशि पाधा को गीतों की रानी कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी । उनकी कल्पना में राग की कोमल अनुभूतियाँ हैं ।

मंजु मिश्रा की कविताएँ काव्य-शिल्प, और काव्य-भाव की समस्त भूमिका ईमानदारी से निभाती हैं।

रचना श्रीवास्तव शब्द-शिल्प सौंदर्य और अपनी रचनात्मक लय-ताल से पाठक को बांधे रखती है।

/ सृष्टि के प्रस्फुटन के प्रथम क्षण से

अनिता जी चिंतनशील कवयित्री हैं। उनकी कविता, साँसो के हस्ताक्षर में उनका चिंतन पारदर्शी है-

कल को कहीं हमारी आगामी पीढ़ी/भुला न दे हमारी चिन्मयता

चेतना लिपियाँ/प्रतिलिपियाँ/भौतिक आकार मूर्तियां मिट जाने पर भी/जीवित रहे हमारे हस्ताक्षर

अनिता कपूर को कविताओं के साथ-साथ क्षणिकाएँ और हाइकु लिखने में भी काफी रूचि है।

लखनऊ नगर से कैलिफोर्निया में बसी, कवयित्री मंजु मिश्रा भी कविताओं के साथ -साथ हाइकु और क्षणिकाएँ लिखना पसंद करती हैं। मंजु जी का कविता संग्रह ज़िन्दगी यूँ तो.. प्रकाशनाधीन है ।

मंजु जी की कविताएँ और क्षणिकाएँ जैसे शब्दों से परे खुद से ही बात करती सी प्रतीत होती हैं। उनकी एक क्षणिका में वे लिखती है-

आँखों की कोर दलदली लब कांपते हुए/अंतर के जख्म अपना बदन ढांपते हुए

बजती रही सितार सी ता-उम्र ज़िंदगी/सपनों के सुर लगे भी तो कांपते हुए

विदेश में रहते हुई भी उनकी नज़र अपने देश की गतिविधियों पर रहती है। वो उनकी कविता 'भ्रष्टाचार का ख़ात्मा' में दिखाई भी देता है जब वे लिखती हैं-

आज हर तरफ/भ्रष्टाचार को/जड़ से उखाड़ फेंकने की/मुहिम शुरू हुई है/अच्छा है/बहुत अच्छा है!!!

मंजु जी की कविताएँ काव्य-शिल्प, और काव्य-भाव की समस्त भूमिका ईमानदारी से निभाती हैं।

लखनऊ में जन्मी और टेक्सास में रहतीं युवा कवयित्री, कहानीकार रचना श्रीवास्तव का बाल साहित्य में भी योगदान है । अपनी लेखनी की रौ से शब्द-शिल्प सौंदर्य और अपनी रचनात्मक लय-ताल से पाठक को बांधे रखती है। उनकी कविता 'अभिलाषा' उसी सौंदर्य का उधाहरण प्रस्तुत करती है-

अभिलाषा है / तेरे खुश्क होते शब्दों पे/ बादल रख दूँ/ तुम थोड़ा भीग जाओ

विदेश में रहने के बावजूद अपनी संस्कृति से जुड़ाव की मिसाल पेश करती, रचना जी की कविता, 'बेटियाँ' दिल को छू लेती है-

तुलसी के बीरे-सी पवित्र /संस्कार में पिरोई बेटियाँ/ पतझर या सावन की हवाओं में/ चिड़िया-सी उड़ जाती हैं

कवयित्री की कविताएँ, दिल से निकल कर, सीधे दिल में पहुँचती हैं ।

रचना जी को भी हाइकु, क्षणिकाएँ लिखने में महारत हासिल है।

प्रकृति का मानवीकरण करतीं पूरे भारत का भ्रमण कर वर्जिनिया में आ बसीं जम्मू की शशि पाधा के, पहली किरण, मानस मंथन और अनन्त की ओर तीन काव्य संग्रह हैं । जीवन, प्रेम एवं प्रकृति के विभिन्न रंगों से चित्रित करती हुई कवयित्री ने मानव जीवन के राग -विराग, हर्ष -शोक, ममता एवं प्रवास की पीड़ा के भावों -मनोभावों को अपनी कल्पना की तूलिका से मूर्त्त रूप किया है । 'धूप गुनगुनी' में देखें -

आज भोर के आंगन में / धूप गुनगुनी छाई है / लगता जैसे मेरी माँ / मुझ से मिलने आई है /

'आश्वासन' और 'यों पीड़ा हो गई जीवन धन' गीतों में मानवीय संवेदना और प्राकृतिक सुषमा का अद्भुत सम्मिश्रण है । उदाहरण देखें ...

विदा की वेला में सूरज ने / धरती की फिर माँग सजाई / तारक वेणी बाँध अलक में / नीली चुनरी अंग ओढ़ाई

मोती माणिक की धरती से / माँगे केवल सुख के कण / क्यों पीड़ा हो गई जीवन धन?

इनके अधिकतर गीतों में महादेवी की झलक दिखाई देती है । छायावादी युग को जीवित रखे हुए हैं ।

बस तेरे लिए गीत में देखें -

नीलम सी साँझ / चाँदी का चाँद / तारों के दीप / सागर की सीप / जोड़ी है मैंने तेरे लिए

शशि जी को गीतों की रानी कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी । गीतों के रंग में रंगी उनकी कल्पना में कहीं राग की कोमल अनुभूतियाँ हैं और कहीं विराग की ओर संकेत ।

दिल्ली से आईं कहानीकार, कवयित्री अनिल प्रभा कुमार न्यूजर्सी में 19 12 से रह रही हैं और यूनिवर्सिटी में हिन्दी पढ़ाती हैं । कविता संग्रह

देवी नागरानी जी हिन्दी ग़ज़ल में सम्माननीय स्थान रखती हैं । बात को कहने का उनका अपना ही सलीका है ।

मैरीलैंड की रेखा मैत्र, देस-परदेस के जीवन के बीच में एक संधि पूर्ण पहलू से हमारा परिचय कराती है।

अनिल प्रभा कुमार की छंदमुक्त कविताएँ भोगे हुए जीवन के यथार्थ को रूपायित करने की अद्भुत क्षमता रखती हैं ।

इला प्रसाद की कविता के शब्दों की गहराई में एक सच अपने प्रवासी दर्द की पीड़ा अभिव्यक्त करता है ।

डॉ. अनीता कपूर की हर कविता का अपना एक आकाश होता है, शब्द उस आकाश के सितारे, संवेदना चाँद और पाठक सूरज।

प्रकाशन के लिए तैयार है । छंदमुक्त कविताएँ काव्य रसानुभूति से ओत -प्रोत भोगे हुए जीवन के यथार्थ को रूपायित करने की अद्भुत क्षमता रखती हैं । कविताओं में नारी मन का रोष -आक्रोश है ।

'गान्धारियों से प्रश्न' कविता में देखिये -

बेटियां कोख़ में मरती रहीं / और द्रौपदियां नग्न होती रहीं / और तुम आंखों पर बांधे पट्टी / गौरवान्वित होती रहीं।

माँओं, गान्धारियों, नारियो / खोल दो / आँखों पर बंधी इस पट्टी को।

अनिल जी की कविताओं में संवेग आवेग के साथ निकलते हैं और हृदय को झकझोरते जाते हैं

एक हाथ में भाला और दूसरे में तराज़ू उठाए / हमारी तरफ बढ़ते आते हैं वो लोग / और कहते हैं कि तुम्हें तोलेंगे हम /

क्रांति का बिगुल बजाती हैं इनकी कविताएँ ।

दिल्ली से ही आईं उपन्यासकार, कहानीकार, कवयित्री सुषम बेदी का काव्य संकलन शब्दों की खिड़कियाँ है । सुषम जी उपन्यासकार के रूप में एक स्थापित एवं प्रतिष्ठित लेखिका है ।

न्यूयार्क की अंनत कौर, न्यूजर्सी की रजनी भार्गव, कैलिफोर्निया की अर्चना पांडा, अंशु जौहरी, प्रतिभा सक्सेना, शकुन्तला बहादुर, नीलू गुप्ता , ओहायो से रेनु राजवंशी गुप्ता भी काव्य सृजन में रत हैं ।

डॉ. किशोर काबरा ने एक जगह लिखा है- ''सच्ची कविता की पहली शर्त यह है कि हमें उसका कोई भार नहीं लगता । जिस प्रकार पक्षी अपने परों से स्वच्छंद आकाश में विचरण करता है, उसी प्रकार कवि ''स्वान्तः सुखाय'' और ''लोक हिताय'' के दो पंखों पर अपना काव्य यात्रा का गणित बिठाता है''।

कुछ ऐसे ही जिंदगी के रंग, स्वाद, पुलक, सिहरन, बुद्धिजीवी स्त्री का विविध रंगों भरा संसार, देश प्रेम, देश से दूर रहने की पीड़ा, और नारी सुलभ भावनाओं का गणित, अमेरिका की कवयित्रियाँ, अपनी-अपनी मनोभूमि पर करती-बिठाती रही हैं तथा रचनाकारों की कविताएँ इस बात पर हमेशा खरी ही उतरी हैं एवं उनका साहित्य में योगदान सराहनीय है।

दृष्टिकोण

वैश्विक हिंदी साहित्य और हमारा भारत

कादंबरी मेहरा

अंडा जब बाहर से फोड़ा जाता है तो एक हत्या बन जाता है ,परन्तु जब वह अन्दर से फोड़ा जाता है तो एक सृजन ! साहित्य सृजन भी ऐसी ही एक प्रक्रिया है, जब आतंरिक ऊर्जा पक कर प्रस्फुटित होती है तो वह नव रचना बन निकलती है । विदेशों में बसे, भारत से आये अनेकों प्रबुद्ध, संवेदनशील,जागरूक व्यक्तियों की मानसिक ऊर्जा कब तक ढकी मूंदी बैठी रहती ? यहाँ के जीवन की नई विषमताओं से जूझते, जीते, जीतते-हारते, हममें से कइयों ने कलम को सखी बना लिया । जो कहना था - चाहे अपना वर्तमान ,या सुनहरी यादें, या छाती पर बैठे दुःख या भावी दिवा स्वप्न सब कलम के कन्धों पर डाल दिया । कलम चलने लगी तो सृजन का अम्बार लग गया ।

पिछले तीस वर्षों से अनेकों सशक्त रचनाकार भारत के बाहर से हिंदी साहित्य को अपना योगदान दे रहे हैं । सबको एकत्र किया जाए तो एक अच्छा खासा वज़नदार संग्रह बनता है । इसी लेखन के समानांतर, सभी तरह की साहित्यिक गतिविधियाँ भी अनेक देशों में नियमित रूप से आयोजित की जाने लगीं हैं । निजी आवासों में मित्रों की महफ़िलों से अंतर्राष्ट्रीय मेलों तक, रचना संसार विकसित होता चला गया है । समितियां बनी तो सभी अलग -अलग प्रमुख शहरों ने अपनी -अपनी ध्वजा वाहिनी की सैन्य -क्षमता का उद्घोष किया । कुछ लेखकों ने कम उम्र से ही, नौकरी व गृहस्थी की अनवरत मांगों के साथ साथ कलम उठाई जबकि कुछ ने अवकाश प्राप्ति के बाद ।

यदि वैश्विक लेखन के पांच दशकों का इतिहास देखें तो यह लेखकों की दूसरी पीढ़ी है क्योंकि हम में से कुछ अब नहीं रहे । पहली पीढ़ी के लेखक उम्र का अधिकतर हिस्सा भारत में बिता कर आये थे । वर्तमान सक्रिय लेखकों की जमात में वह लेखक हैं जो स्कूल कॉलेज छोड़ते ही या यों कहिये अपने उत्तरदायित्व काल के पहले दशक में ही यहाँ आ गए थे और जिनका जीवन यहीं पल्लवित हुआ । इसमें स्त्रियाँ प्रमुख हैं । भारत में उनकी प्रतिपक्षी बहनें घरों में बैठी रहीं जबकि इस देश में प्रत्येक ने यथायोग्य आर्थिक योगदान दिया । बिना नौकर या परिवार की सहायता के पति व बच्चों का पालन पोषण किया । मेरे साथ एक महिला को केवल सैंड विच में मक्खन पोतने का काम मिला था पर दिन भर बाद सात पौंड हाथ में लेकर वह नाचती थीं । कमाई करके हम क्या भारत से जुदा हो गए थे ? भारत में स्वजनों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनेकों त्याग किये । मेरी एक मित्र शादी के बाद यहाँ आईं तो पूरे अठारह साल के बाद भारत जा सकीं क्योंकि उनकी टिकट के पैसे भारत में उनकी ससुराल वाले माँग लेते थे । जब गईं तो किसी ने उन्हें पहचाना तक नहीं । माँ मर चुकी थीं । पिता लगभग अंधे हो चले थे । भाई का बच्चा बाप को बुला कर लाया तो उन्होंने गले से लगाया । ऐसे निजी त्रास का ज्वालामुखी क्या फूटेगा नहीं ? और जब ज्वालामुखी फूटता है तो धरती में छुपे रत्न दूर- दूर तक बिखर जाते हैं । यही है हमारा लेखन जिसे आज यही भारत 'प्रवासी साहित्य' कहकर अपने से पृथक कर रहा है । हिन्दू धर्म में विदेश जाने वालों को 'मलेच्छ ' मान लिया जाता था । बहिष्कृत किया जाता था । ठीक वैसे ही हमें बहिष्कृत किया जा रहा है । दलित बनाने की प्रक्रिया !

यह आधुनिक सोच नहीं है.... यह सरासर अन्याय है ....

जो विद्वान हिंदुत्ववाद के पीछे डंडा लेकर पड़े हैं वही इस तरह से हमें निष्कासित कर रहे हैं । मेरी उनसे इल्तिजा है कि वह अपनी मानसिकता का पुनरावलोकन करें । अपने श्रेष्ठवाद से बरी हों व हमें 'खंडित व्यक्तित्व' या 'खाए अघाए लोग' कह कर हमारी अवमानना न करें । हमने अपनों को खिला कर खाया है । हमें बदले में क्या मिला ? भारत जाने पर वहां के कस्टम अधिकारी किस-किस तरह से हमें लूटते रहे हैं , यदि इसी विषय के किस्से लिखे जाएँ तो कई भागों में छपेंगे ।

परन्तु हम भारत को आईना दिखाने के लिए नहीं लिख रहे हैं । हम भारत को एक भिन्न परिवेश से जोड़ना चाहते हैं जो बौलीवुड फ़िल्मों की कृत्रिम विदेशी पृष्ठभूमि से कतई अलग, एक जीवंत यथार्थ है । यह जुड़ान हमसे है । हम वह बीच का सेतु हैं जो निरंतर बना रहा है पिछले चालीस सालों से । हम समन्वय की आवाज़ हैं और हम समन्वित व्यक्तित्व हैं न कि उजड़े हुए, बेघर खंडित व्यक्तित्व ! हमारा दृष्टिकोण विकासात्मक एवं वैज्ञानिक है । हिंदी में लिख कर हम देश के उन अस्सी प्रतिशत लोगों तक अपने एंटिना फैलाना चाहते हैं जो अंग्रेजी भाषा के गुलाम बनकर अपनी टोपियों में उत्तमता की कलगी लगाए नहीं घूम रहे । वह दलित हों या सवर्ण, हिन्दू हों या मुसलमान । हिंदी के लेखक - भारत के हों या यहाँ के, अभी भी, जनसाधारण के दिलों पर दस्तक देते हैं । यह एक शर्म का विषय है कि भारत के विकास शील लेखक अंग्रेजी को अपना माध्यम बना कर जन मानस से कटे रहते हैं । उससे भी बड़ा दुःख यह है कि सरकार अंग्रेजी के लेखकों, गतिविधियों पर अधिक व्यय कर रही है । प्रवासी दिवस पर हिंदी के लेखक अलग थलग नज़र आते हैं व भारत के इलीट को उनसे

कोई सरोकार नहीं । भारत का इतिहास दुबारा लिखा जा रहा है मगर अंग्रेजी में । भारत की सुप्त आत्मा को जगाने का प्रयास किया जा रहा है , मगर अंग्रेजी में । हम अपना इतिहास यादों के झरोखों में से समेट लाते हैं तो कोई बिना बात उसे 'नौस्टाल्जिक' कहकर उसकी अवहेलना कर देता है । रचना चाहे कितनी भी मनोहारी क्यूं न हो, गयी फाइलों में और भारत में फाइलें कब्रों से कम नहीं । पंजाब के विभाजन की विभीषिका का दर्द हज़ारों की कलम से प्रवाहित हुआ परन्तु साठ वर्ष बाद लिखी गयी गौतम सचदेव की कहानी 'अनुष्ठान' अपना सानी नहीं रखती । भारत में कितने प्रबुद्ध आलोचकों ने पढ़ा है इसे ? कितने पाठकों तक पहुंची है ? आलोचक अपनी कुंठाओं व पूर्वाग्रहों के वश होकर आलोचनाएँ न लिखें। किसी भी लेखक को कलम से गोदने के पहले उसे पूरी तरह पढ़ लें । उसके व्यक्तित्व को परख लें, उसकी सामाजिक स्थिति की जानकारी लें । तभी वह उसके साथ न्याय कर पाएँगे । भारत के बाहर लेखन किसी भी दशा में भारत के लेखन से इतर नहीं है । संख्या को भी देखें । अगर भारत में बीस जने लिखते हैं तो उनमे से केवल पांच या सात ही उच्च कोटि का लेखन कर रहे हैं । उनकी भी प्रत्येक रचना हृदय ग्राही नहीं होगी । रचनाओं को उनके शिल्प और उत्तमता को देखकर जज करें न कि जाने माने नाम देखकर । यहाँ कहती चलूँ कि विदेशों में अच्छा लिखने वाले बहुत हैं पर जाने माने नाम उन्हीं के हैं जो भारत जाकर आत्म प्रचार करते हैं ।

पाठकों की पसंद तय करने के लिए जरूरी है कि हमारी रचनाओं को नियमित रूप से सभी पत्रिकाओं में जगह दी जाए, न कि गाहे-बगाहे कोई स्पेशल अंक छापकर । रचना अपना उद्घोष स्वयं करती है । जो लोग गंभीर रूप से रचनात्मक हैं उनके पास सस्ती मशहूरी के लिए समय नहीं होता । रेलगाड़ी में बैठे किसी पाठक को आप चार कहानियां बाहर की और चार कहानियां भारत की दे दीजिये और उसकी राय मांगिये वह बता भी नहीं पायेगा कि कौन सी किसने लिखी । अनेकों हिंदी के भारत के लेखकों ने अपनी विदेश यात्राओं के बाद वहां के लोगों पर लिखा है पर उन्हें कोई प्रवासी साहित्य नहीं कहता । बड़ी बात यह है कि भारत के लोग हमें पढ़ें, हम जो लिख रहे हैं वह समय का दस्तावेज है –सैमुअल पीप्स की तरह या शरर की तरह । यदि हमारे अनुभव लिपिबद्ध नहीं होंगे तो भारत अपने अमूल्य इतिहास का एक और अध्याय, एक और युग खो देगा जैसे गिरमिटियों का इतिहास खो गया । हिंदी इस्तेमाल करने से हिंदी बचेगी । हम विदेशों में रहकर इसके लिए ज़यादा चिंतित हैं । जबकि मातृभाषा का बचाव भारत वासियों की ज़िम्मेदारी है । हमें यहाँ अंग्रेजी बोलने पर बाध्य किया गया । कुछ आगंतुकों के कारण क्यों सारे भारत में अंग्रेजी प्रथम भाषा रखी गयी है ? और रेल स्टेशनों पर तमाम नामपट अंग्रेजी झंडे के रंगों में लाल नीले व सफ़ेद नज़र आये । उन्हें देखकर भारतीय जनता का श्रीनगर में तिरंगा फहराने का प्रयास एक मज़ाक लगा । राष्ट्रीय शक्ति और धन का अपव्यय !

भारत सरकार को चाहिए हमारी पुस्तकें खरीदे और देश भर की संस्थाओं को भेजें । ताकि उनका नज़रिया बदल सके । हमें पाठकों की आवश्यकता है । बाहर के लोगों को अनेक प्रकाशकों ने तिगुने चौगुने दामो में छापा है । भारत सरकार को इस तरह की कुरीतियों की ओर भी ध्यान देना चाहिए । अनुदानों व पुरस्कारों की भी कोई तय रूपरेखा नहीं है । उनके निर्णय कब क्यों व कौन लेता है यह खुल कर तय किया जाना चाहिए । मै तुझे चन्दन लगाऊँ तू मुझे ! यह नहीं होना चाहिए । एक आग्रह और संपादकों से ! रचना प्राप्ति की सूचना तुरंत दे दिया करें । पसंद या नापसंद तो एक बार पढ़कर ही तय की जा सकती है फिर उसमे इतना विलम्ब क्यों ? आप नहीं छाप पाते तो बता दीजिये । दुःख यह है कि हम यहाँ से ६ गुना डाक टिकट पर खर्च करते हैं । आप चुप मार कर बैठे रहते हैं । तीन या चार फोन हमने किए तो पता चला कि आपको रचना मिली ही नहीं, या खो गयी । बड़े इत्मीनान से कह देते हैं कि फिर से भेज दीजिये । माँगते समय आप चाहते हैं कि नई रचना होनी चाहिए । जब तक आपके राज में उसकी बारी आती है वह एक साल पुरानी हो जाती है । कई दफा तो याद भी नहीं रहता कि कहाँ भेजी थी । दुःख तब होता जब बिलकुल इन्सिपिड सा कोई आलेख या कहानी आपकी पत्रिका में छप जाता है । आखिर अच्छे बुरे की समझ तो हम भी रखते हैं । भारत में शिष्टाचार के सभी तीर एक ओर इंगित करते हैं , छोटे व्यक्ति से बड़े की ओर । कृपया इस पुरानी सोच से ऊपर उठिए, शिष्टाचार मित्रता की मशाल है , संबंधों की पूर्णता है ।

kadamehra@googlemail.com

●

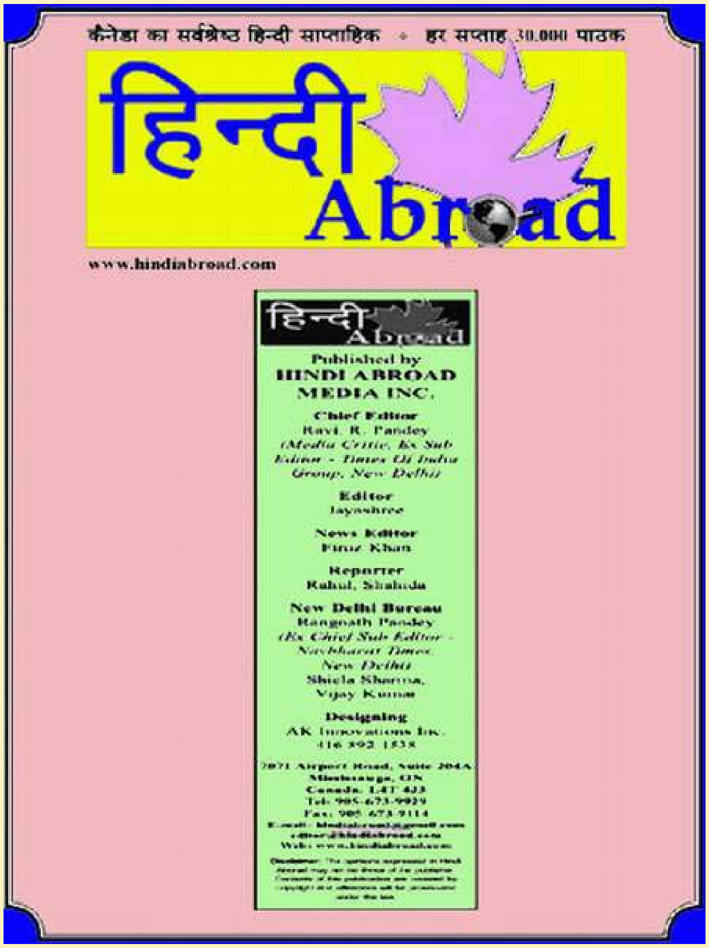

डायरी के पृष्ठ...

ऐमी

आस्था नवल

एक पतली- दुबली, लंबी, आकर्षक से चेहरे वाली, मुस्कान से भरी लड़की 'ऐमी', मेरे दफ्तर के बहुत अच्छे पद पर नई नई आई थी। सभी उसको पाकर खुश थे। किसी दूसरे शहर से आई थी और सभी से जान पहचान बढ़ाने में लगी थी। समय से आती थी, समय से चली जाती थी, उसे पता नहीं था कि उसके पद वाले लोग समय पर आते ज़रूर हैं पर समय से जा नहीं पाते। जितना बड़ा पद, उतनी ही घर से दूरी। घर से तो वह दूर थी ही। इस शहर से आठ-नौ घण्टे की ड्राइव पर था उसका अपना घर, पति और उनके परिवार के सदस्य दो पालतू कुत्ते। नए शहर में वह अपने शहर को बहुत याद करती थी। ऑफिस के पास घर बहुत मंहगे थे इसलिए ऑफिस से दूर ऐसा घर देख रही थी जहाँ उसके पति को शिफ्ट होने में कोई तकलीफ न हो।

एक अजब सी उमंग और ताज़गी दिखती थी उसके चेहरे पर। उससे पेहले, उसके पद पर रहने वाले सभी उससे उम्र में कम से कम पंद्रह-बीस साल बड़े थे। इसीलिए अपने आप को शायद बड़ा दिखाने के लिए बूढ़ी औरतों जैसे कपड़े पहनती थी। उसका और मेरा काम एक दूसरे से कुछ खास नहीं था इसीलिए हमारी जान पहचान बस 'हाय हैलो' तक ही सीमित थी। उसके ज्वाइन करने के कुछ ही दिन बाद मैं छुट्टी पर चली गई। जब वापिस आई तो पता चला कि ऐमी आजकल उदास है। किसी ने फुसफुसा कर कहा कि उसके पति ने उसे छोड़ दिया है। किसी और ने जानकारी दी कि उसकी शादी को सात साल हो गए थे। किसी और ने यह भी बताया कि जब मैं छुट्टी पर गई थी तो ऐमी का पति एक बार ऑफिस आया था और उसने उत्साह से सभी को बताया था कि अब दोनों हमेशा के लिए इसी शहर में रहेंगे।

यह सब जानकार मुझे अफसोस हुआ पर उसके पास जाकर यह अफसोस जताती, ऐसा रिश्ता कहाँ था उससे? एक दिन कॉरिडोर में उसे किसी से बात करते सुना। वह ज़्यादा नहीं बोल रही थी, दूसरी महिला उसे सांत्वना दे रही थी। अब वो ऑफिस में ज़्यादा देर तक रुकने लगी थी। पता नहीं उसे अपनी ज़िम्मेदारी पता चल गई थी या फिर घर जाने की चाह मिट गई थी। एक दिन मेरे ही कमरे में बैठने वाली मेरी बॉस से कुछ सलाह मांगने आई। बहुत भरी हुई थी। बहुत देर तक काम के सिलसिले में अपनी उलझनें और कुछ तकलीफों के बारे में बात करती रही। जाते वक्त मुझसे और मेरी सहकर्मी से माफी मांगी कि इतनी देर हमें डिस्टर्ब किया। उसके जाने के बाद पता चला कि इसी साल कुछ महीने पहले उसके पिताजी का देहांत हो गया था। साथ ही यह भी पता चला कि उसका पति बहुत समय से अलग अलग लड़कियों के साथ डेट कर रहा था और अब उसे कोई ऐसी लड़की मिल गई है जिसके साथ वह रहना चाहता है। इस सबकी ऐमी को कभी भनक भी नहीं हुई थी।

एक दिन मैं ऑफिस में ही कुछ सहेलियों के साथ खड़ी बतिया रही थी कि वह भी आ गई। ऐमी से एक लड़की ने मज़ाक में पूछा कि वह बूढ़ी औरतों की तरह कपड़े क्यों पहनती है? तब पता चला कि वह जिस शहर से आई है वहाँ इतनी सर्दी नहीं पड़ती और उसके पास इस मौसम के लायक कपड़े ही नहीं हैं। फिर घर बदलने का खर्चा, डाइवोर्स का किस्सा, इसलिए उसके पास न तो चाह है न समय है और न ही धन। सुन कर अजीब सा लगा। माहौल गंभीर न हो इसलिए वह कुछ मज़ाक सा करके अपने पर लोगों को हंसा कर वहाँ से चली गई।

ऐमी इस शहर में अगस्त-सितम्बर में आई थी। अब दिसम्बर आ गया था। दिसम्बर में ऑफिस बहुत वीरान हो जाते हैं। खासकर जहाँ मैं काम करती थी, एक लैंगुएज सैंटर, जहाँ अधिकतर अध्यापक छुट्टी पर अपने अपने देश चले जाते हैं। विदेशी छात्र भी इस मौसम में कम ही आते हैं। एक क्रिसमस पार्टी होती है जो थोड़ा उत्साह जगाती है। पार्टी दिसम्बर के आरम्भ में ही हो जाती है। ऐमी ने पार्टी में बहुत आकर्षक ड्रेस पहनी जिसमें वह बहुत सुंदर लग रही थी। जब मैंने उसे कहा कि वह बहुत अच्छी लग रही है तो तुरंत हँसते हुए बोली, ''क्या तुम्हारे पति का कोई भाई है? मैं अकेली हूँ।'' थोड़ा सा हँस कर वहाँ से चली गई। मैं भी हँस दी पर सोचती रही कि उसे ऐसा कहते हुए कैसा लग रहा होगा!

क्रिसमस और नए साल के एक हफ्ते बाद तक मुझे घर से काम करने की अनुमति मिल गई। मैं सर्दी में इतने दिन घर रहने के ख्याल से बहुत खुश थी। हर कोई एक दूसरे से क्रिसमस के प्लैन पूछ रहा था। ऑफिस की किचन में मैं अकेली बैठी चाय पी रही थी कि ऐमी भी आ गई। औपचारिक हाय हैलो के बाद मैंने उसे क्रिसमस और नए साल की बधाई दी और उसे बताया कि अब नए साल में ही मिलना होगा। उसने मुझसे पूछा कि मैं क्रिसमस और नए साल पर क्या करूँगी। मैंने संक्षिप्त उत्तर दिया और औपचारिकता वश वही प्रश्न उससे कर दिया। मैंने उम्मीद नहीं की थी कि वह मुझसे इतनी बात करेगी। उसने बताया कि, उसकी माँ यहाँ आऐंगी। पिता की मृत्यु के बाद वो भी अकेली हैं और ऐमी भी पति से अलग हो ही चुकी है।

उसे फर्क नहीं पड़ रहा था कि वह किससे बात कर रही है, पर शायद वह बोल लेना चाहती थी। उसने कुछ ऐसे अपनी बात रखी, ''मैंने ऑफिस के पास एक नया अपार्टमेंट ले लिया है। अब पति को तो आना नहीं है तो दूर बड़े घर में रहने का क्या फायदा! जीवन इतना बदल जाएगा कभी सोचा नहीं था। कभी कभी वीकेंड पर खिड़की के पास जाकर बैठती हूँ तो सोचती हूँ कि मैं कौन हूँ? शहर नया है, घर नया है, मौसम नया है। सात साल तक जिसके साथ रह रही थी वह है ही नहीं! कितनी आदत पड़ जाती है ना किसी के साथ रहने की। पिता भी इसी साल चल बसे इसलिए क्रिसमिस का कोई उत्साह तो है नहीं। शायद माँ के साथ सर्दियों के कुछ कपड़े खरीद लूँ। ऑफिस में भी बहुत व्यस्त हूँ। मेरे लिए व्यस्त रहना ही अच्छा

है''। फिर एक विराम देकर कुछ अजीब तरह मुस्कुराते हुए बोली, ''कितनी अजीब बात है ना मुझे पता ही नहीं चला कि मेरी शादी ठीक नहीं चल रही!''

मैं तो बस उसकी बात सुनती रही। मन हुआ कि उसे गले लगा लूँ या फिर कहूँ कि वो मेरे साथ चले, हम साथ में शॉपिंग करेंगे। बहुत मन हुआ उससे यह कहने का कि वह खुद को अकेला ना समझे, या फिर यह कि वह मुझे कभी भी फोन कर लिया करे, पर कुछ भी कहा नहीं गया। बड़े होते होते कितनी औपचारिकताएँ जो सीख लेते हैं हम। अपनी व्यस्तताएँ भी हर पल याद रहती हैं। उस समय मैं उसके लिए बहुत कुछ करना चाहती थी। घर जाकर भी दो तीन दिन तक वह मेरे दिमाग में घूमती रही। फिर बस क्रिसमस आ गया, सभी अपने परिवारों के साथ हुए, हम भी हुए ।

नए साल में जब ऑफिस गई तो सब कुछ पुराने साल जैसा ही था बस ऐमी के कपड़े नए थे और वह पहले से बहुत ज़्यादा आकर्षक लगने लगी थी। एक दिन इतनी अच्छी लग रही थी कि मैं खासतौर पर उसके कमरे में यह कहने गई। ऐमी को अपनी तारीफ सुनकर अच्छा लगा और एक बार फिर उसने हँसते हुए कहा कि यदि मेरे पति का कोई भाई है तो मैं उसे बता दूँ क्योंकि अब वह अकेली है। पर फिर एकदम से उसकी आँखों में उदासी छा गई और उसने कहा, ''तुम्हें सच में लगता है मैं अच्छी लग रही हूँ, अच्छा है। मैं कोशिश कर रही हूँ, पर उतना आसान नहीं है''।

वातावरण को हल्का करने के लिए उसने ज़ोर से कहा, ''मेरे लिए लड़के तलाशना शुरू कर दो!'' मैंने भी हँसते हुए कहा कि ज़रूर देखूँगी। बहुत देर तक उसकी उदास आँखें मुझे दिखती रहीं। मैं सोचती रही कि ऐमी के लिए कितना मुश्किल होता होगा अपने दुख को हँसी में उड़ाना, कैसे सात साल तक साथ रहता हुआ व्यक्ति एकदम अंजान हो जाता है! कितनी आहत होती होगी वो जब जब अपना उपहास उड़ाती होगी! क्या केवल नए कपड़े उसे सब भुला देने में मदद करेंगे? क्या नौकरी की अफरा तफरी उसका अकेलापन दूर कर सकेगी? क्या सभी से हँस कर बात करने से वह अपना दुख भूल पाएगी! मैंने यह भी सुना कि उसने डांस क्लास ज्वाइन कर ली है। क्या उसे डांस का सच में शौक रहा होगा या बस अपने को कहीं उलझाए रखने के लिए वह ऐसा करती होगी!

अब वो यूँही कभी कभी मेरे कमरे में आकर झांक लिया करती थी और मेरा हाल चाल लेती थी। मुझे ऐसा लगता था कि वह मेरा हाल चाल लेने नहीं आती पर शायद कभी कभी बस मुझे अपने नए कपड़े दिखाने आती थी या फिर कुछ मन हल्का करने। उसका ओहदा मुझसे बड़ा था इसलिए मैं थोड़ी दूरी बनाए रखती थी। वैसे मुझे उसे रिपोर्ट नहीं करना होता था पर फिर भी। वह भी मेरी हिचक को समझती थी इसीलिए तभी मेरे पास आकर बैठती जब मैं अकेली होती थी। मैं बहुत बार चाह कर भी अपने मन की बात उससे नहीं कर पाती क्योंकि मैं यह नहीं चाहती थी कि उसे कहीं भी मेरी बातों में दया की महक आए।

कैसे हो जाते हैं न हम! किसी का अच्छा सोचते हुए भी इतना घबराने लगते हैं। शब्दों में भावों को प्रकट करने से डरते रहते हैं। मेरा कुछ चार-पाँच महीने का ही परिचय था और तब भी मैं उसके बारे में इतना सोचती थी। क्या उसके पति ने एक बार भी नहीं सोचा होगा! सात साल मायने रखते हैं किसी की भी ज़िंदगी में। ये स्त्री पुरुष का प्रेम सबसे अलग है। बहुत से समाज में एक बार शादी के बंधन में बंधने के बाद, छोड़ने का विकल्प नहीं होता, अगर कोई चाहे भी तो समाज उसे जीने नहीं देता। यहाँ का समाज मुक्त है। एक तरह से अच्छा भी है, कम से कम झूठे रिश्ते में बंधना तो नहीं पड़ता। पर कई बार लगता है कि क्या ऐमी के लिए वही अच्छा होता कि उसका पति उसके अन्य प्रेम संबंधों के बारे में कुछ न बताता! कम से कम वह अपनी दुनिया में खुश तो थी। पता नहीं सब कुछ जान लेना अच्छा होता है या कई बार अंजान बने रहना ही बेहतर होता है?

इस समाज में अपने मुताबिक जीने की छूट है इसीलिए बहुत से लोग यहाँ से वापिस नहीं जाना चाहते। समाज के बंधन से भाग कर आए हुए लोगों की संख्या सबसे अधिक है यहाँ। यहाँ आस पास देखती हूँ तो कितने ही रिश्ते बिखरे पड़े नज़र आते हैं। एक और औरत है मेरे ऑफिस में जिसकी तीन बेटियाँ हैं। पति से तलाक हुए बहुत वर्ष हुए और हाल ही में बॉयफ्रेंड भी अलग हो गया। एक दिन बाथरूम में ज़ोर ज़ोर से रो रही थी। बाहर निकली तो आँख बचाकर चली गई। एक बल्गेरियन टीचर है, एक दिन ऑफिस के बाहर कुछ खोई सी खड़ी थी। मैंने उससे पूछा कि क्या हुआ तो पता चला कि उसका जन्मदिन था उस दिन और उसके साथ मनाने वाला कोई नहीं था। इस देश में बिलकुल अकेली रह रही है।

अगर देखने निकलो तो अपने आस पास कितनी कहानियाँ, कितनी ज़िन्दगियाँ बिखरी पड़ी मिलेंगी। रिश्तों का बिखरना सबसे ज़्यादा दुख देता है। न जाने जब बिखरना होता है तो रिश्ता बनता ही क्यों है? हममें रिश्ते निभाने की क्षमता भी थोड़ी कम होती जा रही है। शायद इसीलिए ऐमी के लिए बहुत कुछ करने की चाह के बाद भी कुछ कर नहीं पाई। अपने को हर दुख से दूर रखने की कोशिश में, हम सबसे अलग थलग रहते हैं और फिर अकेलेपन को अपने दुखी रहने का कारण बना लेते हैं। यदि मैं किसी के साथ दो आँसू बहा लूँगी तो क्या कमज़ोर हो जाऊँगी या मन हल्का करने से कुछ ग़लत हो जाएगा! हम दूसरों के सामने कमज़ोर दिखने से भी बहुत डरते हैं। तभी तो कितनी बार खाली या कुछ निराश सी आँखें लेकर ऐमी मेरे कमरे तक आती ज़रूर थी पर हर बार कुछ गंभीर बात करते करते उसे हंसी में टाल कर चली जाती थी। शायद पुराने संबंधों से दुख झेलने के बाद नए संबंध बनाने से डरती थी। मैं भी अपने आस पास की बिखरी ज़िंदगियों को देखकर नए संबंध बनाने के लिए कुछ उत्सुक तो नहीं ही रहती। पर फिर भी संबंध जहाँ बनने होते हैं वहाँ बन ही जाते हैं। हर बार शब्दों की आवश्यकता नहीं होती। ऐमी से भी ऐसा ही बिन शब्दों का रिश्ता सा जुड़ गया है। उसने वह नौकरी छोड़ दी है। मेरा भी वहाँ पर कांट्रेक्ट खत्म हो गया है। फेसबुक पर वो कभी कभी मेरी ज़िन्दगी में झांक लेती है और कभी कभी मैं उसकी ज़िन्दगी में। कई बार साथ में बिताए कुछ पल ही उम्र भर के रिश्ते के लिए काफी होते हैं और कभी कभी बहुत साल भी साथ रहकर रिश्ते बिखर जाते हैं।

asthanaval@gmail.com

●

(इसके अन्तर्गत हम दैनिक जीवन में हुए अनुभवों को प्रस्तुत करेंगे । कोई रोचक अनुभव आप का भी हो तो लिख भेजिए)

पुस्तक समीक्षा कीर्ति चौधरी : समग्र कविताएँ

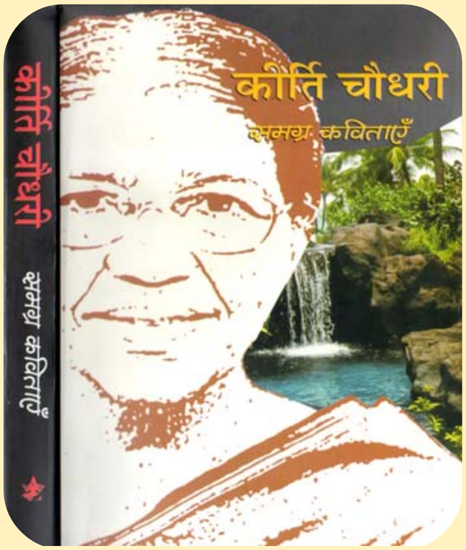

मेधा बुक्स : २०१०
पृष्ठ : २११
मूल्य : २५० रुपये

समीक्षा : विजया सती

मेधा बुक्स से २०१० में प्रकाशित और श्री अजित कुमार द्वारा संकलित पुस्तक है - कीर्ति चौधरी : समग्र कविताएं ।

१९३४ में जन्मी कीर्ति चौधरी का निधन २००८ में हो गया । वे तीसरा सप्तक की यशस्वी कवयित्री थी.उनका सम्बन्ध एक साहित्यिक परिवार से था । माँ कवयित्री सुमित्रा कुमारी सिन्हा,पिता प्रकाशन गृह के स्वामी और तीसरा सप्तक के वक्तव्य में उन्होंने लिखा है - 'बड़े भाई भी अपने को कवि कहते हैं'। साहित्यानुरागी सक्रिय लेखक ओंकारनाथ श्रीवास्तव से विवाह के बाद वे लम्बे अरसे तक लन्दन प्रवासिनी रही । इस बीच लेखन कर्म भी कम हुआ ।

1958 में उनका संकलन 'कविताएं' आया,1959 में वे तीसरा सप्तक में शामिल हुई,1968 में काव्य संकलन 'खुले हुए आसमान के नीचे' आया । 2004 में कीर्ति चौधरी की कविताएं और कीर्ति चौधरी की कहानियां भी आ चुकी थीऔर अब यह संकलन जिसमें उनकी कुछ ऐसी कविताएं हैं जो अब तक अप्रकाशित थी । ये कविताएं संकलनकर्ता को अचानक मिल गई और इस तरह सदा के लिए विलुप्त हो जाने से बचीं ।

यह सत्य है कि व्यक्ति के चले जाने के बाद भी उससे सम्बद्ध बहुत कुछ अच्छा-बुरा बना-बचा रहता है,रह सकता है । निश्चित ही ये कविताएं कवयित्री के मन को समझने में मददगार हैं । कई मायनों में इस पुस्तक में न केवल कीर्ति चौधरी की कविताएं हैं बल्कि यहां उनके प्रामाणिक जीवन चरित की रूप रेखा भी है, उनके समग्र व्यक्तित्व को समझने की कुंजी भी है । मुखपृष्ठ पर कवयित्री के मुस्कुराते होंठ और आँखों के साथ विशुद्ध भारतीय परिधान में लिपटे चेहरे की रेखाएं प्रभावपूर्ण हैं ।

कीर्ति चौधरी ने कम लिखा,पर जो लिखा उसमें एक तरह की परिपूर्णता है । अपनी कविताओं में वे जीवन की समग्र छवि देती हैं,जिसमें भीतर का अच्छापन और अपनी कमियों का बोध दोनों ही शामिल हैं । कवयित्री को अपने अनुरागी मन के रीत जाने का दु:ख होता है,जमाने के बदलने और अपने वही रहने का बोध भी मन में कसक पैदा करता है । मनुष्य के स्वभाव की उलझनों और मन के ऐसे उद्वेलनों को उन्होंने प्राय: अपनी कविताओं में साकार किया है । लेकिन इसके बावजूद उनकी कविता जीवन की सरलता का गान है । इसमें उन्होंने छोटे से जीवन के विस्तार-वैविध्य को अपने ढंग से संजोने की कोशिश की है ।

अपने लेखन में कीर्ति जी एक सहज, सरल, सौम्य भारतीय नारी की छवि के साथ उपस्थित हैं । उनकी कविता दाम्पत्य प्रेम की उजली छवि से मंडित है । उनकी कविताओं में दाम्पत्य का सहज विश्वास, प्यार का व्यवहार और संस्कार सादगी से संयोजित है ।

वे वही लिखती हैं,जो देखती या अनुभव करती हैं, वे सपनों की नहीं धरती के सौंदर्य की बात करती हैं– 'नंदन कानन के सपनों में कभी न आ कर /इस धरती का फूल उगाना मैंने सीखा'- जैसी पंक्तियाँ इसी ओर संकेत करती हैं ।

भावुक कवयित्री अपने जीवन और मन की प्रेरणा और प्रभावों की बात करती है । तब प्रकृति को अपने सर्वाधिक निकट पाती है । उनके कर्मठ मन में जीवन में कुछ कर जाने की इच्छा वैसे ही है,जैसे पौधा जब बढ़ता है तो मार्ग गढता है ।

इन 'समग्र कविताओं' का मूल स्वर गहरी आशावादी दृष्टि है । कवयित्री के भीतर जीवन को सुखद बनाने वाले तत्वों के प्रति सहज अभिरुचि है, चाहे वह साथ की इच्छा हो,भरोसे का हाथ हो या आगत की प्रतीक्षा। ये जीवन के प्रति विश्वास बनाए रखने की कवितायेँ हैं । कवयित्री भविष्य की प्रतीक्षा करती है,प्रेम की गंभीरता से विश्वास ग्रहण करती है। जीवन अंतत: क्या है - भूल, दर्प, चोट सहना, पर इसके बावजूद उसे जीवन शुरू करने का चाव है.वह कृतज्ञतापूर्वक अपने आप राह बनाने को तत्पर होती है, वह ऐसा जीवन जीना चाहती है जिसमें मिलकर सहना मूल्यवान है ।

इन कविताओं का संरचना शिल्प अत्याधुनिक मुहावरे से कुछ भिन्न हो तो क्या आश्चर्य । किन्तु इनमें संवाद की अनूठी क्षमता है । कवयित्री बात को ऐसे नहीं बांधना चाहती कि 'शब्द उभर आए और बात डूब जाए'। इसलिए वह बहुत सरलता से बड़ी बात कह देती हैं: 'अन्धकार संकट की घड़ियों सा बढ़ता आता था' ।

इसी प्रकार 'मेघों का झर झर बरसना और उत्तप्त अंतर का दहे जाना' - यह विरोधाभासी कथन गहन प्रभाव उत्पन्न करता है. उनके शब्द-संसार को नखत, मावस, हिया, सुधियां जैसे शब्द भी रचते हैं और ज्योतिस्नात चन्द्र, उत्कट असह्य, निश्छल मुक्त प्रफुल्ल हृदय जैसे शब्द भी ।

इन कविताओं में वे देश-दशा पर टिप्पणी भी करती हैं । साथ ही अपनी सृजन प्रक्रिया पर भी कुछ शब्द कहती हैं । वे अपने वर्तमान से जुड़ी एक सजग कवयित्री के रूप में हमारे सामने आती हैं ।

●

समीक्षा : डॉ. रमाकान्त श्रीवास्तव

मेरे सात जनम- जीवन और जगत की धड़कनों की अनुगूँज

सत्रह सौ अक्षरों में व्याख्यायित होने वाले भावोद्गार को सिर्फ़ सत्रह अक्षरों में व्यक्त करने की कला का नाम 'हाइकु' है । हाइकु की रचना सरल नहीं है । इसके लिए शब्द की साधना, संक्षिप्तीकरण की निपुणता, संकेतात्मकता का अभ्यास और रचनाकर्म के संयम की अपेक्षा होती है । यह भी अपेक्षा होती है कि रचनाकार अपने हाइकु को रसात्मकता से सराबोर कर देने की दैवी शक्ति का धनी हो ।

सुविख्यात शिक्षाविद् और दूरद्रष्टा साहित्य सर्जक रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' उन सारी क्षमताओं के धनी हैं, जिनसे हाइकु ही क्या , किसी भी कविता का प्रकटन होता है । सम्प्रति उनके हाइकु -रचनाकर्म की वाहिका कृति 'मेरे सात जनम' में संगृहीत हाइकु पर विचार करना भी अभीष्ट है । यह संग्रह सात खण्डों-1-उजाला बहे , 2 - नभ के पार , 3 पलकों में सपने, 4- भीगे किनारे , 5- भरी भीड़ में , 6-यही सच है और 7- सीपी के मोती में विभक्त है । उल्लेख्य है कि हाइकु में तीन चरण होते हैं-पहले चरण में 5, दूसरे चरण में 7 और तीसरे चरण में 5 अक्षर होते हैं । इस प्रकार यह 17 अक्षरों का छन्द होता है । हिमांशु के सभी हाइकु की संरचना में इस नियम का अनुपालन हुआ है और उनमें सत्रह सौ अक्षरों में अभिव्यक्त होने वाले भावोद्गार सत्रह अक्षरों में समाहित करने की कला भी प्रदर्शित हुई है ।

हाइकु के सम्बन्ध में स्वयं रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' का भी मानना है-''गंगा का संरक्षक तो गोमुख ही हो सकता है ; जो सहृदय के रचनाकार के भीतर विद्यमान है । वहीं से सार्थक रचना का निर्मल जल प्रवाहित होता है । हाइकु की संवेदना और इसके शिल्प के बारे में संस्कृत की यह उक्ति मितं च मनोहारी वच: (संयमित और मनोहर वचन) दोहराना चाहूँगा । यह कथन हाइकु पर पूरी तरह उपयुक्त प्रतीत होता है । 'यही मान्यता उनके एक हाइकु में भी व्यक्त हुई है-' पके आम से / सहज चुए रस / हाइकु वैसे।'' 'सहज चुए रस' की व्याख्या दो-चार वाक्यों में नहीं की जा सकती । इसमें निहित मौलिकता भी नितान्त विरल है ।

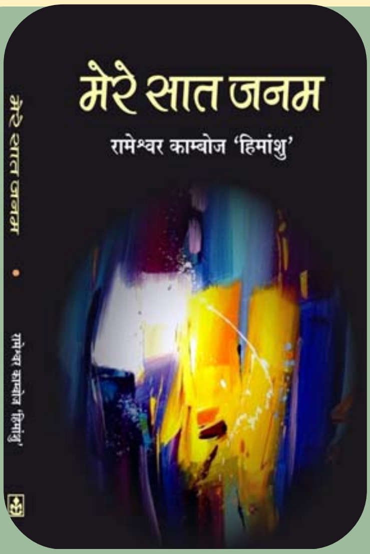

मेरे सात जनम (हाइकु-संग्रह)
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
पृष्ठ: 128 (सज़िल्द)
मूल्य: 160 रुपये
संस्करण: 2011
प्रकाशक: अयन प्रकाशन , 1/ 20, महरौली नई दिल्ली-110030

आलोक और अन्धकार सत् एवं असत् के प्रतीक हैं। मानवता ने सदैव आलोक की कामना की है और अन्धकार(असत्) को भगाने के लिए प्रयत्नशील रही है । रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' ने अपने हाइकुओं में मानव की इसी मनोवृत्ति का चित्रांकन किया है । उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित हाइकु उद्धरणीय हैं-

दीप जलाओ / जो भटके पथ में / राह दिखाओ ।
कब था डरा / नन्हा -सा दीप यह / नेह से भरा ।
नदिया भरे / धरा से नभ तक / उजाला बहे ।
स्नेह से भरो/ हर उर-दीप को/ उज्ज्वल करो ।
अँधेरे हटा / उगाएँगे सूरज /हर आँगन ।

जीवन की सार्थकता के लिए परम आवश्यक है कि मनुष्य मनसा -वाचा -कर्मणा अवरोधों को को हटाकर आगे बढ़ता रहे । यही संकल्पित सन्देश अलोच्य कृति की हाइकु रचनाओं में सम्पृक्त है ।

जी भर जियो / मिला जो प्रेमरस / बाँट दो,पियो ।
काँटे जो मिले / जीवन के गुलाब /उन्हीं में खिले ।
पंखों में बाँध / सिसकते मन को / उड़ा पखेरू ।
मीत कहूँ या /जीवन की गीता का / गीत कहूँ मैं ।
मौत है आई / जीना सिखलाने को / देंगे बधाई ।

प्रणय में निहित सात्त्विकता उसे पावनता के प्रतिरूप से आवृत्त कर लेती है । तब जीवन जीने की जीवन जीने का मार्ग प्रशस्त हो जाता है । इस राह पर ख़ुशबू के झरने झरने लगते हैं और रात ओढ़ लिया करती है स्वच्छ चाँदनी । हिमांशु जी की सत्रह अक्षरीय सीमाओं में ध्यातव्य है सीमाहीन भावाभिव्यक्ति -

आपकी बातें / ख़ुशबू के झरने / चाँदनी रातें ।

उपर्युक्त हाइकु में प्रणय और प्रकृति का समन्वित रूप सुन्दर सुखद, सुहावने प्रतीकों-'खुशबू के झरने' और 'चाँदनी रातें' समलंकृत है । इसकी व्याख्या के लिए सत्रह सौ अक्षरों की आवश्यकता होगी । इसी क्रम में कुछ अन्य हाइकु विचारणीय हैं -

पहला स्पर्श / रोम-रोम बना है / जल -तरंग ।
मन का तम / मिटाते रहे तेरे / मन के दिये /
मुझे भरोसा / तुम पर इतना / नभ जितना ।
दो पल मिले /मधुर प्यार के जो / स्वर्ग से बड़े ।
तुम्हारा मन / आँगन -उपवन / फूल -सा खिले ।

हाइकु मूलत: प्रकृति के सान्निध्य एवं चित्रण का छन्द है । जापान के हाइकुकार इस छन्द में प्रकृति का वर्णन करते आ रहे हैं; परन्तु भारत में मानवीय जीवन की सभी स्थितियों -परिस्थितियों को इस छन्द में अभिव्यक्त किया जा रहा है । फिर भी हिन्दी कवि हाइकु को प्रकृति से जोड़ने

में पीछे नहीं हैं । हिमांशु ने इस छन्द में प्राकृतिक सौन्दर्य तथा अन्यान्य प्रकृति-परिदृश्यों को उरेहा है; अत: ये प्रकृति के सूक्ष्म चितेरे के रूप में भी प्रस्थापित हैं । तत्सम्बन्धी कुछ हाइकु प्रस्तुत हैं-

वसन्त आया / धरा का रोम रोम / जैसे मुस्काया ।
झरता रहा / हरसिंगार-मन / तन्हा रात में ।
मुँह बाये हैं /जहाँ प्यासे पोखर / नीर वहाँ था ।
पाखी भटके / न तरु-सरोवर / छाँव न पानी ।
नीलम झील / लहरों की गोद में / किलके चाँद ।
ओस नहाए / मरकत मणि हैं / दूर्वादल ये ।

आज का इंसान , इन्सानियत से विरहित होता जा रहा है । वह अपसंस्कृति का शिकार है । भौतिक सुखों को कहीं अधिक तरज़ीह दे रहा है । उसके इसी व्यवहार के कारण समाज विसंगतियों, अजनबीपन , मूल्यहीनता , प्रकृति के दोहन , ह्रासशीलता , स्वार्थपरता , धनलोलुपता आदि से ग्रस्त होता जा रहा है । कवि ने इसे शिद्दत से अनुभव किया है । उनके हाइकुओं में यह सब स्पष्टरूपेण प्रतिबिम्बित होता है । बानगी के तौर पर ये हाइकु देखिएगा-

दूर है गाँव / बची केवल धूप / कहीं न छाँव ।
मन में छल /तो छलकेगा कैसे / सुधा का घट ।
भेड़ें जनता / भेड़िए पग-पग / ताक लगाए ।
मानव कम / धनपशु अधिक / बाँटें ज़हर ।

परिवार पावन प्रेम सम्बन्धों की इकाई है, जहाँ व्यक्ति संस्कारित होता है । पिता-पुत्र , माँ -सन्तति, भाई -बहन के मधुर रिश्ते व्यक्ति की जीवन यात्रा को प्रशस्त करते हैं । चिन्तनशील कवि हिमांशु का एतद् विषयक चिन्तन और मन्थन भी उनकी हाइकु रचनाओं में शब्दायित है-

बिटिया आई / गूँजी ऋचाएँ मेरे / सूने आँगन ।
बहनें आईं / खुशबू लहराई / राखी सजाई ।
घर की शोभा / वेद ऋचाओं जैसी/ होती बेटियाँ ।
भाई की छाया/जो बहन को मिली / ज़िन्दगी खिली

साहित्य साधक हिमांशु ने साहित्य की सभी विधाओं में स्तरीय रचनाएँ साहित्य - संसार को समर्पित की हैं । इनसे उनकी बहुआयामी रचना धर्मिता का सुखद साक्षात्कार होता ही है ,हिन्दी वाङ्मय को समृद्धि भी सुलभ हुई है । उन्होंने हाइकु विधा से जुड़कर उसे भी महनीयता से महकाया है ।

'मेरे सात जनम' के हाइकु सदैव पठनीय , संग्रहणीय और प्रेरणीय बने रहेंगे ; क्योंकि इनमें जीवन और जगत् की धड़कनों की अनुगूँज है।

●

ग़ज़लें

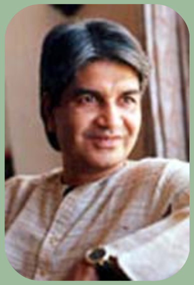

हस्तीमल 'हस्ती'

रास्ते उल्टे बताए जाएँगे
कुछ सबक यूं भी सिखाये जाएँगे

जिनका हासिल कुछ नहीं होता कभी
फ़िर वही सपने दिखाये जाएँगे

क्या ख़बर थी असली सिक्कों की तरह
खोटे सिक्के भी चलाए जाएँगे

ख़्वाब बन कर रह गई ये आस भी
हमको अपने हक़ दिलाए जाएँगे

हाथ हर युग में कटेगें 'हस्तीजी'
ताज जब-जब भी बनाए जाएँगे

●

पवन कुमार

कभी तो है कभी गोया नहीं है
मगर ये सच है तू खोया नहीं है

इन्हीं से अब सुकूं पाने की ज़िद में
किसी भी दाग़ को धोया नहीं है

तेरे हर नक़्श को दिल से जिया है
तुझे ऐ ज़िंदगी ढोया नहीं है

उगेगा ख़ौफ़ ही आँखों में अब तो
सिवा-ए-मौत कुछ बोया नहीं है

मुझे भी ख़्वाब होना था उसी का
मेरी क़िस्मत कि वो सोया नहीं है

न जाने उसको कितने ग़म मिले हैं
हुई मुद्दत कि वो रोया नहीं है

●

विकास शर्मा 'राज'

न काँटे हैं न है दीवार अबके
मेरे रस्ते में है तलवार अबके

उसे इग्नोर करके बढ़ गया मैं
किया मैंने पलट के वार अबके

मेरी आँखों में है हर चूक उसकी
मेरा दुश्मन भी है हुशियार अबके

अदावत ही हमें जोड़े हुए थी
ये पुल भी हो गया मिस्मार अबके

चिरौरी बेअसर होती थी लेकिन
उदासी भी गई बेकार अबके

जिसे तुम छोड़ आये थे भंवर में
है उसके हाथ में पतवार अबके

●

कविताएँ

कहा मैंने शहर से

इला कुमार

कहा मैंने शहर से-
''जगह दो नदी को
बहने दो उसकी निश्छल, उज्ज्वल धारा को
पूरने दो कलेजा धरती का''
नहीं दी नगर ने जगह नदी को
अपनी ऊँची इमारतों के पाँवों को धँसने दिया
नदी के सकुचाए तटों पर
कंक्रीट के चौड़े सीमेंटी पटरों से
पाट दिया
बहती धारा की छाती को

कहा मैंने गृहवासियों से-
''जगह दो नदी को
बहने दो उसकी कल कल उज्ज्वल धारा को
नम होने दो धरा को''
नहीं दी गृह- धारकों ने जगह धारा को
धरा को घेर-घेर बना लिये
एक मंजिले-दुमंजिले मकान
सिकुड़ गई नदी बँटती रही उपधाराओं में
नाली जैसा रूप धर कर
इधर से उधर डोलती रही

कहा मैंने बार-बार
बहुतों से बहुत बार
सुनी नहीं उन्होंने मेरी बात
रुचि नहीं उन्हें मेरी गुहार
उनमें से कई हुए नाराज़
मेरी अनपेक्षित दखलअंदाजी पर उन्हें था गहरा एतराज
नाराज़ मैं रही लगातार
नगर, शहर और ग्रामवासियों से
उनकी निर्मम लापरवाही से
बीतते दशकों के बीच वर्षों के हुजूम आगे बढ़ गए
मनुष्यता- असुरता के बीच ठिठके रहे
अब धरा है नाराज़
नगर-डगर, धूप-छाँव के बीच
प्यासे डोल रहे
थलचर, नभचर, जलचर
जल चाहिए सबों को !
वाकई
जल हम सबों को चाहिए,
कुछ घंटों के अंतराल पर
प्यास से कंठ सूख जाता है रह-रह कर

नाराज़ नहीं है अगर
तो वह है नदी
हल्की बारिश होते ही वह झिलमिला उठती है
वरना वह तो सूख गई है
जमीं के नीचे जाकर बैठ गई है
समाज, सभ्यता और संस्कृति को
पोषित करने वाली धारा
लुप्त हो गई है

लोग जल खोजने निकल पड़े हैं
चंद्रमा और मंगल पर
लेकिन वहाँ नहीं है नदियों के पैरों की नम्र छाप
जल को तलाशते मनुष्यों के
हाथ-पैर और मन-प्राण
ब्रह्मांड में भटक रहे हैं
●

जाने कैसे...

डॉ. जेन्नी शबनम

किसी अस्पृश्य के साथ
खाए एक निवाले से
कई जन्मों के लिए
कोई कैसे
पाप का भागीदार बन जाता है
जो गंगा में एक डुबकी से धुल जाता है
या फिर गंगा के बालू से मुख शुद्धि कर
हर जन्म को पवित्र कर लेता है !
अतार्किक
परन्तु सच का सामना कैसे करें?
हमारा सच
हमारी कुंठा
हमारी हारी हुई चेतना
एक लकीर खींच लेती है
फिर हमारे डगमगाते कदम
इन राहों में उलझ जाते हैं
और मन में बसा हुआ दरिया
आसमान का बादल बन जाता है !
●

आज फिर...

संजीव सलिल

आज फिर
माँ का प्यार पाया है...
पुष्प कचनार मुस्कुराया है.
रूठती माँ तो मुरझाता है गुल,
माँ हँसी तो ये खिलखिलाया है...

आज बहिना
दुलार कर बोली:
भाई! तेरी बलैयाँ लेती हूँ.
सुन के कचनार ने मुझे देखा
नेह-निर्झर नवल बहाया है....

आज भौजी ने
माथा चूम लिया.
हाथ पर बाँध दी मुझे राखी.
भाल पर केसरी तिलक बनकर
साथ कचनार ने निभाया है....

आज हमदम ने
नयन से भेजी
नेह पाती नयन ने बाँची है.
हंसा कचनार झूम भू पे गिरा
पल में संशय सभी मिटाया है....

आज गोदी में
बेटा-बिटिया ले
मैंने सपने भविष्य के देखे.
दैव के अंश में नवांश निरख
छाँह कचनार साथ लाया है....
●

‘लक्ष्मी’ चंद मधुप पाण्डेय

नगर सेठ ‘लक्ष्मी’ चंद से मिलने गया ।
तो वहाँ मुझे पता चला,
‘लक्ष्मी’ चंद का अर्थ - अनुपम अनूठा , नया ।
दर असल, किस्सा यों हुआ,
पहुंचते ही इनकमटैक्स का पत्र आया ।
लक्ष्मीचंद ने पत्र खोला ,
देखा, देखकर वह मंद मंद मुस्कराया ।
मैंने पूछा - ‘‘कमाल है,
तू इस पत्र को देखकर मुस्करा रहा है ।
मुझे तो पत्र देखकर ही,
पसीना आ रहा है, जी घबरा रहा है ।
‘‘देख, ये पत्र बिलकुल कोरा है, खाली है।
इसमें इनकम टैक्स के
अफसर का संकेत है - आज ‘दीवाली’ है ।
संकेत है, संदेश है -
‘शुभ लाभ’ ‘‘दीवाली ’’ है,
जल्द मिलने आओ ।
चंद ‘लक्ष्मी’ साथ लाओ,
कोरे कागज़ पर, जो चाहे, वह लिखवाओ ।
मैं जानता हूँ, तू कवि है,
तेरे पास शब्द हैं, तू अर्थ ज्ञानी है ।
पर व्यावहारिकता में,
निपट निरक्षर है, अनपढ़ है अज्ञानी है ।
इनकम टैक्स ही नहीं,
प्रशासन के हर विभाग के यही हाल हैं ।
‘चंद’ लक्ष्मी के टुकड़े,
कर दिखाते अजब - ग़ज़ब अनूठा कमाल हैं ।
हर विभाग में, प्रभाग में,
‘चंद’ लक्ष्मी के टुकड़ों से काम चलाता हूँ ।
हर जगह कोरे कागज़ पर,
जो चाहता हूँ, वही लिखवाकर लाता हूँ ।
शासन में, प्रशासन में ,
‘लक्ष्मी पूजन ’ पर्व का यही सही अर्थ है ।
‘पूजन’ में बिना ‘लक्ष्मी’ के,
अफसर की दीवाली, निरर्थक है, व्यर्थ है ।
मैं ‘चंद’ लक्ष्मी भेंटकर,
लक्ष्मी ही लक्ष्मी पाटा हूँ , घर लाता हूँ ।
तू शब्दकोश को फेंक दे,
‘लक्ष्मी’ ‘चंद’ का सही अर्थ समझाता हूँ’’।
मैं बोला- ‘‘चंद’’ ‘लक्ष्मी’ के,
अर्थ - अनर्थ चक्कर में सुख नहीं पायेगा ।
शब्द ‘ब्रह्म’ है, जानेगा,
तभी सही में, तू ‘लक्ष्मीचंद ’ कहलायेगा !

●

ओम पैसाय नम:

किरन सिंह

चहुँ ओर गूँज रही है
एक ही आवाज,
जीवन का बन गया है
ये एक अभिन्न यन्त्र
‘‘ओम पैसाय नम:’’
जपते रहने का है ये मंत्र ।
हो रहा है हर तरफ,
इसका ही जाप
कह-कह कर
‘‘ओम पैसाय नम:’’
धो रहे हैं लोग अपने पाप ।
मन्त्र है ये पुराना,
पर कलयुग में
अपने महत्त्व को
इसने है पहचाना ।
क्या रंग है क्या है रूप
खिली है देखो चारो ओर ,
‘‘ओम पैसाय नम:’’ की
सुन्दर धूप ।
मुर्दे में भी जान फूंक दे,
आलसी में भर दे तरंग
‘‘ओम पैसाय नम:’’ का
क्या सुंदर है ये रंग ।
महिमा इसकी अपरम्पार है
साधु-सन्यासियों पर भी
फेंका इसने अपना जाल है ।
बिन मेवा न होगी अब
कोई ‘‘अमित’’ सेवा,
दोस्तों ‘‘ओम पैसाय नम:’’
का ये आया काल है ।
जिसने खोजा ये मंत्र
था वो भी बड़ा कोई संत ,
रमा कर
‘‘ओम पैसाय नम:’’ की धूनी,
दुनिया उसने खूब घूमी ।
लिख-लिख कर
‘‘ओम पैसाय नम:’’ की महिमा
मै भी इसके भंवर में डूब गया हूँ,
और अपने मन की शान्ति को
यारों!
यहाँ - वहाँ फिर से ढूंढ़ रहा हूँ ।।

●

तीन छोटी कविताएँ

महफ़ूज़ अली

ज़मीर का ज़िंदा ना रहना
आदमी की आँख
जब उसके भीतर कहीं गिर जाती है
तब बाहर से अंधा होने के बावजूद भी,
वो भीतर से देखने लगता है
बाहर ठोकरें खाने के साथ
उसे यह साफ़ दिखाई देने लगता है
कि ज़्यादातर लोग
क्यूँ ठोकरें खा रहे हैं?
और कुछ लोग
इन्ही सड़कों पर
क्यूँ सुविधा से चल रहे हैं..

●

अख़बार की लाचारगी...
दिन अखबार की तरह
सुबह-सुबह रोज़
मेरे कमरे में आकर
गिर जाता है और
शाम तक
मैं उसी पर नज़रें गड़ाए
मजबूर रहता हूँ ....
वही घायलों की ख़बरें,
हत्याओं के समाचार ,
आवश्यकताओं के विज्ञापन
और बेरोज़गारी की लाचारगी ।

●

संस्कृति की पगडण्डी
कुछ लोग हैं
जिन्होंने ईश्वर, दर्शन, धर्म
और संस्कृति की
पग डंडियों से सबकी
आँखें खरीद ली हैं......
इसीलिए ज़्यादातर
लोगों को सड़कें तो
दिखतीं हैं, मगर
रास्ते नहीं दिखते ।

●

mailtomahfooz@gmail.com

डॉ.सुधा गुप्ता

1
चाँदी की नाव
सोने के डाँड लगे
रेत में धँसी ।

2
नींद -खुमारी
सिरहाना न मिला
पत्थर सही ।

3
हमसफ़र
मेरे गुन न गिने
खोट ही देखे ।

4
मैं दूर्वा भली
उजाड़ खण्डहर
कहीं भी पली ।

5
तुम दूध थे
मिली बनके पानी
सदा ही जली ।

6
कुनमुनाया
बादल के कन्धे पे
उनींदा चाँद ।

7
वर्षा रानी का
सतरंगी दुपट्टा
नभ अटका ।

8
आकाश बोला
कोई एक बादल
गोद तो भरे ।

9
मिट्टी का घड़ा
बूँद-बूँद रिसता
लो खाली हुआ ।

10
लिखते पेड़
हरियाले काग़ज़
प्रेम की पाती ।

●

हाइकु

सुशीला शिवराण

1
ओस की बूँद
रात रोई है धरा
दर्द गहरा !

2
हरसिंगार
रात भर सिंगार
ऊषा मुर्झाए ।

3
रजनीगंधा
महकाए रतियाँ
जग बौराए !

4
गहरा दर्द
तन-मन भी सर्द
बहें नयन !

5
ख्वाहिशें मेरी
भटकें दिन- रैन
तुम बेपीर !

6
चाहत मेरी-
एक मुट्ठी आसमाँ
पाए दो जहाँ ।

7
बहा है नीर
घनेरी कोई पीर?
बोल मनवा ।

8
कजरा नैन
मृगी -सी चितवन
छला है जग !

9
हरित दूर्वा
क्यारी-क्यारी कुसुम
मन प्रसून !

10
हरे गलीचे
ताने हरा वितान
मुदित धरा !

●

हाइकु

प्रगीत कुँवर

1
मन परिंदा
यादों को अपने में
रखता जिंदा।

2
मन ले जाए
जहाँ मिले उसको
यादों के साए।

3
यादों ने घेरा
हमको जब तक,
हुआ अँधेरा।

4
मन बावला
यादों का कारवाँ ले
कहाँ है चला।

5
हों जो अकेले
ढूँढे हैं तब हम
यादों के मेले।

6
खोए हैं हम
यादों के सैलाब में
अँखियाँ नम।

7
सूरज उगा
सुनहरी यादों का,
अँधेरा भगा।

8
तन्हाँ हों जब,
खिड़की से झाँके
यादों के खग।

9
भरें उड़ान
यादों के आसमां में
मिटे थकान।

10
यादें बेचारी
मन की गलियों में
फिरती मारी।

●

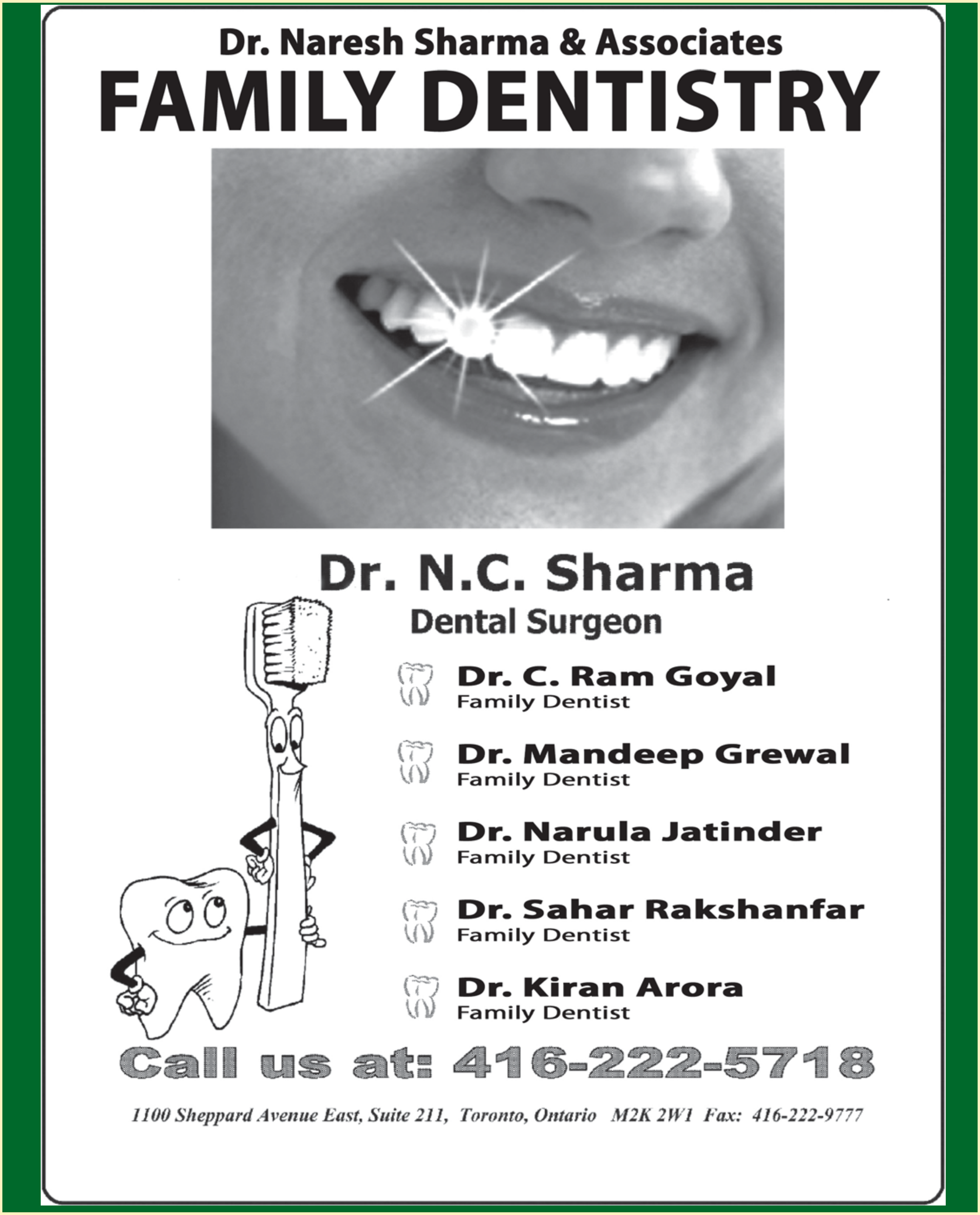
Dr. Naresh Sharma & Associates
FAMILY DENTISTRY
Dr. N.C. Sharma
Dental Surgeon
Dr. C. Ram Goyal
Family Dentist
Dr. Mandeep Grewal
Family Dentist
Dr. Narula Jatinder
Family Dentist
Dr. Sahar Rakshanfar
Family Dentist
Dr. Kiran Arora
Family Dentist
Call us at: 416-222-5718
1100 Sheppard Avenue East, Suite 211, Toronto, Ontario M2K 2W1 Fax: 416-222-9777

गीत

विष्णु सक्सेना

आँखों में पाले तो पलकें भिगो गए ।
वासंती मौसम भी पतझड़ हो गए ।।

बीते क्षण बीते पल
जीत और हार में,
बीत गई उम्र सब
झूठे सत्कार में ,
भोर और संध्या सब करवट ले सो गए ।
आँखों में पाले तो पलकें भिगो गए ।
वासंती मौसम भी पतझड़ हो गए ।।

जीवन की वंशी में
साँसों का राग है,
क़दमों में काँटे हैं
हाथों में आग है,
अपनों की भीड़ में सपने भी खो गए ।
आँखों में पाले तो पलकें भिगो गए ।
वासंती मौसम भी पतझड़ हो गए ।।

रीता है पनघट
रीति हर आँख है,
मुरझाये फूलों की
टूटी हर पाँख है,
आँधियों को देख कर उपवन भी रो गए ।
आँखों में पाले तो पलकें भिगो गए ।
वासंती मौसम भी पतझड़ हो गए ।।

कितना अजीब
फूल काँटे का मेल,
जीवन है गुड्डे
और गुड़ियों का खेल,
पथरीले मानव को तिनके भिगो गए ।
आँखों में पाले तो पलकें भिगो गए ।
वासंती मौसम भी पतझड़ हो गए ।।

●

तुम्हारी कस्तूरी मैं

कविता व्यास

ख़ामोशी उस दुपहरिया की बड़ी चुभती है
जब काया से छोटी छाया दिखती है ।
सुनसान वादियाँ पलक पाँवड़े राहें तकती हैं
कोई तो है जिनसे गलियाँ गुलज़ार होती हैं ।

मदमस्त बहार तोड़ हर बंधन आता -जाता है
आज सुखाड़ रुलाता तो कल सावन बरसाता है ।
प्रभात की हर बेला तम को देती मात है
पर कटती नहीं मेरी बड़ी लम्बी रात है ।

भीड़ भरी संगत भी दिल को लुभाती नहीं
शब्दों के तीर चलते कभी खुद से खुद को बचाती।
तोड़ हर संशय बना लो अपनी कस्तूरी मेरे मृग
प्रेम का दरिया बह उठे, मैं गुलाब तुम भृंग ।

जो तुम चाँद होते अम्बर की सूनी काली रात का
पागल प्रेमी सी उठती गिरती बन बवार समंदर का ।
साहिल पर जब पसर जाऊँ तुम किरण जाल फैलाना
स्पर्श आह्लाद अमिट होगा पराकाष्ठा प्रेम का दिखलाना ।।

●

kavitavikas28@gmail.com

हरकीरत 'हीर' की नज़्में...

तेरी होंद ...

आज ..
न जाने क्यों
अंधे ज़ख्मों की हँसी
हवाओं की होंद से
मुकरने लगी है
चलो यूँ करें मन
पास के गुरूद्वारे में
कुछ धूप-बत्ती जला दें
और आँखें बंद कर
उस होंद को महसूस करें
अपने भीतर ....

●

रिसता दर्द.....

इक शज़र है
ज़ख्मों का कहीं भीतर
वक़्त बे वक़्त
उग आते हैं स्याह से पत्ते
रुत आये जब यादों की इस पर
हर्फ़-हर्फ़ रिसता है
दर्द ....

●

पैरहन.....

वक़्त की ..
किलियों पे टंगा है
तकदीरों का पैरहन ....
नामुराद ....
कोई उतारे तो पहनूं....!!

●

जली नज़्में ....

रात चाँद ने
मुस्कुरा के पूछा
कहाँ थी तुम इतने दिनों
न कोई गीत न नज़्म..?
मैंने कहा ...
मेरी हज़ारों नज़्में
रोटी के साथ
तवे पे जल गई .....

●

harkirathaqeer@gmail.com

पुस्तकें जो हमें मिलीं

●कुछ तो बाकी रह गया ●एक धुला आसमान ●मन चितेरा हो गया ●भाव कलश ●मिले किनारे

कुछ तो बाकी रह गया
कुँवर विक्रमादित्य सिंह
प्रकाश – ज्ञान गंगा
२०५ – सी चावडी बाज़ार, दिल्ली – ११०००६
मूल्य:१५० रु.
मुद्रक : भानु प्रिंटर्स

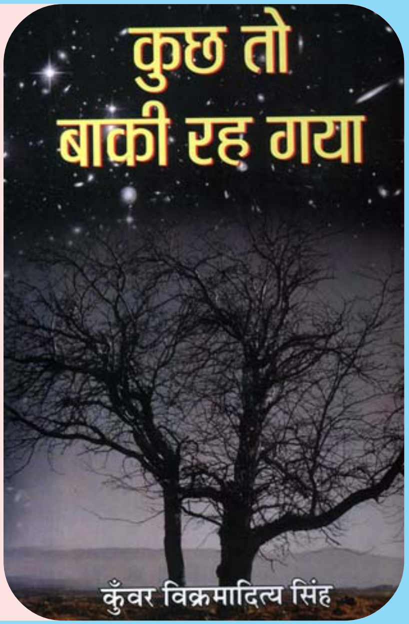

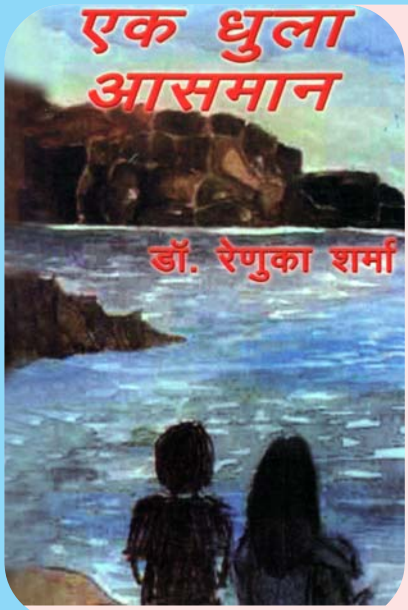

एक धुला आसमान
डॉ. रेणुका शर्मा
प्रकाशकः राइटर्स गिल्ड
३५७७ नेबुल्स गेट , मिसीसागा , ओंटेरियो , यल ५ बी ३जेए
१२०० मार्खम रोड, सूत १२२, टोरंटो, ओंटेरियो कनाडा

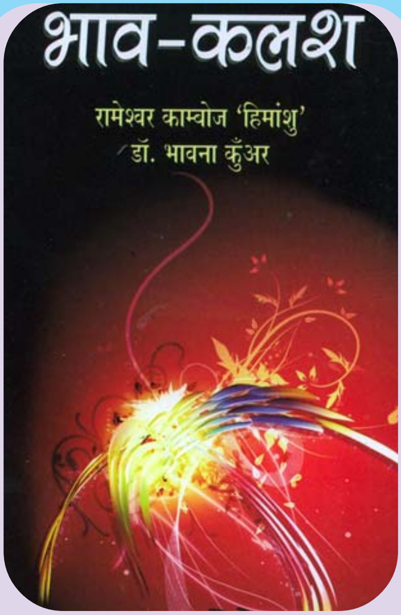

भाव कलश
रामेश्वर कम्बोज 'हिमांशु'
डॉ. भावना कुँवर
अयन प्रकाशन
१/२० महरौली , नई दिल्ली
मूल्य: २००.रु.

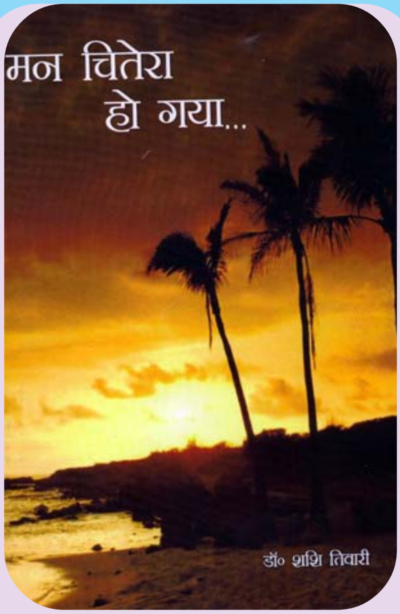

मन चितेरा हो गया
डॉ. शशि तिवारी
प्रकाशक – विद्यानिलयम२७ /२८ शक्ति नगर,, दिल्ली – ११०००७
मूल्य :१००.०० रुपया
मुद्रक : नीलम ग्राफिक्स

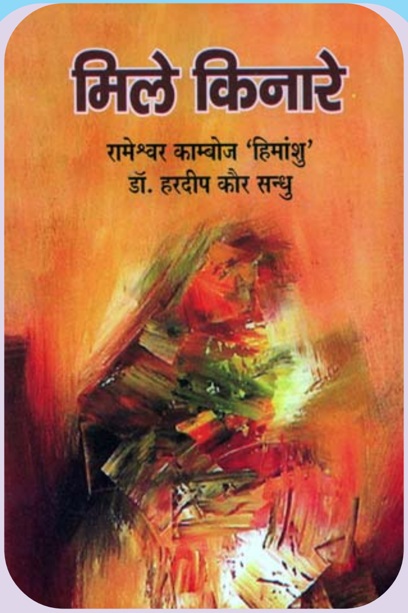

मिले किनारे
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु
डॉ. हरदीप कौर सन्धु
अयन प्रकाशन
१/२० महरौली , नई दिल्ली –
मूल्य:१५०.रु.

●आसान अरूज़ ●बातें

आसान अरूज़
(ग़ज़ल का व्याकरण एवं छंद शास्त्र सरल हिंदी भाषा में)
डॉ. आज़म
प्रकाशक
शिवना प्रकाशन
पी. सी. लैब
सम्राट कॉम्प्लैक्स
बेसमेंट, सीहोर
म.प्र. 466001
मूल्य : 300 रुपये

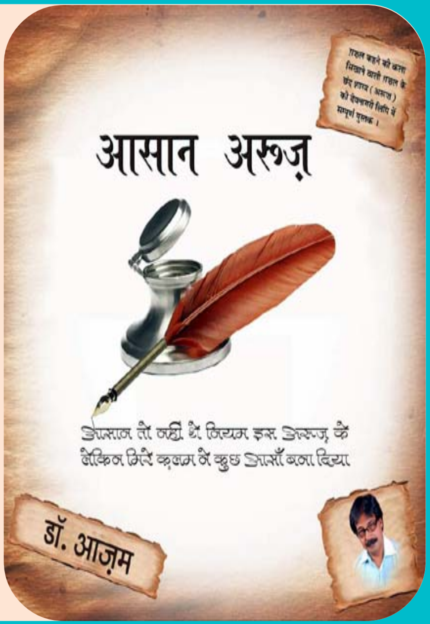

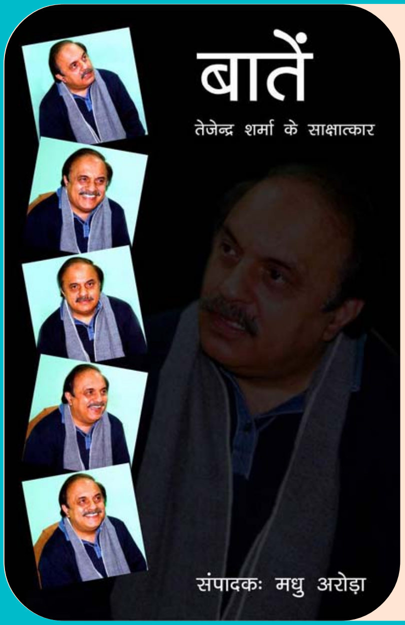

बातें
(तेजेन्द्र शर्मा के साक्षात्कार)
संपादनः मधु अरोड़ा
प्रकाशक
शिवना प्रकाशन
पी. सी. लैब
सम्राट कॉम्प्लैक्स
बेसमेंट, सीहोर
म.प्र. 466001
मूल्य : 150 रुपये

पत्रिकाएँ जो हमें मिलीं

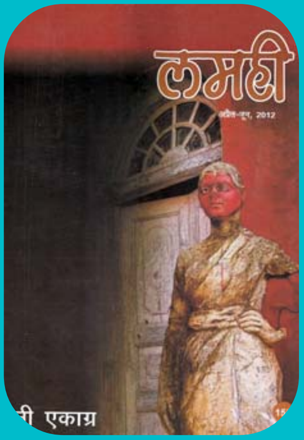

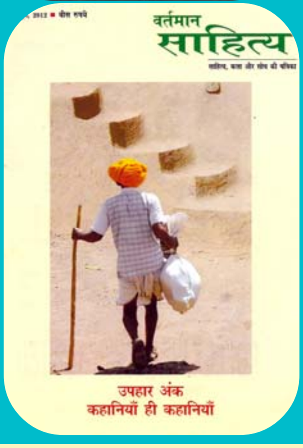

डॉ.मृदुल कीर्ति

मौन

मौन, गहन शांति का नाम है । मौन केवल वाणी का मौन नहीं, सभी इन्द्रियों का मौन और गहन शांति हैं । वास्तविक मौन में सभी इन्द्रियां गहन शांति की दशा में आ जाती हैं । जहाँ शब्दों और वाणी की सामर्थ्य खो जाती है वहाँ मौन मुखरित होता है । मौन में सभी इन्द्रियों और संकायों का निषेध स्वयं होने लगता है और वास्तविक मौन अर्थात अथाह शांति अंतस में घटित होने लगती है ।

स्वप्नों में जीना और रहना छोड़ दो, जगत का यथार्थ आत्मसात कर लो – तो कुछ भी बोलने योग्य नहीं बचेगा –मौन स्वयं घटित हो जाएगा । मौन केवल वाणी या भाषा का अभाव नहीं वरन भाव का अभाव है –अर्थात भाव शून्यता ही अंतस का मौन है । भावों के मौन होने का समर्थन मिलते ही अन्य इन्द्रियां भी धीरे-धीरे शांत हो जाती हैं । इससे अंतस की सक्रियता का विकास होकर इन्द्रियों के व्यापर थम जाते हैं । क्योंकि जब तक भाव हैं तब तक प्रभाव भी हैं ।

'मौन' केवल चुप रहने का नाम नहीं । यह तो बहुत ऊँची अंतस की अवस्था का सूचक है । मौन अंतस में घटित होता है । जब वास्तव में कुछ बोलने का मन ही ना हो और विचारों की लहरें भी तरंगित न हों । ऐसा नहीं कि केवल बोलने का निषेध तो किया किन्तु अंतस में अन्दर ही अन्दर विचारों या विकारों की यात्रा चल रही हो । यह मौन आडम्बर है । इससे कुछ नहीं होने वाला या मिलने वाला है, वरन यह विचारों का ढेर है जो अन्दर ही अन्दर एकत्र तो हो रहा है पर मौन धारण किया है कि अमुक समय से अमुक समय तक नहीं बोलेंगें किन्तु अन्दर ही अन्दर सामने होने वाली घटना की प्रतिक्रिया चल रही है । कुछ स्वामी जी अथवा कुछ लोग प्राय: सुबह एक या दो घंटे का मौन लेने का संकल्प करते देखे गए हैं । दो घंटे बीतने के बाद मैनें उनको सामान्य से कहीं अधिक बोलते पाया है, क्योंकि मौन की अवधि में होने वाली हर गतिविधि को आत्मसात किया है, घटनाओं का अन्दर ही अन्दर उत्तर तैयार कर रहे होते हैं । जो और अधिक वेग से निकल पड़ता है ।

भावों का स्पंदन शिथिल हो जाए, विचारों की लहरें थम जाएँ अंतस से अंतरतम में जाते-जाते – – –सच तो यह है कि जब-जब भी हम गहनतम होते हैं शब्द न्यूनतम होते है । मौन ही मुखर होते हैं । हमारा मुखरित मौन, दृष्टि से ध्वनित होता है । भाषा का यह अपूर्व बोध और मौन मुखर संवाद व्याकरण नहीं, अव्याकरण है । ध्वनि परमाणुओं से विलग किन्तु सलग भाषा जो बिना भाषा के भाषित हो, यही उसका सात्विक समर्थ अर्थ है । एक सम्पूर्ण और समग्र भाषा 'मौन' ।

●

SAI SEWA CANADA
(A Registered Canadian Charity)
Address: 2750, 14th Avenue, Suite 201, Markham, ON, L3R 0B6
Phone: (905) 944-0370 Fax: (905) 944-0372
Charity number: 81980 4857 RR0001

Helping to Uplift Economically and Socially Deprived Illiterate Masses of India

Thank you for your kind donation to SAI SEWA CANADA. Your generous contribution will help the needy and the oppressed to win the battle against lack of education and shelter, disease, ignorance and despair.

Your official receipt for Income Tax purposes is enclosed.

Thank you, once again, for supporting this noble cause and for your anticipated continuous support.

Sincerely yours,

Narinder Lal • 416-391-4545

Service to humanity

साहित्यिक समाचार

डॉ. अनिल प्रभा कुमार की पुस्तक ''बहता पानी'' का विमोचन

न्यूयॉर्क के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में ४ मई को अनिलप्रभा कुमार के कहानी -संग्रह ''बहता पानी'' का विमोचन हुआ। दक्षिण- एशिया संस्थान के अन्तर्गत ''कहानी- मंच'' की ओर से इस कार्यक्रम की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध लेखिका सुषम बेदी ने की।

डॉ. सुषम बेदी ने अनिल प्रभा के लेखन का परिचय देते हुए कहा कि संवेदनशीलता का प्रेषण उनके कहानी-लेखन की विशेषता है। उन्होंने कहा कि अनिलप्रभा की कहानियां अमरीका में रहने वाले भारतीयों के मूल्यों से जुड़ी हुई कहानियां हैं। उनकी कहानियों में यहां की रोज़मर्रा की स्थितियों को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। वह कहानियों में गहरे तक डूबकर उसको गहन संवेदना के साथ व्यक्त करती हैं। वह शिल्प के प्रति भी सजग हैं और यह शिल्प की विशिष्टता उनकी कहानियों में दृष्टव्य है।

न्यूयॉर्क स्थित आई.टी.वी के कार्यक्रम निर्देशक और लेखक श्री अशोक व्यास ने कहा कि अनिलप्रभा जी की कहानियां पढ़ना- सुनना संवेदना की सोई नदी को जगा देता है। उन्होंने इस संग्रह की कहानी ''उसका इंतज़ार'' की प्रशंसा करते हुए कहा कि अनिलप्रभा की शैली संवेदनशील पर संयत, भावनात्मक पर व्यावहारिक, विस्तृत आयामों वाली पर बारीक़ी से गढ़ी हुई शैली है।

''बहता पानी'' के विमोचन के अवसर पर अनिलप्रभा कुमार ने अपनी कहानी ''वानप्रस्थ'' पढ़ी। उस पर हुई चर्चा अत्यन्त जीवन्त रही। उर्दू विभाग के आफ़ताब अहमद ने कहा, ''यह कहानी मुझे इतने गहरे तक झकझोर गई कि कहानी ख़त्म होने के बाद भी मैं उसी अवसाद में डूबा बैठा रहा।''

इस अवसर पर बिन्देश्वरी अग्रवाल, सीमा खुराना, संदीप सिंह, अशोक व्यास और सुषम बेदी ने भी कहानियां पढ़ीं। कार्यक्रम के अंत में कोलम्बिया विश्वविद्यालय के हिन्दी-उर्दू भाषा कार्यक्रम के समन्वयक डॉ. राकेश रंजन ने उपस्थित अतिथियों को धन्यवाद देते हुए अनिल प्रभा कुमार को उनके कहानी संग्रह ''बहता पानी'' के विमोचन पर बधाई और शुभकामनाएं दीं।

कवि गोष्ठी का आयोजन

१२ मई २०१२ शुक्रवार वुडब्रिज लाइब्रेरी में पुस्तकालय के प्रमुख अधिकार श्री सुब्रमनियम के सहयोग से एक कवि गोष्ठी का आयोजन किया गया । इसका संचालन ओंटेरियो के प्रमुख कवि भगवत शरण और सुप्रसिद्ध कवयित्री सरोज सोनी ने सफलता पूर्वक किया । यह कवि गोष्ठी इस पुस्तकालय में लगभग ३ वर्षों से हो रही है और लोगों में हिंदी भाषा के प्रति बहुत उत्साह दिखाई पड़ता है । कवि सम्मेलन का प्रारम्भ 'माता सरस्वती वन्दना' से हुआ और इसकी गायिका श्रीमती रक्षा साहनी ने बहुत सुरीली ध्वनी में प्रस्तुत किया । इस गोष्ठी में लगभग १३ कवि जनों ने भाग लिया और श्रोताओं को अपनी रचनाओं से मनोरंजित किया । कवि गोष्ठी के समाप्त होने तक सभी श्रोता गण मन्त्र मुग्ध रहे और अपने स्थान से नहीं हिले । कवियों की कविताओं में एक नया उत्साह और प्रेरणा थी । अंत में जलपान की सुंदर व्यवस्था थी जिसका सभी लोगों ने आनन्द लिया । उसी दिन लाइब्रेरी में टोरंटो के प्रसिद्ध कलाकार अरविन्द नराले ने अपनी अद्भुत प्रतिभा से एक प्रदर्शनी का प्रदर्शन किया था, जिसमें विलोम चित्र दिखाए गये थे । दर्शकों के लिए ये चित्र एक नया अजूबा था । सभी लोगों ने कलाकार की अनोखी कला की प्रशंसा की । उस दिन जिन कवियों ने भाग लिया था उनके नाम इस प्रकार हैं । रत्नाकर नराले, भारतेंदु श्रीवास्तव, भगवत सरन श्रीवास्तव, हरीश चन्द्र शर्मा,प्रेम मलिक, स्नेह सिन्ह्वी, सरोज सोनी, जय श्री, अनिल पुरोहित, जगमोहन मेहरा, संजय वर्मा आदि । श्रोताओं ने चलते- चलते आग्रह किया कि वे इस प्रकार के कार्य क्रम प्रतिवर्ष देखने इच्छुक हैं ।

-सरोज सोनी

प्रदीप सौरभ को इन्दु शर्मा कथा सम्मान और सोहन राही को पद्मानंद साहित्य सम्मान प्रदान किया गया

ब्रिटेन की संसद के हाउस ऑफ़ कॉमन्स में उपन्यासकार प्रदीप सौरभ को उनके उपन्यास तीसरी ताली के लिये 'अट्ठारहवां अंतर्राष्ट्रीय इन्दु शर्मा कथा सम्मान' और श्री सोहन राही को तेरहवां पद्मानंद साहित्य सम्मान प्रदान किया गया । कथा यू के के महासचिव तेजेन्द्र शर्मा ने चयनित पुस्तकों पर विस्तार से प्रकाश डाला । कथा यू के के अध्यक्ष कैलाश बुधवार ने तीसरी ताली पर भारत के कुछ समीक्षकों की टिप्पणियां पढ़ कर सुनाईं । दीप्ति शर्मा ने तीसरी ताली के एक अंश का पाठ किया । प्रदीप सौरभ ने कहा कि रचनाकार को रचना के माध्यम से तौलना चाहिये ।

अखिल विश्व हिंदी समिति टोरंटो का साहित्यिक कार्यक्रम

जून १६,२०१२ टोरंटो पब्लिक लाइब्रेरी, एस वाल्टर स्टुअर्ट ब्रांच में सुबह १० बजे से संध्या ४ बजे तक साहित्यिक, संगीत एवं कवि सम्मेलन का आयोजन हुआ । इस कार्यक्रम के संयोजक , अध्यक्ष श्री गोपाल बघेल मधु थे । इस कार्यक्रम में भारत से कुछ अतिथि लोग आये थे । उनमें अन्तर्राष्ट्रीय हिंदी समिति के अध्यक्ष श्री दाऊ जी , आगरा यूनिवर्सिटी के रिटायर्ड प्रो. भगवान शर्मा तथा संस्कृत विभाग की अध्यक्ष डॉ. शशि तिवारी और मुम्बई से गीतकार शिवरंजनी जी और न्यूआर्क वि.ही. समिति के अध्यक्ष डॉ. विजय मेहता थे । कार्यक्रम सरस्वती वन्दना से प्रारम्भ हुआ । प्रथम सत्र में चर्चा का विषय 'हिंदी कल, आज और कल' रहा । इस सत्र में कनाडा से डॉ. भारतेंदु और श्री उमादत्त अनजान ने सक्रिय भाग लिया । डॉ . रेणुका शर्मा ने इस विषय पर गम्भीरता से इसकी समस्याओं पर प्रकाश डाला । डॉ. विजय मेहता ने समिति की प्रगति और हिंदी भाषा में विज्ञान की पुस्तकों की कमी पर ज़ोर दिया और हिन्दी को किस प्रकार समृद्ध किया जाए पर कुछ सुझाव दिए । डॉ. दाऊ जी ने हिंदी के विकास और उसका अन्तराष्ट्रीय महत्त्व व प्रगति के विषय में अपने विचार प्रकट किये । इसके बाद शाकाहारी भोजन का सभी ने आनन्द लिया ।

भोजन के बाद दूसरा सत्र डॉ. दाऊ की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ और इसके संचालक श्री भगवत शरण जी रहे । इसमें सुश्री शिवरंजनी और डॉ. निशि तिवारी ने अपनी कोकिल ध्वनी में अनेकों मधुर गीत सुनाये और कार्यक्रम में चार चाँद लगा दिए । उनके भजनों और गीतों ने संगीत का वातावरण बना दिया । इसके बाद कवि सम्मेलन प्रारम्भ हुआ और इसकी अध्यक्षता श्रीदाऊ जी ने की और सह-अध्यक्षता श्री श्याम त्रिपाठी ने । डॉ. शशि तिवारी , विजय मेहता और डॉ. भारतेंदु श्रीवास्तव मुख्य अतिथि थे । कवि सम्मेलन का संचालन श्री देवेन्द्र मिश्र ने किया । भाग लेने वाले कवि श्याम त्रिपाठी, भगवत शरण श्रीवास्तव, डॉ. भारतेंदु, रेणुका शर्मा, मनीषा प्रियवंदा, डॉ. विजय मेहता, डॉ. भगवान शर्मा, डॉ. शशि तिवारी, गोपाल बघेल, सविता अग्रवाल, उमादत्त अनजान और श्यामा सिंह व संदीप त्यागी थे । इस कार्यक्रम सहयोगी रहे, चंदा सिंह, संजीव अग्रवाल, प्रशांत सिंह , उमा श्रीवास्तव, प्रिया आहूजा, कमल आहूजा अनामिका , मोहित मदान प्रभु श्रीवास्तव, सुषुमा दुवे आदि आभार के पात्र हैं । समापन श्री बघेल मधु से हुआ उन्होंने सभी का आभार प्रकट किया और कवियों को सम्मान पत्र भेंट किये ।

-डॉ. रेणुका शर्मा

प्रेमचंद की विरासत को आगे बढ़ा रही है लमही -राजेन्द्र यादव

प्रतिष्ठित कथाकार एवं हंस पत्रिका के संपादक राजेन्द्र यादव ने लमही पत्रिका के कहानी एकाग्र अंक का अपने आवास पर लोकार्पण किया। राजेन्द्र यादव ने लमही के इस विशेषांक को ऐतिहासिक घटना के रूप में रेखांकित किया। उन्होने कहा कि पिछले दिनो कई पत्रिकाओं ने हिंदी कहानी की नई रचनाशीलता पर अंक निकाले हैं। उन सबके बीच लमही का यह अंक विशेष है। प्रेमचंद यथार्थ को देखने की जिस दृष्टि के पक्षधर थे, उसका विकास इस अंक में हुआ है। राजेन्द्र यादव ने इस अंक के अतिथि संपादक सुशील सिद्धार्थ और लमही के प्रधान संपादक विजय राय को शुभकामनाएं प्रदान की। विजय राय ने अपने संबोधन में कहा कि लमही किसी प्रकार की गुटबंदी से अपने को दूर रखती आई है। लमही हिंदी की विराट प्रगतिशील परम्परा को समर्पित है। अंक के अतिथि संपादक सुशील सिद्धार्थ ने इस विशेषांक में शामिल सभी रचनाकारों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा कि किसी भी संपादक की सबसे बड़ी पूँजी रचनाकारों और पाठकों का भरोसा ही है । समारोह में यूकेएस चौहान, प्रभात रंजन, महेश भारद्वाज, गीता श्री, अजय नावरिया, विवेक मिश्र, शिवकेश मिश्र, संगम पांडे, विपिन चौधरी, कुमार अनुपम, मजकूर आलम, प्रांजलधर, दीनबन्धु,अमिताभ राय एवं ज्योति कुमारी आदि उपस्थित थे।

देस -परदेस की सीमाओं से पार साहित्य का सम्मान

हमें गर्व है ....

यूके के महेंद्र दवेसर 'दीपक'

कहानी 'दो पाटन बिच आये के' के लिए वर्तमान साहित्य द्वारा कमलेश्वर कहानी पुरस्कार से सम्मानित ।

अमेरिका की सुदर्शन प्रियदर्शिनी

कहानी 'सन्दर्भहीन' को हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा घोषित पुरस्कार प्रदान किया जायेगा

अमेरिका की सुधा ओम ढींगरा

कहानी संग्रह 'कौन सी ज़मीन अपनी' को पन्द्रहवाँ अम्बिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार प्रदान किया जायेगा

पन्द्रहवें अम्बिकाप्रसाद दिव्य पुरस्कारों की घोषणा

पन्द्रहवां अम्बिकाप्रसाद दिव्य पुरस्कार अमेरिका की सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह ''कौन सी ज़मीन अपनी'' और कैनेडा से प्रकाशित पत्रिका ''हिन्दी चेतना'' के मुख्य सम्पादक श्री श्याम त्रिपाठी को श्रेष्ठ संपादन हेतु अम्बिका प्रसाद दिव्य रजत अलंकरण प्रदान करने की घोषणा 20 अप्रैल 2012 को भोपाल स्थित, साहित्य सदन में आयोजित एक समारोह में की गई । दिव्य पुरस्कारों के संयोजक एवं प्रसिद्ध रचनाकार श्री जगदीश किंजल्क ने पुरस्कारों की घोषणा करते हुए बताया कि दिल्ली के वेद प्रकाश कंवर के उपन्यास ''सेरीना'', बैरसिया के श्री कैलाश पिचौरी के काव्य संग्रह ''सन्नाटे की सुराही में'' को भी अम्बिकाप्रसाद दिव्य पुरस्कार और आठ और रचनाकारों को अम्बिकाप्रसाद दिव्य रजत अलंकरण प्रदान किए जाएँगे । अम्बिकाप्रसाद दिव्य रजत अलंकरण प्राप्त करने वाले रचनाकार हैं–डॉ. श्रीमती नताशा अरोड़ा (नोएडा) के उपन्यास 'युगांतर', श्री कुमार शर्मा अनिल (चंडीगढ़) के कहानी संग्रह 'रिश्ता रोज़ी से', श्री कुंवर किशोर टंडन (भोपाल) के काव्य संग्रह 'सुबह से सुबह तक', श्री राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर' (भोपाल) के निबंध संग्रह 'शब्द वैभव', डॉ. एम. एल. खरे (भोपाल) के व्यंग्य संग्रह 'मुझ से भला न कोए', डॉ. अशोक गुजराती (दिल्ली) के बाल साहित्य 'ख़ुशी के लिए', श्री संतोष सुपेकर (उबजैन) के लघुकथा संग्रह 'बंद आँखों का समाज', श्रीमती आशमा कौल (फरीदाबाद) के काव्य संग्रह 'बनाए हैं रास्ते' । श्री जगदीश किंजल्क ने यह भी बताया कि नाटक विधा के लिए उत्कृष्ट कृतियाँ प्राप्त न होने के कारण दिव्य रजत अलंकरण नहीं दिया जा रहा है।

कैनेडा के श्री श्याम त्रिपाठी

'हिन्दी चेतना' के संपादन हेतु दिव्य रजत अलंकरण प्रदान किया जायेगा

पूर्णिमा वर्मन पद्मभूषण डॉ. मोटूरि सत्यानारायण पुरस्कार से सम्मानित

२० जून २०१२ को राष्ट्रपति भवन में आयोजित एक समारोह में महामहिम प्रतिभा पाटिल द्वारा अभिव्यक्ति एवं अनुभूति की संपादक पूर्णिमा वर्मन को वर्ष २००८ के पद्मभूषण डॉ. मोटूरि सत्यानारायण पुरस्कार से सम्मानित किया। डॉ. मोटूरि सत्यानारायण पुरस्कार एक साहित्यिक पुरस्कार है जो भारत के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत केन्द्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा किसी ऐसे भारतीय मूल के विद्वान को दिया जाता है जिसने विदेश में हिन्दी भाषा या साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया हो। इस पुरस्कार का प्रारंभ तमिलनाडु के हिंदी सेवी एवं विद्वान मोटूरि सत्यनारायण के नाम पर १९८९ में हुआ था। इस पुरस्कार में एक लाख रुपये नकद, एक स्मृतिचिह्न, प्रशस्ति पत्र और शाल शामिल हैं। यह पुरस्कार भारत के राष्ट्रपति द्वारा स्वयं प्रदान किया जाता है।

भाषान्तर

अनुवाद :
अनिल जनविजय

रूसी-तातार कवि मूसा जलील की तीन कविताएँ

मुझे याद है

मुझे याद है -
उस पहली मुलाक़ात में
कितना मधुर तुम मुस्कराई थीं
शर्म से हो गई थीं लाल
कैसे घबराई थीं, बुदबुदाई थीं

मुझे याद है -
कैसे बचकर भागी थीं तुम मुझसे
और मुझे दिल की आग ने जलाया था
कैसे बार-बार रोया था दुख में मैं
उन नींद रहित रातों ने मुझे जगाया था

मुझे याद है -
कैसे किसी सपने-सा
उस दर्द से अलग हुआ
जिसकी याद मेरे पास है अब भी
प्यार मेरा ठंडा था या गर्म या जोशीला
लेकिन वह प्यार मेरे साथ है अब भी ।

●

मौत से पहले

सच्चे संघर्ष के रास्ते पर चला मैं
लेकिन पहुँच नहीं पाया
मंज़िल तक

भाग्य का धागा हैं
ये गर्म गोलियाँ
मेरे शत्रु को नष्ट कर सकीं जो

मेरे जीवित हृदय में
चुभ रही हैं सुइयाँ
और रक्त दौड़ रहा है
मेरी कमज़ोर नसों में
सफ़ेद थी कमीज़
मैंने देखा अब लाल है और गीली
अपमान नहीं करूँगा इस धरती का
मेरे दोस्तो !
हमारी पवित्र दोस्ती की क़सम
मेरी यह सफ़ेद कमीज़
अभी और खिल जाएगी
रक्तिम, लाल फूलों से
ऊँचे किसी ठूँठ पर टाँगना इसे
ताकि देख सकें दूर तक लोग
कि उसने लाल कर दी है हवा
ताकि दुश्मन डरें
और मेरे दोस्त मुझे याद करें ।

●

वर्ष

वर्ष और वर्ष और वर्ष
पहुँचे तुम मेरे निकट
अपने स्नेहिल हाथों से सहलाया मुझे
नर्म हिम जैसे प्रेम से बहलाया मुझे
आए मेरे बालों को करने सफ़ेद

झुर्रियों के रूप में तुमने
छोड़े अपने पदचिन्ह
मेरे चेहरे पर बिछा है जिनका जाल
बूढ़ा हो गया हूँ मैं
बदल गया है पूरी तरह से मेरा हाल

मैं नाराज़ नहीं हूँ
कि तुमने मुझसे ले लिया
मेरा सारा जोश और उत्ताप
और बदले में दिया मुझे
दुख और संताप

ख़ुश हूँ मैं
कि तुम अब भी आते हो
मेरा मन बहलाते हो
मुझे अपने हाथों से सहलाते हो
करते हो मुझसे वैसा ही प्रेम ।

●

मूसा जलील

मूसा जलील का जन्म 15 फ़रवरी 1906 को रूस के ओरेनबुर्ग ज़िले के मुस्ताफ़िना गाँव में हुआ। बारह वर्ष की उम्र में मूसा जलील ने रूस की महान समाजवादी क्रान्ति में भाग लिया और उसके बाद रूस में चले गृहयुद्ध में भी लाल सेना का साथ दिया। 1922 में मूसा कुछ अन्य कवियों के साथ ततारिस्तान की राजधानी कज़ान में रहने के लिए आ गए और 'क़िज़िल ततारिस्तान' नाम के अख़बार में काम करने लगे। 1924 में वे 'अक्तूबर साहित्य समाज' नामक एक साहित्य-संगठन के सदस्य बन गए और लोक-साहित्य में रुचि लेने लगे। 1925 में मूसा जलील का पहला कविता-संग्रह छपा, जिसका शीर्षक था - 'हम चल रहे हैं। 1934 में उनके एक साथ दो कविता-संग्रह प्रकाशित हुए। 1941 में तातार लेखक संघ के महासचिव चुने गए। लेकिन जल्दी ही हिटलर ने सोवियत-संघ पर हमला कर दिया। मूसा जलील भी सेना में भरती हो गए और लेनिनग्राद मोर्चे पर लड़ने चले गए। वहाँ से वे गम्भीर रूप से घायल और विकलांग होकर लौटे। विकलांग होने के कारण जब सेना में उन्हें फिर से वापिस नहीं लिया गया तो उन्होंने अपना एक छापामार-दल बना लिया और छापामार के रूप में जर्मन फ़ासिस्ट सेना के विरुद्ध संघर्ष करने लगे। 1942 में वे फिर से घायल हो गए और जर्मन सेना ने उन्हें बंदी बना लिया। बंदी-शिविर में रहते हुए भी वे चुप नहीं बैठे और शिविर में बंद दूसरे रूसी सैनिकों की सहायता करने लगे। जर्मन कमान को जब यह पता लगा कि मूसा जलील कवि हैं तो उसने उन्हें क़ैदियों के लिए सांस्कृतिक-कार्यक्रम आयोजित करने का काम सौंप दिया। इस तरह मूसा जलील को रूसी क़ैदियों के बन्दी शिविरों में जाने का अधिकार मिल गया। अब वे बंदियों के साथ जर्मन सेना के विरुद्ध फिर षड्यन्त्र करने लगे और क़ैदियों को उन शिविरों से भगाने लगे।

1943 में जर्मन गेस्तापो ने उन्हें और उनके कुछ साथियों को गिरफ़्तार कर लिया। 25 अगस्त 1944 को उन्हें बर्लिन में प्लोत्सेन्ज़े जेल में गर्दन काट कर मृत्युदण्ड दे दिया गया।

अधेड़ उम्र में थामी कलम

बिंदी

मालती सत्संगी

भारतीय परम्परानुसार सुहागिन स्त्रियों का श्रृंगार विशेषतौर पर बिंदी ही है । अब तो विदेशी भी पहचानने लगे हैं कि स्त्रियाँ बिंदी लगाती हैं । आरम्भ से मैं देखती आई हूँ कि बिंदी सबको आकर्षित करती है छोटे बच्चे भी बिंदी देखकर पूछते है कि यह क्या है ? मैं ७-८ वर्ष की थी तब मुझे मेरे बड़े भाई के साथ इलाहबाद में रहने का अवसर मिला तभी से संगम के मेले में जाने पर बिहारी, बंगाली, यू.पी की औरतों की बिंदी से आकर्षित हो मैंने बिंदी लगाना प्रारम्भ किया ।

पुराने समय में बिंदी हिंगलू, सिंदूर आदि की लगाते थे जो पसीने व पानी से गीली होकर ललाट पर फ़ैल जाती थी – उसी सिंदूर को थोड़ा सा होंठो पर लगाकर स्त्रियाँ अपने होंठ सुर्ख कर लेती थीं । फिर प्लास्टिक की गोल लाल बिंदी का चलन हुआ – फिर चमकीली छोटी, बड़ी, लम्बी चौकोर, गोल बिंदियाँ आयीं । और फिर परिधान के साथ मैचिंग बिंदी का चलन हुआ । अब तो हर वर्ग की महिला महंगी से महंगी चूड़ी -बिंदी का मैचिंग करती है । किन्तु सबसे पुरातन लाल व मैरून गोल बिंदी ही चलती है । मैंने भी लगभग ६०-६५ वर्ष तक मध्यम आकार की लाल बिंदी ही लगाई है यह ही मेरी पहचान भी थी । हर समय पर्स में बिंदी का पैकेट रखती थी – मिसेज़ लाल बहादुर शास्त्री की तरह बड़ी सी बिंदी कभी नहीं लगाई । मेरी दसवीं स्कूल की टीचर ने मुझे अपने घर भेजकर बिंदी लगवाई क्योंकि मैं बिंदी लगाना भूल गयी थी । बिंदी का महत्व केवल सुहागिन औरतों के लिए ही नहीं है – क्योंकि आजकल तो अनेकों औरतें बिंदी नहीं लगाती हैं । विश्व में तो इसकी जरूरत भी नहीं समझी जाती है । किन्तु इसका सात्विक महत्व भी है और वास्तव में यह सत्य भी है कि ललाट पर दोनों आँखों के मध्य के करीब आधा इंच नीचे आत्मा का वास होता है । वहां सहसदलकमल में ब्रह्मा का वास होता है । इसको दबाए रखने के लिए भी बिंदी लगाई जाती है । पुरुषों के ललाट पर भी तिलक लगाया जाता है । साधु-संत अपने सर पर चन्दन का टीका लगाते है । राखी -भैया दूज पर भी बहने अपने भाइयों के माथे पर तिलक लगाती हैं ।

●

नव अंकुर

बीते दिन

मिश्रीलाल

भुलाया जा नहीं सकता
वो तेरा अफसाना
झुकी निगाहों से चुपके मुस्कुराना
धीमें स्वरों से कुछ गुनगुनाना
तेरे सुरीले गीत याद आते हैं ....

ख़ूबसूरत थी रात मुलाक़ात की
बिखरी थी उजली चाँदनी
बैठे थे तेरा हाथ लेकर
दरिया किनारे रेत पर
वो हसीन सपने याद आते हैं ....

ताज़ा हैं मेरी निगाहों में
शरारतें तेरी
वो खेल आँख -मिचौनी का
चुपके से पर्दे में छिप जाना
भी तेरी हरकत थी
अब वो शरमाते
लब -ओ -शिरीन
याद आते हैं ....

तू ज़िन्दगी थी मेरी
मेरे साँसों कि धड़कन थी
पर किस्मत में
लिखा नहीं था साथ तेरा
अब तेरे पहलू के साए
याद आते हैं ....

दिन गुजर जाते हैं
उम्र भी कट ही जाती है
दर्द चाहे जितना गहरा हो
फिर भी बीते दिन याद आते हैं ...

●

विलोम चित्र काव्यशाला

●चित्रकार : अरविंद नराले
●कवि: सुरेन्द्र पाठक

चित्र को उल्टा करके देखें

बिछा घास की एक चटाई, बैठा उस पर एक किसान
बिन बारिश के सारी फसलें, होने आई अब वीरान
कभी देखता सूखी धरती, कभी देखता है आकाश
ऊपर नीला अम्बर सूना, नीचे सूखी - सूखी घास
दूर -दूर तक काला बादल, गगन में नज़र न आये
कैसे धीरज धरे हृदय में, जा किसको विपदा सुनाये ?
कहता - ईश्वर ! दया करो अब, कर दो हम सब पर उपकार
बिन बारिश भूखे ही मरेगा, तेरा रचा हुआ संसार
दुखी देख मालिक को उसकी बिल्ली आई उसके पास
इंसानों से ज्यादा पशु को, होता है, दुःख का अहसास
समझ उसे सुख - दुःख का साथी, जैसे पशु को सहलाता
वैसे -वैसे बोझ फ़िक्र का, मन से था घटता जाता
''बारिश के बिन फसल न होगी, तो चूहे क्या खायेंगे ?
बिन चूहों के छुदित पेट, चूहे दौड़ लगायेंगे
इंसानों को मुश्किल होगा, रोटी पानी अति दुश्वार
दूर भगायेंगे सब मुझको, दिखला सोंटी, दे फटकार''
सबको अपने पेट की चिंता, क्या पशु - पक्षी, क्या इंसान
जिसका जैसा भी हो भोजन, वैसा देता है भगवान

●

चित्र उल्ट कर देखो अब तुम, बैठा हुआ एक मनमौजी
ना दुःख की, ना सुख की चिंता, जो होता सो वो हो जी !
एक घास का टोप बड़ा सा, रोक रहा जो तीखी धूप
आँखें पिचकी, बड़ी हैं मूंछें, गर्मी से है बिगड़ा रूप
याद नहीं कितने दिन बीते, किया नहीं है उसने स्नान
कैसे ढोल बजाए अब वो, बार- बार खुजलाये कान
पानी की इक मटकी भरकर, रख ली उसने अपने पास
बिन बारिश के गर्म है मौसम, बार -बार है लगती प्यास
फिर भी वो है जम कर बैठा, आगे रखकर अपना ढोल
जोर - जोर से उसने पीट कर, बोले प्रभु से अपने बोल
धातिर किट्धा तिरकट धाधा, तिरकित धागे तिन्ना के
बरसा दे प्रभु प्रभु अब तू वर्षा, और परीक्षा अब ना ले
धरती माता सूखी पड़ी है, शीघ्र ही अपनी दया दिखा
सर पर गंगा बहे तुम्हारे, उसे हिलाकर जल बरसा ।

सार

हर मौसम में , हवा हर जगह, चाहो जितनी मिल जाए
पर भगवन बारिश का पानी, अधिक कहीं कम बरसाए
हवा समान खाद्य , पदार्थ भी, दुनिया में सब मिल बाँटें
कुदरत से जो मिले मुसीबत, उस दुःख को सब मिल काटें ।

नराले जी के चित्रों से प्रभावित हो कर एक पाठक
प्रेम मालिक ने यह लिखा है ।

नराले जी आप जो चित्र बनाते हैं
यकीन मानिये ये दिल में उतर जाते हैं

दोनों तरफ से ही सीधे, और
दोनों तरफ से उल्टे यह चित्र
कहीं पर बैठे और कहीं पर खड़े नजर आते हैं

यह तो भगवान की देन है आप पर
आप इसे बखूब ही निभाते हैं ।

-प्रेम मालिक

चित्र काव्यशाला

१)
ओ रिक्शावाले ! तेरा भी जबाव नहीं,
किस चक्की का खाना खाता,
इतने लोगों का बोझ उठाता,
मधुर- मधुर तू गीत सुनाता
सवारियों का दिल बहलाता
हवा में उड़ता जाता,
नये- नये दृश्य दिखाकर,
मुश्किल से बीबी बच्चों का पेट भर पाता
अब एक ऐसी सुबह आएगी,
तेरी जिन्दगी बिलकुल बदल जायेगी ।
इरा वर्मा

२)
मेला देखन जाते देखा
देख भए हैरान
एक रिक्शा
एक रिक्शावाला
ठूंसम-ठूंस सवार
एक आदमी था डंडे पर
एक लटका था पीछे
मध्य में बेठी बैयरवानी
गोपी और गोपाल
गोपी और गोपाल
कि गाड़ी खिंचती जाती
देख खिंचे यह प्रश्न
सोच हम रोक न पाए
हाई-टेक और
प्रगति के युग में
हाय रे! भगवन
गरीब कहाँ प्रगति कर पाए ।
राज महेश्वरी

३)
इंसान इंसानियत को, क्यूँ खो रहा है
मेरे देश का इक गरीब,
दस दस अमीरों को ढो रहा है
उसी देश का एक नेता जो, बीमार हो गया है
उस का इलाज विदेशों में हो रहा है
इंसान इंसानियत को क्यूँ खो रहा है
प्रेम मालिक

४)
बिन बुलाये बराती बन
चले हम शादी में सब जन
सगे सम्बन्धियों का मंत्रिमंडल लिए
चले हम शादी में दावत के लिए
किसी ने पूछा शादी किसी की है
हमने कहा क्या जाता है,
किसी की है
जब खाने को मिले
भेल-पूरी और लड्डू मिठाई
निमंत्रण मुरारीलाल हो
या सुखिया का ,
यह बोल मैं मुस्काई
धूम मचालो जहाँ भी चाहो झूम लो
बन के दीवाने खुश हो लो
अदिति मजूमदार

चित्रकार : अरविंद नराले

५)
तिपैये की सवारी,
थोड़े अगाड़ी
थोड़े पिछाड़ी,
खेंचे जा, भई खींचें जा,
चलती का नाम है गाड़ी !
दस दस लोग लदे हैं
दमा दम फूली है ..
आगे चलता पहिया
ये कैसी अजब सवारी !
तिपैये की सवारी ,
थोड़े अगाड़ी
थोड़े पिछाड़ी !
चलती का नाम है गाड़ी !
लावण्या शाह

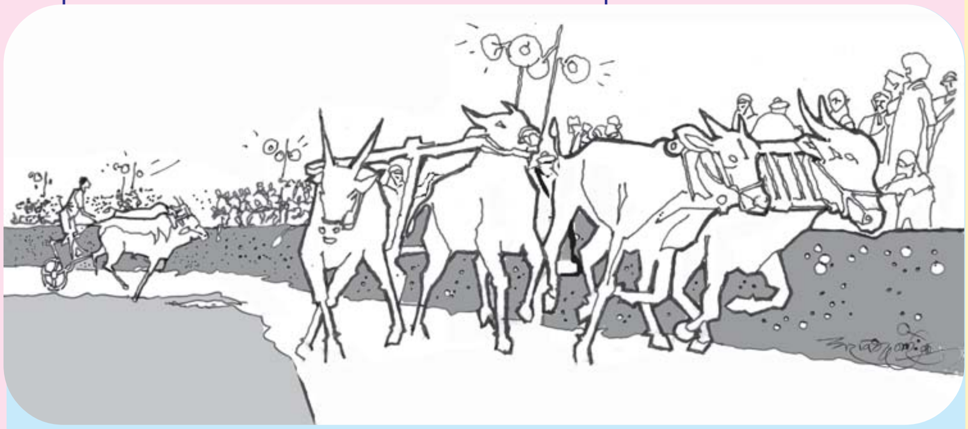

इस चित्र को देखकर आपके मन में कोई रचनात्मक पंक्तियाँ उमड़-घुमड़ रही हैं, तो देर किस बात की, तुरन्त ही काग़ज़ क़लम उठाइये और लिखिये। फिर हमें भेज दीजिये । हमारा पता है :

HINDI CHETNA
6 Larksmere Court, Markham, Ontario, L3R 3R1,
e-mail : hindichetna@yahoo.ca

आख़िरी पन्ना

बार्नज़ एण्ड नोबल पुस्तकों का ऐसा भण्डार है जो अमेरिका के हर शहर में मिलता है । पुस्तकों की इन दुकानों पर किताबें खरीदने वालों की भीड़ उमड़ी रहती है । युवा, किशोर, छोटे -छोटे बच्चे पुस्तकों के बण्डल हाथों में थामे इस दुकान से निकलते हैं । और इन दुकानों के भीतरी भाग में पढ़ने की भी सुविधा है और अगर पढ़ते -पढ़ते कॉफी की इच्छा हो तो वह भी उपलब्ध है । बार्नज़ एण्ड नोबल पर जब भी जाती हूँ तो एक ही बात मस्तिष्क में कौंधती है कि ई -बुक्स के आगमन के बावजूद यहाँ लोग पुस्तकें खरीदते हैं । लोगों में पढ़ने का शौक और रुची है । कारण शायद यही है कि यहाँ बच्चों को किंडर गार्डन से ही पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है । पाठ्य पुस्तकों के अलावा स्कूल में कर्सिव रीडिंग के लिए प्रेरित किया जाता है; जिससे बच्चों में पढ़ने की रुची बढ़ जाए । ये परीक्षा के लिए नहीं होती पर विद्यार्थियों को इनके बारे में लिखना पड़ता है और इससे छूटने का कोई विकल्प नहीं दिया जाता । ये पुस्तकें आसान साहित्य की होती हैं । पुस्तकों को खरीदना या लाइब्रेरी से लाकर पढ़ना अधिकतर अमेरिकंज़ की आदत बन चुकी है । यहाँ गर्मियों में लाइब्रेरियाँ प्रतियोगिता रखती हैं और जो बच्चा सबसे अधिक पुस्तकें पढ़ता है उसे पुरस्कृत किया जाता है । युवा उपन्यासकार कसेंड्रा क्लेयर जिसे कल्पना की रानी कहा जाता है, के बारह मिलियन पाठक हैं, शायद इसीलिए उसे बहुत पढ़ा जाता है और उसके उपन्यासों के चरित्रों से प्रभावित होकर कई लेखकों ने उन चरित्रों पर उपन्यास भी लिखे हैं ।

क्या हिन्दी की कोई पुस्तक इतने पाठक जुटा पाई है । भारत की जनसँख्या का आंकड़ा अमेरिका से चार गुणा अधिक है लेकिन हिन्दी पढ़ने वालों का घटता जा रहा है । हिन्दी के कई प्रतिष्ठित लेखकों के बच्चे ही हिन्दी की पुस्तकें नहीं पढ़ते तो किसी और से क्या आशा ? कसूर किसका ..सिस्टम का या माँ -बाप का ? युवा पीढ़ी को हिन्दी पढ़ने की आदत डालने के लिये अगर स्कूल से ही आसान साहित्य पाठ्यक्रम में लगाएँ, विदेशों की तरह कर्सिव रीडिंग के लिए उत्साहित करें और माँ -बाप भी अंग्रेज़ी के साथ-साथ हिन्दी को प्राथमिकता दें तो युवा पीढ़ी में हिन्दी पुस्तकों के प्रति जिज्ञासा बढ़ सकती है । विदेशों के लोग अपनी भाषा के प्रति बेहद गम्भीर हैं । अफ़सोस की बात है कि दैनिक समाचार पत्रों तक ने बच्चों के उन पृष्ठों को हटा दिया है जिन्हें हम छुटपन में बड़े चाव से पढ़ा करते थे और उन पृष्ठों की छोटी -छोटी लघुकथाओं और कविताओं से प्रेरित हो कर हम बहन -भाई तुकबंदी करते -करते कविता लिखने लगे । दैनिक पत्रों में साहित्य को बहुत स्थान दिया जाता था । अब तो सब कुछ लुप्त होता जा रहा है । भावी पीढ़ी पर इसका क्या असर हो रहा है इससे बेख़बर हैं हिन्दी वाले और समाज के कर्णधार ...आवश्यकता है अपने -अपने खेमों से बाहर आकर हिन्दी के प्रति युवा पीढ़ी को आकर्षित करने की । अन्यथा हिन्दी का पाठक वर्ग धीरे -धीरे सिकुड़ता जायेगा ....और पुस्तकें अलमारी में बंद होने लगेगीं ।

आज बस इतना ही.....

आपकी मित्र,

सुधा ओम ढींगरा

बरसात के साथ जुड़े होते हैं कई सारे सपने, कई सारी उम्मीदें । अच्छी फ़सल होगी तो वे सारे सपने पूरे होंगे । अच्छी फ़सल के लिये आवश्यक है अच्छी बरसात जिसके लिये यही कहा जा सकता है कि अल्लाह मेघ दे पानी दे, पानी दे गुड़ धानी दे, अल्लाह मेघ दे ।